आधुनिक हिंदी कविता - II

एम.ए. (हिंदी) द्वितीय सेमेस्टर : पेपर - 1

आलोचनात्मक प्रश्न

1. प्रयोगवादी परंपरा और 'अज्ञेय'

1. प्रयोगवाद से आप क्या समझते हैं? प्रयोगवादी काव्य परंपरा में 'अज्ञेय' का स्थान निर्धारित कीजिए। (Most Imp.)

अथवा

प्रयोगवादी परंपरा में 'अज्ञेय' के काव्य की विशेषताएं बताइए।

अथवा

प्रयोगवादी कवि 'अज्ञेय' पर एक विवेचनात्मक लेख लिखिए।

उत्तर–प्रयोगवाद : अर्थ–प्रयोगवाद शब्द की विवेचना करने से पूर्व हमें उसकी पृष्ठभूमि को जानना होगा। द्वितीय विश्व युद्ध की भयंकरता ने मानव-जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया था। प्राचीन मूल्य खंडित हो गए थे और मानव नवीन जीवन मूल्यों का अन्वेक्षण करने लगा था। इस अन्वेक्षण के कारण मानव ने संकट के सामयिक बोध को पहचाना। धीरे-धीरे मानव भावना, सहानुभूति, आस्था जैसे मानवीय मूल्यों को त्यागकर तर्क और विश्लेषण का आश्रय लेने लगा। विशेषकर मानव की प्रकृति पर विजय परम्परागत मानव-मूल्यों को पराजित करने लगी। धीरे-धीरे मनुष्य मनोविज्ञान अतियथार्थवाद और अस्तित्ववाद की विचारधाराओं को ग्रहण करने लगा। इधर फ्रायड ने अचेतन, उपचेतन तथा चेतन के तीन स्तर स्वीकार किए और वे कविता को अचेतन का परिणाम मानने लगे। उनका विचार था कि मानव की सभी दमित वासनाएँ अचेतन में एकत्रित हो जाती हैं। इन्हीं दमित वासनाओं का उदात्त रूप काव्य है। उधर पाश्चात्य चिन्तक सार्त्र ने अस्तित्ववाद का प्रतिपादन करते हुए यह घोषित किया कि मानव अपनी रुचि के बारे में स्वतंत्र है तथा वह किसी सामाजिक संस्था के प्रति उत्तरदायी नहीं है। फलस्वरूप 1938 से 1942 तक का युग संक्रांति का युग माना जा सकता है जिसमें घुटन, अनास्था तथा भटकाव की परिस्थितियों ने मानव को दिग्भ्रांत कर दिया। यदि गहराई से देखा जाए तो हिन्दी साहित्य में 1938 के आस-पास कविता समकालीन परिवेश से सम्बन्द्ध हो चुकी थी। अतः 1943 में 'तार सप्तक' का प्रकाशन हुआ जिसमें सात कवियों की कविताएँ संकलित हैं और इसके संपादक सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' हैं। यह काव्य रचना हिन्दी साहित्य में नवीन चेतना का परिणाम था और इसे प्रयोगवाद का नाम दिया गया। अतः 'अज्ञेय' को ही प्रयोगवाद का प्रवर्त्तक माना जाने लगा। प्रयोगवाद शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग आचार्य **नन्द दुलारे वाजपेयी** ने किया। उनके निबन्ध का नाम है–**'प्रयोगवादी रचनाएँ'**। वे कहते हैं–**"पिछले कुछ समय में हिन्दी काव्य क्षेत्र में कुछ रचनाएँ हो रही हैं जिन्हें किसी सुलभ शब्द के अभाव में प्रयोगवादी रचना कहा जा सकता है।"**

प्रयोगवादी परंपरा एवं 'अज्ञेय' का स्थान

तार सप्तक के प्रकाशन के साथ प्रयोगवाद शब्द प्रसिद्धि पा गया। यह शब्द प्रयोगवाद अंग्रेजी के **'Expermentalism'** का हिन्दी रूपांतर है। यूरोप में बिम्बवादी (एजरा बाऊंड) नामक कवियों का बोलबाला था। इन कवियों ने कविता के स्वरूप में परिवर्तन किया और काव्य के शिल्प पक्ष में नए-नए प्रयोग करने लगे। इन्होंने छन्द को त्यागकर गद्य की पंक्तियों को तोड़कर लिखना शुरू कर दिया। अतः यूरोप में 'एक्सपेरिमैनटलिज़्म' शब्द का काफी प्रयोग हो गया। सन् 1930 के आस-पास यह प्रयोगवादी प्रवृत्ति जोरों पर थी। इस युग में टी० एस० इलियट ने जितनी भी कविताएँ लिखीं उनमें प्रयोग के साथ-साथ काव्य का भी चमत्कार था। आगे चलकर हाडेन, स्पैंडर आदि कवियों ने इस दिशा में अपने कदम आगे बढ़ाए, परन्तु उन्होंने अपनी कविता को **'New Poetry'** नाम दिया। यही नहीं, उन्होंने 'New Poetry' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन भी किया। यही आगे चलकर हिन्दी में **"नई कविता"** के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त कर गई। हिन्दी की आधुनिक काव्ययात्रा में नई कविता का आंदोलन ही शुरू हुआ है। निश्चय ही 'अज्ञेय' पाश्चात्य प्रयोगवादी काव्य से प्रभावित हैं। इस संदर्भ में उन पर टी०एस० इलियट तथा टैनिसन का प्रभाव देखा जा सकता है।

प्रयोगवादी काव्य परंपरा में 'अज्ञेय' के स्थान का निर्धारण उनके काव्य में व्याप्त निम्नलिखित विशेषताओं के आधार किया जा सकता है–

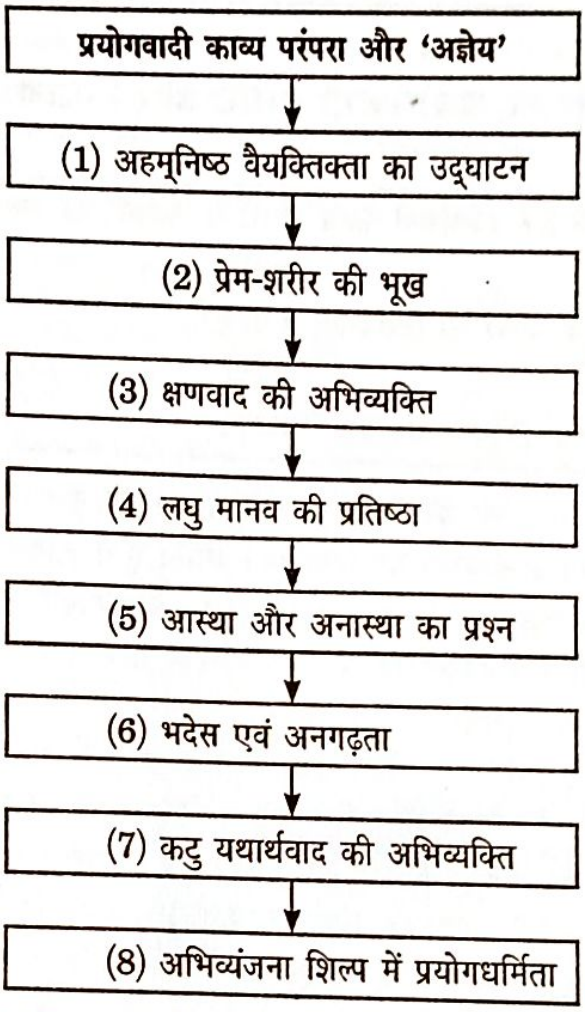

(1) अहमूनिष्ठ वैयक्तिक्ता का उद्घाटन–प्रयोगवादी कवि होने के कारण कविवर 'अज्ञेय' के सम्मुख अहम् और प्रतिबद्धता की समस्या बराबर बनी रही है। जहाँ अहम् व्यक्ति की चेतना से सम्बन्द्ध होता है, वहाँ प्रतिबद्धता सामाजिक चेत से जुड़ी होती है। इस सम्बन्द्ध में कविवर 'अज्ञेय' ने स्वयं लिखा है–**"जब कवि अपनी सामाजिक उपयोगिता को प्रभावित क में और दोषप्रद सामाजिक प्रविृत्ति पाने में सफल होता है तो तिलमिलाकर संपूर्ण समाज के प्रति विद्रोही होकर घोर अहंवादी बै बैठता है।....वह सामाजिक मान्यताओं के प्रति इसलिए विरोध करते हैं कि अपने एकांत व्यक्तित्व को हो सके तो प्रमाणित क इसलिए नहीं कि उनके स्थान पर नई एवं युगोपयोगी मान्यताओं की प्रतिष्ठा हो।"** अन्य प्रयोगवादी कवियों के समान 'अज्ञेय' अधिकांश रचनाएँ व्यक्तिवादी दृष्टि की परिचायक हैं। पर ये वैयक्तिकता बौद्धिक होते हुए भी मन की गहराइयों से परिचित हो चाहती हैं। यह अहं की प्रवृत्ति कहीं तो आत्मरति में अभिव्यक्त हो जाती है, तो कहीं तीक्ष्ण क्षोभ आक्रोश में। लेकिन अन्त 'अज्ञेय' अहं और सामाजिक चेतना में समन्वय की बात भी सोचने लगता है। **'नदी के द्वीप'** नामक कविता में कवि का अहंवा रूप अभिव्यक्त हुआ है। एक उदाहरण देखिए–

"किन्तु हम हैं द्वीप। हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के,
किन्तु हम बहते नहीं हैं। क्योंकि बहना रेत होना है।
हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं
पैर उखड़ेंगे। प्लवन होगा, ढहेंगे, सहेंगे, बह जायेंगे।"

(2) प्रेम-शरीर की भूख–'अज्ञेय' के काव्य में नर-नारी के सम्बन्द्धों का अत्यधिक वर्णन मिलता है। विशेषकर इनक आरंभिक रचनाओं में प्रेमानुभूति की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। ऐसा लगता है कि 'अज्ञेय' पाश्चात्य उपन्यासकार एवं चिंत डी० एच० लारेंस से अत्यधिक प्रभावित हैं। इसके साथ-साथ उन पर रीति-कालीन शृंगारिकता का भी प्रभाव है। उनकी कवि

में प्रणयानुभूति का खुलकर वर्णन मिलता है। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि उनके काव्य में आदिम नर-नारी का आदिम प्रेम है। **'भग्नदूत'** नामक काव्य-संग्रह में 'अज्ञेय' ने प्रेम को शरीर की भूख मानकर उसका वर्णन किया है। **'सावन मेघ'** कविता इसी तथ्य को उजागर करती है। एक उदाहरण देखिए–

"घिर गया नभ, उमड़ आये मेघ काले
भूमि के कम्पित उरोजों पर झुका-सा
विशद, श्वासाहत, चिरातुर
छा गया इन्द्र का नील वक्ष
वज्र यदि तड़ित से झुलसा हुआ सा।"

'अज्ञेय' ने देह के महत्त्व को हमेशा स्वीकार किया है। यद्यपि अनेक दार्शनिक और धर्म नेता आत्मा की तुलना में शरीर को हीन मानते हैं, लेकिन कविवर 'अज्ञेय' इस बात से सहमत नहीं हैं। उनका विचार है कि इस देह रूपी पिंजरे में मन रूपी पक्षी का निवास है और मन की उन्नीत शक्ति आत्मा है।

(3) क्षणवाद की अभिव्यक्ति–क्षणवाद प्रयोगवादी काव्य की एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। 'अज्ञेय' ने भी अपनी कविता में क्षण विशेष तथा भोगवादी दृष्टिकोण को महत्त्व दिया है। कविवर 'अज्ञेय' प्रेम में न तो भूतकाल को देखते हैं तथा न भविष्यत् काल को। वे तो देह को एक नदी मानते हैं जो सदैव प्रवाहित होती रहती है। अतः कवि का प्रेम बोध क्षण के जीवन में तन्मय होने के लिए लालायित है। वस्तुतः **डी०एच० लारेंस, सार्त्र** आदि पाश्चात्य क्षणवादी विचारकों से 'अज्ञेय' काफी प्रभावित हुए हैं। ये पाश्चात्य विचारक जीवन के एक सुखद क्षण को शेष जीवन से श्रेयस्कर मानते हैं।

कवि यह भी स्पष्ट करता है कि लम्बे सर्जना क्षण कभी भी नहीं हो सकते। यह कवि ने प्राप्त किया है। कवि के जीवन में एक ही क्षण आता है, जिससे वह अभिभूत हो जाता है। अभिभूत रहने का काल एक क्षण से अधिक नहीं है। व्यक्ति को इसी क्षण के प्रति सजग रहना चाहिए। इसी तरह अभिभूत होने का क्षण आत्मदान देते रहने पर वर्षों में सिद्धियों को पहुँचता है। कवि कहता भी है–

"एक क्षण क्षण में प्रवहमान
व्याप्त सम्पूर्णता
इससे कदापि बड़ा नहीं था महाबुद्धि जो
पिया था अगस्त्य ने....
.....साक्षात् के क्षण का
आज हम आचमन करते हैं।"

(4) लघु मानव की प्रतिष्ठा–लगभग सभी प्रयोगधर्मी कवियों ने अपनी काव्य रचनाओं में लघु मानव को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया है। वस्तुतः लघु मानववाद यथार्थवाद की ही एक विशेषता है। इसका अर्थ है ऐसा मानव जो अन्य लोगों के आश्रय के बिना अपने पैरों पर खड़ा संघर्षरत है। कविवर 'अज्ञेय' ने भी लघु मानव को अपनी कविता में अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया है। वह उसके अस्तित्व को स्वीकार करता है, क्योंकि लघु मानव अपने पूर्णतया ईमानदार है। लघु मानव अपनी क्षुद्रता को उपहास नहीं बनने देता। भले ही समाज उसे अस्वीकार करे, उसका अपमान करे तो भी उसे कोई चिंता नहीं है।

(5) आस्था और अनास्था का प्रश्न–प्रयोगवादी कवियों के काव्य में आस्था और अनास्था की समस्या सर्वत्र देखी जा सकती है। कभी-कभी तो पाठक को ऐसा लगता है कि इन कवियों की अनास्था समाज में अराजकता को बल प्रदान कर सकती है। इन कवियों का विचार है कि जिन मानदंडों को आधार बनाकर मानव अब तक संघर्ष कर रहा था वे सभी बेकार साबित हो चुके हैं। इसलिए लोगों में अनास्था के भाव उत्पन्न हो रहे हैं। कभी-कभी तो ये लोग उस अव्यक्त सत्ता अर्थात् ईश्वर के प्रति भी अपनी अनास्था को व्यक्त करने लगे हैं।

वस्तुतः यह अनास्था का स्वर मानव के अस्तित्ववादी दृष्टिकोण का परिणाम है। मानव अपने मन में अनेक आकांक्षाएँ और अभिलाषाएँ पाल लेता है, लेकिन जीवन की यथार्थ भूमि पर उसके स्वप्न धराशायी हो जाते हैं। जो कुछ वह चाहता और सोचता है, वह नहीं होता? फलस्वरूप मानव नियति अथवा भाग्य को कोसने लगता है। यह नियतिवादी दृष्टिकोण मानव की मजबूरी है।

'कितनी शांति!' नामक कविता में 'अज्ञेय' कहते हैं–

"किन्तु सहसा हरहराते ज्वार सा बढ़ एक हाहाकार,
प्राण को झकझोर कर दुर्वार,
लील लेता रहा है मेरे अकिंचन, श्रम, कर्म, व्यापार।"

लेकिन यह अनास्था का स्वर सर्वत्र दिखाई नहीं देता और शीघ्र ही यह आस्था में परिवर्तित हो जाता है। यह एक मनोवैज्ञानिक सच्चाई है कि जब मानव अपने लक्ष्य को पा लेता है तो वह संतुष्ट होकर आस्थावादी बन जाता है। कवि की सोच है कि एक लघु मानव की आत्मा अंकिचन् और क्षुद्र हो सकती है, परन्तु उसकी जीवन सम्बन्द्धी आस्था चिर-सजग है।

(6) भदेस एवं अनगढ़ता–प्रयोगवादी कवियों ने अपनी काव्य रचनाओं में भद्देस और अनगढ़ता का अत्यधिक वर्णन किया है। इस संदर्भ में कविवर 'अज्ञेय' भी अपवाद नहीं है। कहीं-कहीं उनकी कविता लघु और गुरु के अन्तर को एक झटके से अस्वीकार कर दूर फेंक देती हैं। कवि मेंढ़क, चाँदनी रात और मूत्रसिंचित मृतिका में, घड़े, गदहे, नूपुर-ध्वनि और चप्पल, खाली चाय की प्याली को कविता में स्थान देने लगता है।

"शिशिर की राका निशा" नामक कविता में कवि कहता है–

"निकटतम
रीढ़ बंकिम किए, निश्चल किन्तु
लोलुप खड़ा वन्य बिलार
पीछे गोयठों के गंधमय अम्बार।"

इसी प्रकार से 'अज्ञेय' की कविता में ऐसे अनेक स्थल हैं जहाँ पर उन्होंने भद्देसपन को पूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान की है। **'सागर तट की सीपियाँ'** नामक कविता में कवि अनगढ़ता का आश्रय लेता है।

(7) कटु यथार्थवाद की अभिव्यक्ति–यद्यपि 'अज्ञेय' ने अपनी काव्य यात्रा छायावादी कविताओं से आरम्भ की थी, लेकिन आगे चलकर वे प्रगतिवादी कविताएँ भी लिखने लगे। देश की सामाजिक और आर्थिक विषमता को देखकर कवि के मन में विद्रोह के भाव उत्पन्न होने लगे। कवि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में बदलाव चाहता है। एक स्थल पर वह स्पष्ट कहता है, 'भले ही आज हमारा देश हरा-भरा है, लेकिन इसके भीतर का कटु यथार्थ बड़ा तिक्त है।'

"हरे भरे हैं खेत
मगर खलिहान नहीं
बहुत महतो का मान
मगर दो मुट्ठी धान नहीं।"

कवि ने स्वयं देखा और भोगा कि किस प्रकार समाज का निम्न वर्ग खाली पेट और आँसू भरी आँखों के साथ अपना जीवन गुजार देता है। दूसरी ओर अमीरों की अलग महानगरीय संस्कृति विकसित हो रही है। इन लोगों के लिए सब प्रकार की सुविधाएँ प्रदान की जा रही हैं। उनके जीवन में सुख और आनन्द है, लेकिन समाज के गरीब तथा अभावग्रस्त लोग उपेक्षित और शोषित हैं। उनकी तरफ कोई ध्यान नहीं देता। अमीर और अमीर होता जा रहा है तथा गरीब और गरीब।

(8) अभिव्यंजना शिल्प में प्रयोगधर्मिता–कविवर 'अज्ञेय' के काव्य का शिल्प पक्ष भी प्रयोगधर्मिता का सुन्दर उदाहरण है। भाषा पर 'अज्ञेय' का असाधारण अधिकार है। उन्होंने अपने काव्य में अनेक परम्परागत शब्दों का नए अर्थों में प्रयोग किया है जिसके फलस्वरूप उनकी प्रशंसा भी हुई है तथा आलोचना भी।'अज्ञेय' की काव्य भाषा को तीन भागों में बाँटा जा सकता है– (1) तत्सम् प्रधान भाषा, (2) सामान्य बोलचाल की भाषा तथा (3) मिश्रित भाषा।

सामान्य बोलचाल की भाषा का एक उदाहरण देखिए–

"और उस मूंछ के
हवाई बाल जब
बलखाते, धरती पर लहराते
मंडराते चेहरों पर हमारे

तो उनके घुमते हुए खुरदरे परस से
खरोंच उभरती है लाल-लाल।"

कहीं-कहीं 'अज्ञेय' ब्रजभाषा की शब्दावली का इतना सुन्दर प्रयोग करते हैं कि जिससे उनकी कविता से माधुर्य टपकने गता है। ब्रजभाषा की क्रियाओं और संज्ञाओं के प्रयोग से उनकी भाषा कोमल और मृदुल हो गई है; यथा–

"शरद चाँदनी
बरसी ग्राम
अंजुलि भर कर पी लो
उठी ललक
हिय उमंग
अनकहानी
अलसानी
उठी लालसा...।"

'अज्ञेय' की कविता अपने नवीन प्रतीकों, उपमानो तथा बिंबों के लिए भी प्रसिद्ध हैं। उनका तो स्पष्ट कहना है कि परम्परा चले आ रहे उपमानो व बिंबों में वह सौष्ठव नहीं रह जाता जो उनके प्रयोग के आरंभिक काल से है। इसलिए कवि 'कलगी ाजरे की' नामक कविता में मैले उपमानो को त्याग कर नए उपमानो को ग्रहण करने का आग्रह करता है। रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा, ल्लेख, सांगरूपक आदि सभी प्रकार के अलंकारों में 'अज्ञेय' नवीन उपमानो का ही प्रयोग करते हैं। जहाँ तक बिंब योजना का श्न है, कविवर 'अज्ञेय' ने स्पर्श, गंध, ध्वनि, आस्वाध, मानस, अलंकृत, यौन आदि सभी प्रकार के बिंबों का प्रयोग किया है।

◆◆◆

2. 'अज्ञेय' का काव्य-वैशिष्टय

. कविवर 'अज्ञेय' के काव्य-वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए। **(Most Imp.)**

अथवा

'अज्ञेय' की काव्यगत प्रवृत्तियों का मूल्यांकन उनके विभिन्न काव्य-रचनाओं के आधार पर कीजिए।

अथवा

'अज्ञेय' के काव्य की प्रमुख विशिष्टताएं बताइए।

उत्तर–'अज्ञेय' का काव्य-वैशिष्ट्य–सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सयायन 'अज्ञेय' आधुनिक हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार हैं। ज्ञेय' इनका उपनाम है। वस्तुतः ये करतारपुर (जालन्धर) के भड़ौत शाश्वत ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम रानन्द शास्त्री था जो भारत के पुरातत्त्व विभाग में एक उच्चाधिकारी थे। इनका बाल्यकाल विविध नगरों में व्यतीत हुआ और क्षा अर्जना की दशा भी अव्यवस्थित थी।

वस्तुतः 'अज्ञेय' आजीवन संघर्षों का सामना करते रहे। अंग्रेजी विषय में एम० ए० करने के बाद वे क्रान्तिकारी दल में क्रिय भाग लेने लगे। 15 नवम्बर, 1930 को वे गिरफ्तार कर लिए गए। जेल में रहकर उन्होंने छायावाद से लेकर मनोविज्ञान, जनीति, अर्थशास्त्र, कानून आदि विभिन्न विषयों का अध्ययन किया। इस काल में कवि ने न केवल शारीरिक यातना सहन की ल्कि आत्म मंथन भी किया। 'अज्ञेय' ने एक कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, निबन्धकार तथा पत्रकार के रूप में विशेष प्रसिद्धि प्त की। वे प्रयोगवादी काव्यधारा के प्रवर्तक माने जाते हैं, लेकिन नई कविता के भी एक प्रसिद्ध हस्ताक्षर हैं। उन्होंने विदेशों अनेक बार यात्राएं की। 'अज्ञेय' की काव्यानुभूति विविध प्रकार की है। 'अज्ञेय' विरचित विभिन्न काव्य-संग्रहों के अध्ययन के चात 'अज्ञेय' के काव्य-वैशिष्ट्य का मूल्यांकन हम निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर कर सकते हैं–

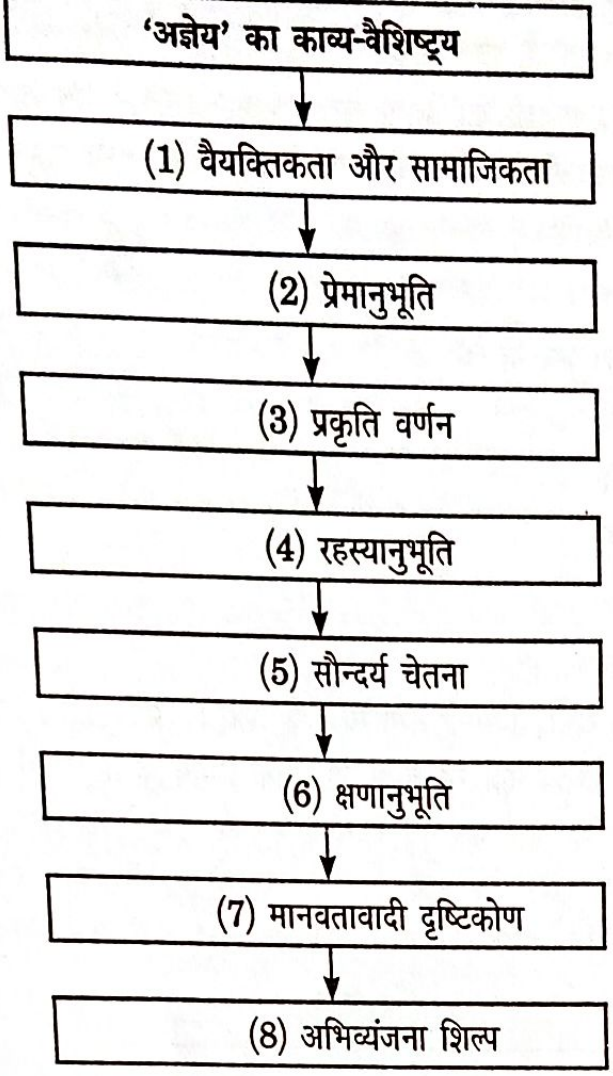

(1) वैयक्तिकता और सामाजिकता–इसमें दो मत नहीं कि 'अज्ञेय' के काव्य में आत्मनिष्ठता का स्वर प्रखर है। कवि ने अपने मन की सूक्ष्मतर गतिविधि को चेतन तक लाने का प्रयास किया है। यही नहीं, वह अपनी चिन्तनशील बौद्धिकता, दमित काम प्रवृत्ति आदि को भी खुलकर अभिव्यक्त करता है। **'आत्मनेपद'** में कवि ने स्वयं स्वीकार किया है, "जो यातना में है वह दृष्टा हो सकता है। दुःख सबको मांजता है, जिज्ञासा ही सबसे बड़ी पीड़ा है। वेदना के बिना ज्ञान नहीं है। दुःख किसी भी अनुभूति का नाम है। ऐसी अनुभूति जो संवेदना तथा चेतना को घनीभूत आलोक का रूप दे देती है।" वे अपनी कविता को अपनी आत्मानुभूति का परिणाम मानते हैं। 'सागर मुद्रा' नामक कविता में वे लिखते हैं–

"जो भी पाया दिया, देखा, दिया
आशाएं, प्यार, अहंकार विनतियाँ बड़-बोलियाँ,
ईर्ष्याएं, दर्द, भूलें, अकुलाहटें,
जो भोगा, दिया जो नहीं भोगा वह भी दिया।"

आरम्भ से ही कविवर 'अज्ञेय' में व्यक्तिवादी प्रवृत्ति देखी जा सकती है। एकान्त में चिन्तन करने को 'अज्ञेय' ने सर्वाधिक महत्त्व दिया है। उनका विश्वास है कि व्यक्तित्व समाज द्वारा बाधित नहीं होना चाहिए। यदि कवि का व्यक्तित्व समाज द्वारा बाधित होगा तो उसकी सृजनात्मक शक्ति समाप्त हो जाएगी। जीवन का अर्थ ढूढ़ंने के लिए व्यक्तित्व की खोज अनिवार्य है और यह व्यक्तित्व व्यक्ति की अपनी सोच से बनता है। यही कारण है कि 'अज्ञेय' ने साम्यवाद को अधूरा और पंगु स्वीकार किया है। उनकी दृष्टि में भले ही लोकतन्त्र अधूरा है लेकिन वह साम्यवाद की तुलना में श्रेष्ठ है। इसका प्रमुख कारण है कि लोकतन्त्र आत्मनिष्ठता को न केवल स्वीकार करता है बल्कि उसे बल भी प्रदान करता है।

(2) प्रेमानुभूति–नई कविता में रती को वही अकुंठ रूप देने की कोशिश की गई है जो बाल्मीकि और कालिदास में देखी जा सकती है, लेकिन इन कवियों ने प्रेम के बंधे-बंधाएं रूप को स्वीकार न करके उसमें वैयक्तिक विशिष्टता लाने का प्रयास किया है। दूसरी ओर प्रयोगवादी कवियों ने राजा-महाराजाओं को स्तर से उतारकर साधनहीन मध्य वर्ग के व्यक्ति में प्रतिष्ठित किया, भाव यह है कि नई कविता में यौनाकर्षण बौद्धिक जटिलता वाले विशुद्ध मानव का शुद्ध आकर्षण है। प्रेम को इन कवियों ने तो आध्यात्मिक शिखरों पर प्रतिष्ठित करने की कोशिश है और न ही उसे किसी नैतिकता का आवरण उड़ाने का प्रयास किया है।

डॉ० राकेश गुप्त ने स्पष्ट लिखा है कि **"'अज्ञेय' उन्हीं प्रसंगों में सफल दिखाई देते हैं जहां उन्होंने मांसल प्रणयानुभूति का अभिव्यक्ति प्रदान की है।"** इस सन्दर्भ में हमें इस बात को ध्यान रखना होगा कि सन् 1940 में 'अज्ञेय' ने सिविल पद्धति से पहला विवाह किया। यह विवाह दो महीने भी नहीं टिक पाया और वे शीघ्र ही उससे अलग हो गए लेकिन सन् 1946 में जाकर इस विवाह का विधिवत् विच्छेद हुआ। कवि का 'चिन्ता' नामक काव्य-संग्रह पुरुष और नारी के प्रेम सम्बन्धों पर आधारित है। इस सम्बन्ध में डॉ० प्रकाश शर्मा लिखते हैं–**"इस काव्य में 'अज्ञेय' ने छायावादी उदान्त प्रेम के प्राकृत रूप को ही अपनाया है। चिन्ता का पुरुष एक ऐसे प्रयास की भूख है जिस पर उसका एकाधिकार हो। वह ऐसे अनुराग और प्यार का प्यासा है जो किसी अबला से प्राप्त हो। उसमें एकाधिकार और अहम् का प्रबलय है। वह कहता है कि जब तुम हंसती हो तब मेरे लिए अत्यन्त जघन्य हो जाती हो तब तुम मेरी समवर्तिनी नहीं, किन्तु एक तुच्छ वस्तु रह जाती हो...।"** इस सन्दर्भ में कवि की निम्नलिखित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं–

"तोड़ दूँगा मैं तुम्हारा आज यह अभिमान

× × × ×

कोषवत् सिमटी रहे यह चाहती नारी

खोल देने, लूटने का पुरुष अधिकारी

(3) प्रकृति वर्णन–'अज्ञेय' का मूल क्षेत्र प्रेम, सौन्दर्य और मानवीय भाव हैं लेकिन कवि ने इन दोनों उद्देश्यों से प्रकृति चित्रण भी किया है। 'अज्ञेय' ने प्रकृति चित्रण परम्परागत रूप में तथा स्वतन्त्र रूप में दोनों प्रकार से किया है। कभी-कभी तो वे प्रकृति का परम्परागत वर्णन करते हुए लिखते हैं–

''मेरे उर में शिशिर हृदय से शिखा करना प्यार,

इसी व्यथा से रोता रहता अम्बर बार-बार।''

लेकिन कभी-कभी वे प्रकृति के नवीन रूप का भी चित्रण करते हैं। ऐसे स्थलों पर वे प्रकृति के उल्लास के माध्यम से अपने प्रगतिशील विचारों को अभिव्यक्त करते हैं। एक उदाहरण देखिए जिसमें पृथ्वी बार-बार पुकार कर जागने को कहती है। कवि के कथन के अनुसार, जब बसन्त सर्वत्र आता है तो उसे कोई रोक नहीं सकता, उसके आने पर जड़-चेतन सब में सरसता छा जाती है। उदाहरण देखिए–

"मलय का झोंका बुला गयाः

खेलने से स्पर्श से

वो रोम-रोम को कंपा गया–

जाओ, जागो

जाओ, सखि बसन्त आ गया। जागो!

वस्तुतः 'अज्ञेय' ने प्रकृति का प्रतीकात्मक रूप में वर्णन करने के साथ-साथ प्रकृति का मानवीकरण तथा विशुद्ध चित्रण भी किया है। कुछ उदाहरण देखिए–

प्रतीकात्मक रूप में प्रकृति वर्णन–

"घिर गया नभ, उमड़ आए मेघ काले,

भूमि के कम्पित उरोजों पर झुका-सा

विशद्, श्वासाहत, चिरातुर

छा गया, इन्द्र का नील वक्ष–

वज्र सा, यदि तड़ित से झुलसा हुआ-सा।"

(4) रहस्यानुभूति–जहाँ तक 'अज्ञेय' की काव्य रचनाओं में रहस्यानुभूति का प्रश्न है, इसके बारे में हमें ध्यान रखना होगा कि कवि की काव्य चेतना का एक ओर आधुनिकता से सम्बन्ध है और दूसरी ओर आध्यात्मिक भाव-बोध से, लेकिन यहां पर यह भी उल्लेखनीय बात है कि वे अपनी ब्रह्म सम्बन्धी जिज्ञासा को अथवा जीवात्मा-परमात्मा के सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं करते हैं वे तो ईश्वर के प्राकृत रूप में भी विश्वास नहीं करते।

चारों ओर दीवार है।
जिसमें एक द्वार है
बीच बाग में कुआँ है
बहुत-बहुत गहरा।

यही नहीं उनकी भाषा में उर्दू, फारसी तथा अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग देखा जा सकता है। पुनः 'अज्ञेय' आवश्यकतानुसार नवीन शब्दों का भी निर्माण कर लेते हैं। छन्द प्रयोग की दृष्टि से भी उनके काव्य में प्राचीनता के साथ-साथ नवीनता भी देखी जा सकती है। कवित्, बरवै, मधुशाला आदि प्राचीन छन्दों के साथ उन्होंने नवीन छन्दों का प्रयोग किया है। मुक्त छन्द के प्रयोग में तो वे सिद्धहस्त हैं। पुनः कवि ने उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, विशेषण-विपर्यय आदि अलंकारों का सफल प्रयोग किया है। उपमा तो कवि का विशेष प्रिय अलंकार है।

'अज्ञेय' की कविता अपने प्रतीकों तथा बिम्बों के लिए भी विशेष महत्त्व रखती है। कवि द्वारा प्रयुक्त प्रतीक प्रकृति, मनोविज्ञान, पुराण, दर्शन, विज्ञान आदि से सम्बन्धित है। लेकिन कुछ स्थलों पर कवि ने निजी प्रतीकों का भी प्रयोग किया है तथा उनके वैयक्तिक प्रतीक अर्थपूर्ण होने के कारण बड़े ही प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं।

◆◆◆

3. 'अज्ञेय' की असाध्य वीणा का प्रतिपाद्य

3. 'अज्ञेय' विरचित असाध्य वीणा का प्रतिपाद्य लिखिए। **(Most Imp.)**

अथवा

असाध्य वीणा के 'कथ्य' पर प्रकाश डालिए।

अथवा

असाध्य वीणा का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–असाध्य वीणा का प्रतिपाद्य–'असाध्य वीणा' कविवर 'अज्ञेय' की एक उल्लेखनीय कविता है। यह 'आंगन के पार द्वार' में से संकलित है। इस काव्य-संग्रह में सन् 1956 से लेकर 1961 तक की कविताओं का संकलन किया गया है तथा इसका प्रकाशन सन् 1961 में हुआ। 1964 में यह काव्य रचना साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत भी हुई। यह काव्य रचना कवि की काव्य यात्रा का वह सोपान है जहां वह वस्तुवाद को त्याग कर रहस्यवाद की ओर अग्रसर होता हुआ दिखाई देता है। 'आंगन के पार द्वार' की सर्जना से पूर्व 'अज्ञेय' जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्ति देते हुए दिखाई देते हैं, लेकिन इस काव्य रचना में वे अनन्त सत्ता की ओर आकृष्ट हैं और एक रहस्यवादी कवि के समान वे सत्यान्वेषण करते हैं। वस्तुतः इस काव्य-संग्रह का प्रमुख स्वर ही आध्यात्मिकता है। विशेषकर 'असाध्य वीणा' में कवि ने रहस्यवाद के स्वर को मुखरित किया है। कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से 'असाध्य वीणा' एक उल्लेखनीय कविता मानी गई है।

नरेन्द्र शर्मा ने अपने एक लेख में यह स्वीकार किया है कि **'असाध्य वीणा'** एक जापानी कथा से प्रभावित है, जो कि **'The Book of Tea'** में संकलित है। इसके लेखक का नाम अकोकारा है और कथा का नाम है–**'Taming of the Harp'**। इस कथा में यह बताया गया है कि लुगमित खाल में एक विशाल किरिट का वृक्ष था जो कि वन का मुकुट जैसा दिखाई देता था। उस वृक्ष पर वन प्रदेश के सभी पक्षी आकर विश्राम करते थे और जंगल के पशु उसकी छाया में आश्रय प्राप्त करते थे। उसी वृक्ष से एक वीणा का निर्माण हुआ। यह वीणा ही 'असाध्य वीणा' के समान प्रसिद्ध हो गई। इस वीणा को बजाने के लिए असंख्य कलाकार आए लेकिन कोई भी उस वीणा को बजा नहीं पाया। वे सभी पराजित होकर लौट गए। अन्त में बीनकारों का राजकुमार पीवो वहां पर आया। वह इस वीणा को साधने में सफल हुआ। उसने वीणा के द्वारा ऋतु परिवर्तन, प्रकृति की शोभा, जलधारा का प्रवाह तथा बादल और प्रेम के गीत गाए। यही नहीं राजकुमार पीवो ने युद्ध का गीत भी गाया। उसके द्वारा वीणा बजाने का रहस्य यह था कि वह वीणा को बजाते-बाजते अपने आपको भूल गया था। श्रोताओं ने भी मंत्र मुग्ध होकर इस वीणा-वादन को सुना और आनन्द प्राप्त किया।

कविवर 'अज्ञेय' ने 'असाध्य वीणा' के द्वारा इस कथा का भारतीयकरण किया है। उन्होंने अतीत काल की इस कथा को अपनी कविता में नया रूप और नया आकार प्रदान किया है। उन्होंने कीरी को किरीटी और पीवो को प्रियंवद कहकर इस कथा का भारतीयकरण कर दिया है। कवि ने यह भी स्पष्ट किया है कि यह वीणा उत्तराखण्ड के पर्वतीय प्रदेश से आई है।

"यह वीणा उत्तराखण्ड के गिरि-प्रान्तर से
घने वनों से जहां तपस्या करते हैं व्रतचारी–
बहुत समय पहले आयी थी।"

'असाध्य वीणा' नव्य रहस्यवादी स्वर को मुखरित करने वाली लम्बी कविता है। इस कविता का कथानक इस प्रकार है–एक राजा था। उसके पास उत्तराखण्ड के गिरि प्रान्तर के साधक व्रजकीर्ति द्वारा निर्मित एक वीणा लाई गई। व्रजकीर्ति ने मन्त्रों द्वारा पवित्र करके किरीटी के वृक्ष से वीणा का निर्माण किया था, वह किरीटी का वृक्ष अत्यन्त प्राचीन था। उसकी डालियां हाथी की सूंड के समान विशाल और सुदृढ़ थीं। वह पेड़ बहुत ऊँचा था। उसके कन्धों पर बादल आकर विश्राम करते थे। और हिमशिखर उसके कानों में रहस्य की बातें करते थे। भालू उसके कोटर में आकर रहते थे तथा शेर उसके तने से अपने कन्धे खुजलाते थे। उसकी जड़ें पाताल लोक तक पहुंच गई थीं। उसकी जड़ों की सुगन्ध से आसक्त होकर वासुकि नाग सोता था। इस वीणा को बजाने के लिए अनेक कलाकार आए लेकिन कोई भी इस वीणा को बजा न सका। अन्ततः राजा के यहां एक केशकम्बली गुफा के प्रियंवद नाम का तपस्वी आया। राजा ने उसके सामने प्रस्ताव रखा कि वह इस असाध्य वीणा को बजाए। अन्ततः प्रियंवद ने राजा के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उसने असाध्य वीणा को उठाकर अपनी गोद में रख लिया। सबसे पहले प्रियंवद ने वीणा को न साधकर अपने आपको साधा। उसने अपने आपको किरीटी वृक्ष तथा उसके परिवेश में पूर्णतया लीन कर दिया। वह अपने आपको भूल गया और अपने में से परे हो गया। इस चरम समर्पण के पश्चात् ही प्रियंवद वीणा को बजा सका। उपस्थित लोगों, राजा और रानी सबने अपने ढंग से उसके संगीत को अलग-अलग सुना। किसी को भगवान की भक्ति सुनाई दी। किसी को लगा कि वह आतंक, अत्याचार से मुक्त हो रहा है। किसी को लगा कि मानो तिजोरी में सिक्के की खनक है, किसी को अन्न की सौंधी महक मिली, किसी को नववधु की पायल की झंकार सुनाई पड़ी, किसी को शिशु की किलकारी सुनाई पड़ी। वीणा के संगीत को सुनकर राजा का त्रिताप शान्त हो गया। उसे अपना मुकुट शिरिष के फूल के समान हल्का प्रतीत होने लगा। रानी को लगा कि उसका सौन्दर्य, ऐश्वर्य व्यर्थ है। जनता वाह-वाह कर उठी और रानी ने तपस्वी को अपनी लड़ी माला अर्पित की। प्रियंवद ने वीणावाद का श्रेय स्वीकार नहीं किया और अपना कम्बल लेकर वापिस वन को लौट गया।

इस कथानक में घटना तत्त्व अत्यन्त क्षीण है। अतः उसमें गतिशीलता का अभाव देखा जा सकता है। कवि ने इस जापानी कथा का पूर्णतया भारतीयकरण करते हुए उसमें औत्सुक्य तत्त्व भर दिया है। आदि से अन्त तक पाठक के मन में एक जिज्ञासा बनी रहती है। लेकिन उल्लेखनीय बात यह है कि कवि इस कविता के द्वारा अत्यन्त गम्भीर और रहस्यवादी चेतना को अभिव्यक्त करना चाहता है।

'असाध्य वीणा' के माध्यम से कवि यह बताना चाहता है कि जीवन के मूल सत्य की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। कलाकार अथवा कवि उस अनकहे सत्य को अभिव्यक्त नहीं कर सकता। भले ही वह उस सत्य का साक्षी क्यों न हो। यही कारण है कि केशकम्बली प्रियंवद राजा से कहता भी है–

"राजन्! पर मैं तो
कालावन्त हूं नहीं, शिष्य साधक हूं–
जीवन के अनकहे सत्य का साक्षी।"

स्पष्ट है कि असाध्य वीणा का अनकहा सत्य कला की प्रक्रिया है। इस कला की सृजना आत्म-विसर्जन, अहम् त्याग और एकनिष्ठ भाव से ही हो सकती है। इस कला सृजन में कलाकार को आत्म-त्याग करना पड़ता है। प्रियंवद ने सर्वप्रथम स्वयं को उस किरीटी वृक्ष के प्रति समर्पित किया, तत्पश्चात् उसने उन सभी तत्त्वों, अनुभवों तथा व्यापारों को याद किया जो किरीटी वृक्ष से जुड़े हुए थे। आत्म विसर्जन करता हुआ वह कह उठता है–

मैं नही, नहीं
मैं कहीं नहीं
ओ रे तरु, ओ वन
ओ स्वर संभार

ओ रस प्लावन
नादमय संस्कृति
मुझे क्षमा कर
भुला अकिंचनता को मेरी,

प्रियंवद केवल आत्म-विसर्जन ही नहीं करता बल्कि अपने अहम् का त्याग भी करता है।

ऊपर जिस आत्म-त्याग की बात कही गई है अथवा अहं के विलयन की ओर संकेत किया गया है, वह भक्तिकालीन संत कवियों की परम्परा का रहस्यवाद है। कबीरदास ने भी स्वीकार किया था कि पहले जब मैं था तब हरि नहीं था, अब हरि है तो मैं नहीं रहा। 'अज्ञेय' कबीर के समान रहस्यवादी नहीं है, क्योंकि हम 'अज्ञेय' को प्रियंवद नहीं मान सकते। असाध्य वीणा में किसी परम सत्ता की साधना नहीं की गई। न ही कवि इसमें किसी 'अनहद नाद' को सुनने की अभिलाषा रखता है। हाँ, कवि अपने कलात्मक अनुभव को कविता में बांधना चाहता है। यह कलात्मक अनुभव ही एक प्रकार का आध्यात्मिक अनुभव है। अतः यह अनुभव मध्यकालीन रहस्यवाद से सर्वथा भिन्न है। इसे नव्य (नव) रहस्यवाद कहा जा सकता है। असाध्य वीणा के द्वारा सत्य को खोजने का प्रयास किया गया है। इस खोज का माध्यम कला सृजन की प्रक्रिया है। इसीलिए इस लम्बी कविता में वह आध्यात्मिकता नहीं है जो मध्यकालीन या छायावादी रहस्यवाद में है। आलोचकों ने 'साध्य वीणा' के रहस्यवाद को नव रहस्यवाद या नूतन रहस्यवाद की संज्ञा दी है।

इधर **डॉ० राम दरश मिश्र** ने 'असाध्य वीणा' को एक प्रतीकात्मक कविता कहा है जो जीवन सत्य की अभिव्यक्ति करती है। कवि जापानी कथा नहीं कहना चाहता, वह तो जीवन के सत्य से पाठकों को अवगत कराना चाहता है। वे लिखते हैं—**"असाध्य वीणा में इस छोटी-सी कथा का इस्तेमाल एक अवधारणा की अभिव्यक्ति के लिए किया गया है जो प्रतीकात्मक होने के कारण लौकिक और अलौकिक दोनों स्तरों पर चरितार्थ होती है। लौकिक स्तर पर 'कीरी' तरु समष्टि का प्रतीक है। अलौकिक स्तर पर वह ब्रह्म है, महामौन है जिसमें संगीत होता है, विराट् है जो आकाश से होकर पाताल तक व्याप्त है, जो ना-ना ध्वनियों और गतियों का साक्षी और गृहीता है। उसी से वीणा बनी है, अतः वीणा में भी सारी गतियाँ व ध्वनियाँ हैं, वीणा व्यक्ति के भौतिक अस्तित्व का प्रतीक है। उसे वही बजा सकता है जो महामौन या ब्रह्म का साधक हो। अंहकार लेकर उसे नहीं बजाया जा सकता।"**

कुछ विद्वानों का विचार है कि असाध्य वीणा की ध्यान प्रक्रिया बहुत कुछ जैन धर्म की ध्यान प्रक्रिया से मेल खाती है। इसमें कवि का लक्ष्य है स्वयं भू-संगीत को अवतरित करना। इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रियंवद केशकम्बली ध्यान में लीन होता है। इस संदर्भ में कवि ने लिखा भी है—

"पर उस स्पन्दित सन्नाटे में
मौन प्रियंवद साध रहा था वीणा—
नहीं, स्वयं अपने को शोध रहा था
सघन निविड़ में वह अपने को
सौंप रहा था उसी किरीटी-तरु को।

ध्यान प्रक्रिया की चार अवस्थाएं मानी गई हैं। प्रथम अवस्था में साधक प्रियंवद अनुभूतियों के द्वारा स्वयं को वीणा से जोड़ता है और अपनी अहम् भावना से मुक्त होता है। कवि लिखता भी है—

"चुप हो गया प्रियंवद।
सभा भी मौन हो रही।
वाद्य उठा साधक ने गोद रख लिया।
धीरे-धीरे झुक उस पर, तारों पर मस्तक टेक दिया।"

दूसरी अवस्था में प्रियंवद राजसभा को भूल कर मंत्रपूत वीणा के सन्नाटे में लीन हो जाता है और वह निख एकालाप करने लगता है, बल्कि वह कम्बल पर अभिमन्त्रित अकेलेपन में डूब जाता है। इसी के साथ तीसरी अवस्था स्वयं ही समाहित हो जाती है जब साधक स्वयं किरीटी-तरु को समर्पित कर देता है।

भूल गया था केशकम्बली राज-सभा को
कम्बल पर आमन्त्रित एक अकेलेपन में डूब गया था

जिसमें साक्षी के आगे था
जीवित वही किरीट तरु
जिसकी जड़ वासुकि के फण पर थी आधारित
जिसके कंधों पर बादल सोते थे''

चौथी अवस्था में साधक की सूरति शुद्ध हो जाती है और वह गा तू गा तू कहता हुआ प्रियंवद वीणा के तारों से संगीत उत्पन्न कर देता है।

''यह वीणा रखी है, तेरा अंग-अपंग!
किन्तु अंगी तू सुक्षत, आत्म भरित
रसविद्
तू गा,

असाध्य वीणा का भाषा और शिल्प–शिल्प पक्ष कविता के लिए विशेष महत्त्व रखता है। कथ्य यदि कविता की आत्मा है तो शिल्प उसका शरीर है और शरीर के बिना आत्मा कोई रूप और आकार धारण नहीं कर सकती। शिल्प के द्वारा ही कवि अपने कथ्य को पाठकों तक पहुंचाने का प्रयास करता है। कविवर 'अज्ञेय' एक समर्थ कवि हैं। वे प्रयोगवाद के प्रवर्त्तक माने जाते हैं। लेकिन नई कविता के आन्दोलन से भी वे जुड़े रहे। कला की दृष्टि से असाध्य वीणा एक प्रौढ़ काव्य रचना कही जा सकती है। प्रस्तुत कविता का शिल्प पक्ष भी काफी सशक्त है। असाध्य वीणा की भाषा में कवि ने तत्सम् शब्दों के साथ-साथ तद्भव तथा देशज शब्दों का खुल कर प्रयोग किया है। यद्यपि अपनी आरम्भिक कविताओं में कविवर 'अज्ञेय' ने संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया, लेकिन आगे चलकर वे सहज, सरल और बोल-चाल की भाषा का प्रयोग करने लगे। नई कविता तक आते-आते 'अज्ञेय' की काव्य भाषा काफी जीवन्त बन गई है। असाध्य वीणा 'अज्ञेय' के परवर्ती काव्य से जुड़ी हुई है। इस कविता में कवि ने असाध्य वीणा से झंकृत होने वाली संगीत शब्द लहरियों का प्रभाव सहज, सरल भाषा में अभिव्यक्त किया है। उदाहरण के लिए देखिए–

उसे
बटुली में बहुत दिनों के बाद अन्न की सौंधी खुद बुद
किसी एक को नयी वधु की सहमी-सी पायल-ध्वनि।
किसी दूसरे को शिशु की किलकारी।
एक किसी को जाल फंसी मछली की तड़पन
एक अपर को चहक मुक्त नभ में उड़ती चिड़िया की।''

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में .....जीवन का संशलिष्ट रूप प्रस्तुत किया गया है। यहां कविता की भाषा सहज, सरल एवं सामान्य बोल-चाल की है। कवि कम से कम शब्दों द्वारा अधिकाधिक कहने का प्रयास करता है। पुनः इस कविता की भाषा में लयात्मकता, प्रवाहमयता और नाटकीयता के गुण भी विद्यमान हैं।

प्रस्तुत कविता अपने प्रतीकों और बिम्बों के लिए भी विशेष महत्त्व रखती है। बिम्ब किसी अमूर्त विचार अथवा भावना की पुनर्निमिति है। अंग्रेजी में बिम्ब को इमेज कहते हैं। 'अज्ञेय' ने बिम्बों के प्रयोग द्वारा जटिल भावों को भी सम्प्रेष्णीय बना दिया है। प्रस्तुत लम्बी कविता असाध्य वीणा में श्रव्य और रूप बिम्बों के उदाहरण देखे जा सकते हैं–

श्रव्य बिंब–
हाँ मुझे स्मरण है;
बदली कौंध-पत्तियों पर वर्षा-बूंदों की पट-पट।
घनी रात में महुए का चुपचाप टपकना।
चौंके खग-शावक की चिहुंक।
शिलाओं को दुलराते वन-झरने के
द्रुत लहरीले जल का कल-निनाद
कहुरे में छुनकर आती
पर्वती गांव के उत्सव ढोलक की थाप
गडरिए की अनमनी बांसुरी।

प्रस्तुत कविता असाध्य वीणा में डॉ० डी० एस राजन ने वीणा को कविता का प्रतीक कहा है। वज्र कृर्ति को कलाकार का तथा किरीटी तरु का कलाकार की अन्तर चेतना का प्रतीक कहा है। डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने असाध्य वीणा को न साध पाने वाली जीवन वीणा का प्रतीक मानते हैं। उधर डॉ० ओउम् प्रकाश अवस्थी ने किरीटी तरु की जड़ में फण टिका कर सोने वाले वासुकि नाग को कुण्डलिनी का प्रतीक कहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से असाध्य वीणा एक सफल लम्बी कविता है, लेकिन इसमें लम्बी कविता का वह तनाव एवं पीड़ा नहीं है जिसे कवि बेचैन होकर व्यक्त करना चाहता है।

◆◆◆

4. काव्य भाषा

4. 'अज्ञेय' की काव्य-भाषा की समीक्षा कीजिए। **(Imp.)**

अथवा

'अज्ञेय' के अभिव्यंजना-शिल्प को स्पष्ट कीजिए।

अथवा

'अज्ञेय' की कविताओं के आधार पर उनकी काव्य-भाषा का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर–'अज्ञेय' का काव्य-भाषा–टी० एस० इलियट ने एक क्लासिक कवि के लिए मस्तिष्क की प्रौढ़ता, व्यवहार की प्रौढ़ता, भाषा की प्रौढ़ता पर विशेष बल दिया था। उनके कहने का भाव यह था कि यदि कवि के पास भावों की प्रौढ़ता है तो भाषा की प्रौढ़ता भी अवश्य होनी चाहिए। अन्य शब्दों में, एक सफल कवि अपनी अभिव्यक्ति के लिए सफल माध्यमों की तलाश करता है। 'अज्ञेय' आधुनिक कविता में इसलिए महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उन्होंने अधिकाधिक सफल अभिव्यक्ति के माध्यम ढूढ़े हैं। वे अभिव्यक्ति की महत्ता से अनभिज्ञ नहीं थे। संभवतः यही कारण है कि उनके काव्य में अनुभूति का जितना महत्त्व है, अभिव्यक्ति का भी उतना ही महत्त्व है। कवि ने यथा संभव अपने युग की भाषा का प्रयोग करने का प्रयास किया है। 'अज्ञेय' का अध्ययन बहुत ही व्यापक था। वे अपनी बात को कहने के लिए अनेक माध्यम खोज लेते थे। यही कारण है कि उनकी काव्य भाषा श्रेष्ठ गुणों से युक्त है। जहां तक भाषा के ऊपरी आवरण का प्रश्न है, उन्होंने प्रायः तत्सम् बहुला हिन्दी भाषा का प्रयोग किया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि उन्होंने बचपन से ही संस्कृत ग्रंथों का अध्ययन किया। अतः उनकी काव्यभाषा न केवल सुन्दर है बल्कि विशिष्ट अर्थ बोधक भी है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि उनकी भाषा पूर्णतः निर्दोष है। अनेक स्थानों पर चमत्कार प्रेयता के कारण उनके भाषा सौष्ठव को क्षति भी पहुँची है। 'अज्ञेय' की काव्य-भाषा का मूल्यांकन हम निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर कर सकते हैं–

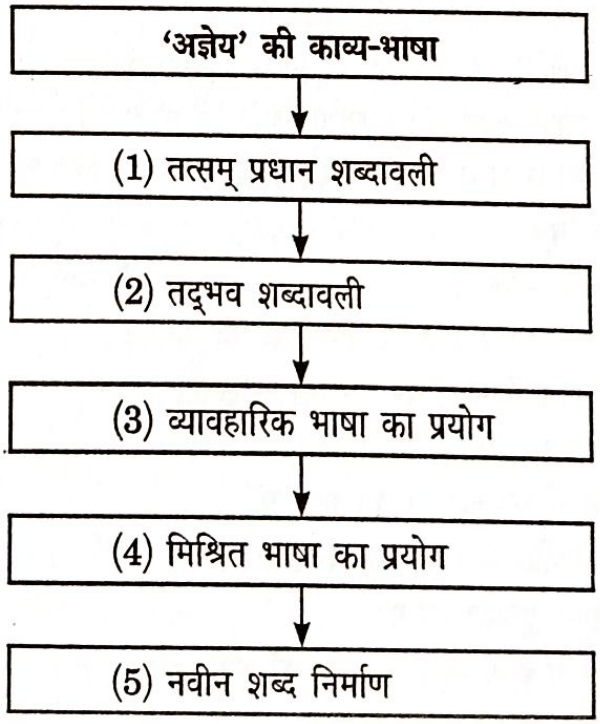

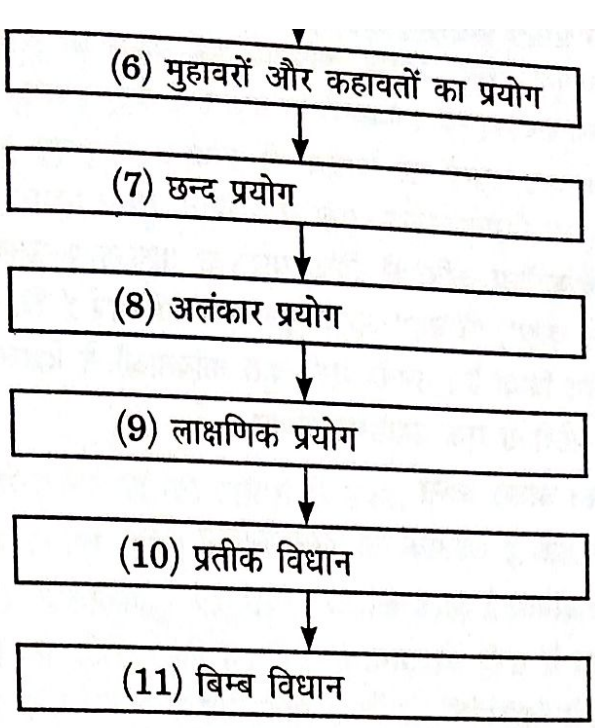

(1) तत्सम् प्रधान शब्दावली–कविवर 'अज्ञेय' की काव्य भाषा में तत्सम् प्रधान शब्दावली का अत्यधिक प्रयोग देखा जा सकता है। कहीं-कहीं तो वे संस्कृत की सूक्तियों तथा पंक्तियों का ही प्रयोग कर देते हैं। अन्तर असीम, आषाद, कनक, नारायण, अनल, जिजिविषा, उदीशा आदि शब्द उनकी कविताओं में यत्र-तत्र देखे जा सकते हैं। कहीं-कहीं तो वे काव्य में तत्सम् शब्दों का बड़ा ही उन्मत प्रयोग करते हैं जिससे उनकी काव्य भाषा अत्यधिक आकर्षक बन पड़ी है। ये संस्कृत शब्दावली उनकी कविताओं में पूर्णतः फिट कर दी गई है। यथा–

देखो देह
बल्ली
भव्य बीज रुपाकारों का
निर्गन्धा इव किंशुका

कवि संस्कृत शब्दावली का प्रयोग करते समय विशेष्य की अपेक्षा विशेषणों को अधिक महत्त्व प्रदान करता है। कहीं-कहीं तो वे निषेध वाचक शब्दों का भी प्रयोग करते हैं। पुनः तत्सम् शब्दों के प्रयोग से भाषा में लालित्य और भावों में औदात्य उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि संस्कृत के अप्रचलित प्रत्ययों तथा विभक्तियों का प्रयोग करने में वे संकोच नहीं करते। यथा–

नमित मेरा भाल, आत्मा नमित तर है
है नमित तम मम भावना संसार।

(2) तद्भव शब्दावली–शब्द प्रयोग से ही 'अज्ञेय' के व्यक्तित्व का पता चल जाता है। यही कारण है कि वे तत्सम् शब्दों के साथ-साथ तद्भव शब्दों का खुलकर प्रयोग करते हुए दिखाई देते हैं। लेकिन वे शब्दों का संस्कार करने में भी सिद्धहस्त है। उन्होंने आकाश के स्थान पर अकाश, त्रिशुल के स्थान पर त्रिशूल, सत्य के स्थान पर सच, श्वास के स्थान पर सांस आदि शब्दों का प्रयोग किया है। कहीं-कहीं वे तत्सम् शब्दों के साथ-साथ तद्भव शब्दों का मिश्रण भी कर देते हैं जिससे उनकी कविता का सौन्दर्य और भी बढ़ जाता है। एक उदाहरण देखिए–

"सबेरे सबेरे
नहीं आती बुलबुल
न श्यामा सुरीली
न फुदकी न दंहगल
सुनाती है बोली,
नहीं फूल सूंघती
यतेना सहेली
लगाती है फेरे।"

'अज्ञेय' कोमलकान्त पदावली का प्रयोग करने में भी सिद्धहस्त हैं। कोमलकान्त पदावली का प्रयोग करने से उनकी भाषा असाधारण लगने लगती है। 'माघ', 'फाल्गुन', 'चैत', शीर्षक कविताएं इसी प्रकार की कविता हैं। इस कविता के उपकरण भाव, भाषा और छन्द अत्यधिक सामान्य हैं, लेकिन तद्भव शब्दावली के प्रयोग के कारण सर्वत्र रमणीयता का संचार हो उठा है।

(3) व्यावहारिक भाषा का प्रयोग–कुछ स्थलों पर 'अज्ञेय' ने सामान्य बोलचाल की भाषा का अधिक प्रयोग किया है। उदाहरण के रूप में, 'हरी घास पर क्षण भर' नामक काव्य रचना में कवि ने तत्सम् प्रधान शब्दावली का त्याग करते हुए सामान्य बोलचाल की भाषा को अपनाया है। ये कविता कवि की विचारधारा के साथ-साथ उसकी भाषा की विशेषता पर भी प्रकाश डालती है। 'बावरा अहेरी', 'हमने पौधे से कहा', 'मैं वहां' आदि कुछ ऐसी कविताएं हैं जिनमें कवि ने तद्भव शब्दों के साथ-साथ देशज और आंचलिक शब्दों का भी प्रयोग किया है। उनकी ऐसी कुछ कविताओं में देशज-तद्भव तथा आम बोलचाल के शब्दों की भरमार देखी जा सकती है। बावरा अहेरी से एक उदाहरण देखिए–

"भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है आलोक की लाल कनियां
पर जब खींचता है जाल को
बांध लेता है सभी को साथ;
छोटी-छोटी चिड़ियां"

वस्तुतः लोक प्रलचित भाषा का प्रयोग करने में कवि को विशेष आनन्द आता है। यही कारण है कि उन्होंने लोक कथाओं, लोक गीतों की लय पर ग्रामीण शब्दावली का अत्यधिक प्रयोग किया है। इस प्रकार की कविताओं में वे जन-साधारण के कवि दिखाई देते हैं। यथा–

"बांगर में
राजा जी का बाग है
चारों ओर दीवार है।
जिसमें एक द्वार है
बीच बाग में कुआं है
बहुत बहुत गहरा।"

(4) मिश्रित भाषा का प्रयोग–'अज्ञेय' ने अपनी काव्य भाषा में उर्दू, फारसी, अंग्रेजी तथा ब्रज भाषाओं के शब्दों का सुन्दर मिश्रण किया है। इस प्रकार के शब्द प्रयोगों के कारण कवि अपने भावों की अभिव्यक्ति को सम्प्रेषणीय बनाता है। इस सन्दर्भ में यह बता देना जरूरी है कि 'अज्ञेय' ने आरम्भ में संस्कृत भाषा में शिक्षा प्राप्त की थी। बाद में उन्होंने अंग्रेजी और फारसी भाषा में शिक्षा प्राप्त की। यही कारण है कि वे अंग्रेजी भाषा के शब्दों का भी खुलकर प्रयोग करते हैं।"

अतः 'अज्ञेय' ने अपनी काव्य भाषा में स्टीमर, रेल, पार्क, मैच, कोच, मोटर, थियेटर, कलैण्डर आदि शब्दों का सफल प्रयोग किया है। इसी प्रकार से वे उर्दू के शब्दों का भी प्रयोग करते हुए दिखाई देते हैं। गुजरना, चैन, दर्द, दीवाना, इलाज, फरियादी आदि सब उर्दू के शब्द हैं। इन सभी शब्दों का प्रयोग करने से उनकी भाषा मिश्रित भाषा दिखाई देती है। दो-एक उदाहरण देखिए–

उर्दू फारसी प्रयोग–

(क) बादलों का हाशिया है आस-पास

(ख) कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।

अंग्रेजी शब्द प्रयोग–

(क) पिछले साल का सीला कलैंडर।

(ख) पार्क के किनारे पुष्पिताग्र कर्णिकार की।

पुनः 'अज्ञेय' ने अपनी काव्य भाषा में ब्रज भाषा का अत्यधिक प्रयोग किया है। ऐसा करने से उनकी कविता में अर्थ सौन्दर्य, लयात्मकता तथा संगीत तत्त्व की वृद्धि हुई है।

(5) नवीन शब्द निर्माण–'अज्ञेय' की काव्य भाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे कुछ शब्दों में नया अर्थ भरने के लिए उन शब्दों को नया रूप प्रदान कर देते हैं। उदाहरण के रूप में–

अंजुरी भर कर पीलो
फिर थिर हो गई पत्ती।

'अज्ञेय' की एक अन्य कविता का अंश देखिए जिसमें उन्होंने उन्नत से उन्नीत शब्द का निर्माण किया है। ये शब्द मन की ऊँची उठती हुई शक्ति आत्मा के लिए प्रयुक्त हैं। उन्नीत शब्द में ऊँचा उठने की क्रिया के साथ-साथ गतिशीलता का भाव भी विद्यमान है।

''देह
बल्ली
एक पिंजरा है? पर मन इसी में से उपजा
जिसकी उन्नीत शक्ति आत्मा है।''

इसी प्रकार से 'झोंप अंधियाला', 'बालाकाएं', 'फटियल', 'भंसाना', 'फींचना' आदि सर्वथा नवीन प्रयोग हैं। कुछ ऐसे भी शब्द हैं जिनमें कवि ने नया अर्थ भरने की कोशिश की है। जैसे पहले बताया गया है कि वह उल्लास के लिए उल्लस, आकाश के लिए अकास, निर्लज्ज के लिए निलज, प्रजातन्त्र से परजातंतर शब्दों का निर्माण करता है।

अन्यत्र कवि ने अपनी काव्य भाषा में शब्दों का नैवेद्यवत् प्रयोग भी किया है। कवि स्पष्ट करता है कि किसी के लिए शब्द कंकड होते हैं किसी के लिए सीपियां और किसी के लिए नैवेद्य परन्तु 'अज्ञेय' के लिए तो शब्द नैवेद्य ही है न ही वे सीपियां हैं और न ही कंकड़ हैं।

(6) मुहावरों और कहावतों का प्रयोग–'अज्ञेय' की काव्य भाषा की सबसे उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वे अक्सर कहावतों तथा मुहावरों का सफल प्रयोग करते हैं। ऐसा करने से उनकी भाषा में जीवंत आ गई है। कवि प्रचलित कहावतों और मुहावरों का प्रयोग प्रायः सन्दर्भ बदल कर करता है। दबे पांव आना, मुँह चिढ़ाना, झीखते रहना, गाल बजाना, आकाश फाड़ना आदि मुहावरे और कहावतें उनकी काव्य भाषा में विशिष्ट सन्दर्भों में प्रयुक्त हुई हैं। यथा–

फूल खिलते रहे चुपचाप;
मंजरी आयी
दबे पांव, सकुचाती।
तड़फड़ाते रहे, करते रोर
मुँह चिढ़ाते रहे वन की शान्ति को
अविराम अनगिन झींकते झींगुर
भिखारी सब
बजाते गाल बगलें
फाड़ते आकाश।

काव्य भाषा में मुहावरों के प्रयोग से लाक्षणिता, सरसता तथा प्रवाह की सृष्टि होती है। कारण यह है कि कविता वर्णिक या मातृक सीमाओं में बंधी होती है, विशेषकर मुक्त छन्द में तो कवि की सीमा और भी सिकुड़ जाती है लेकिन 'अज्ञेय' अगूंठा दिखाना, खिलकर मिलना, आंखों से चूमना, सांचे में ढलना, दामन पाक रखना, जमीन कुरेदना, आंचल बचाना आदि मुहावरों का प्रयोग करके अपनी काव्य भाषा को काफी हद तक सुन्दर एवं आकर्षक बना देते हैं

(7) छन्द प्रयोग–कविता और छन्द का गहरा सम्बन्ध है। अक्सर देखने में आया है कि जब कविता का कथ्य सीधा और सपाट होता है तो छन्द भी सरल होता है लेकिन जब कथ्य में जटिलता आ जाती है तो छन्द भी जटिल बन जाता है। नई कविता का कथ्य प्रायः उलझा हुआ है। इसीलिए प्रायः कवियों ने मुक्त छन्द का ही प्रयोग किया है। 'अज्ञेय' नई कविता के प्रमुख कवि हैं। उन्होंने अपनी आरम्भिक कविताओं में पारम्परिक छन्दों का प्रयोग किया है, परन्तु आगे चलकर वे रूढ़ शास्त्रीय छन्द विधान के प्रति विद्रोह करते हुए दिखाई देते हैं। कुल मिलाकर उनके काव्य में परम्परागत, मिश्रित, मुक्त तथा नवीन छन्दों का प्रयोग देखा जा सकता है।

(i) परम्परागत छन्द–पहले बताया जा चुका है कि 'अज्ञेय' ने अपनी आरम्भिक काव्य रचनाओं में परम्परागत छन्दों का ही प्रयोग किया है। सरसी, सरैय्या, शुद्ध गीता, ताटंक, कविता चन्द्र तथा बरवै छन्द उनके प्रिय छन्द हैं। कुछ उदाहरण देखिए–

- **कवित्त–** **"एक दिन देवदास बन बीच धनी हुई**
  किरणों के जाल में से साथ तेरे घूमा था
  केनिल प्रभात पर छाये इन्द्रधनु की
  फुहार तले भोर-सा प्रमत्त मन झूमा था।"
- **बरवै–** **"मधु, मंजरि, अलि पिकर व सुमन समीर**
  नव बसंत क्या जाने मेरी पीर।"

(ii) मिश्रित छन्द–अन्यत्र कवि ने परम्परागत छन्दों के आकार और यति आदि में परिवर्तन करके मिश्रित छन्दों का निर्माण किया है। ऐसा करने से कवि ने परम्परागत छन्दों का भी मान किया है और नवीन छन्दों का भी। 'अज्ञेय' ने एक ऐसा छन्द भी गड़ा है जिसकी प्रत्येक पंक्ति में मात्रा बढ़ती चली गई है। यथा–

कुछ नये कुछ पुराने मिले
कुछ अपने कुछ विराने मिले
कुछ दिखावे कुछ बहाने मिले
कुछ अकड़ू कुछ मुंह चुराने मिले
कुछ घुंटे-मंजे सफेद पोश मिले
कुछ दई मारे खाना बदोश मिले।

(iii) मुक्त छन्द–उपर्युक्त परम्परागत प्रयोगों के अतिरिक्त कविवर 'अज्ञेय' ने कुछ नवीन छन्दों का भी प्रयोग किया है। डॉ० केदार शर्मा ने उनके ऐसे छन्दों को परिबद्ध और मुक्त दो वर्गों में विभक्त किया है। परिबद्ध छन्द तो वे छन्द हैं जिनमें किसी न किसी नियम का पालन किया गया है। लेकिन ऐसे छन्दों का उल्लेख छन्द शास्त्र में कहीं पर नहीं मिलता। ये मुख्यतया 35, 40, 49 मात्राओं के छन्द हैं।

इसके प्रत्येक चरण में 40-40 मात्राएं हैं। अन्त में तीन गुरु हैं। लेकिन फिर भी 'अज्ञेय' अपने मुक्त छन्दों के लिए सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। इस सन्दर्भ में 'अज्ञेय' ने लिखा भी है–**"आज की कविता बोलचाल की अन्विति मांगती है पर गद्य की लय नहीं मांगती। तुक-ताल का बन्धन उसने अनाव्यन्तिक मान लिया है पर लय को वह उक्ति का भिन्न अंग मानती है।"** इसका मतलब यह है कि 'अज्ञेय' कविता के लिए संगीत अर्थात् लयात्मकता को आवश्यक मानते थे। यथा–

"मैंने देखा : एक बूंद
मैंने देखा
एक बूंद सहसा
उछली सागर के झाग से–
रंगी गयी क्षण-भर
ढलते सूरज की आग से।"

(8) अलंकार प्रयोग–'अज्ञेय' ने अलंकारों के माध्यम से अपनी सौन्दर्यानुभूति को अभिव्यक्त करने में विशेष सफलता प्राप्त की है। उपमा 'अज्ञेय' का सर्वाधिक प्रिय अलंकार है। इसके साथ-साथ उन्होंने रूपक, मानवीकरण, उत्प्रेक्षा, रूपकातिश्योक्ति, विशेषण-विपर्यय आदि अलंकारों का भी सफल प्रयोग किया है। परन्तु 'अज्ञेय' के लिए अलंकार साध्य नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति के साधन हैं। अतः उन्होंने अलंकारों का पूर्णतया स्वाभाविक तथा मनोवैज्ञानिक प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखिए–

रूपक– **भोर का बावरा अहेरी**
पहले बिछाता है आलोक की
लाल लाल कनियाँ।

मानवीकरण–

पति सेवा रत साँझ
उझकता देख पराया चांद
लला कर ओट हो गई।

(9) लाक्षणिक प्रयोग–'अज्ञेय' की काव्य भाषा में लाक्षणिकता का भरपूर प्रयोग हुआ है। इस संदर्भ में वे अक्सर मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग तो करते हैं, साथ ही वे ऐसी पदावली का प्रयोग करते हैं जो अभिधेयार्थ से भिन्न लक्ष्यार्थ को द्योतित करती हैं, जैसे–

नभ में एक मचा दे हलचल,
× × × × ×
धमनियों में उमड़ आई है लहू की धार,
× × × × ×
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच
× × × × ×

आदि मुहावरों में कवि ने लाक्षणिक प्रयोग किया है।

(10) प्रतीक विधान–आधुनिक कविता अपने प्रतीकों के लिए प्रसिद्ध है। प्रयोगवाद के प्रायः सभी कवियों ने अपनी काव्य रचनाओं का खुलकर प्रयोग किया है। 'अज्ञेय' ने भी अपनी कविता में ऐसे अनेक प्रतीकों का प्रयोग किया है जो अपने सहज अर्थ को खोकर केवल निर्दिष्ट अर्थ की प्रतीति करवाते हैं। **डॉ० द्वारिका प्रसाद सक्सेना** ने उचित ही लिखा है–**"इन प्रतीकों में नवीनता के साथ-साथ विविधता है, मार्मिकता के साथ-साथ स्वाभाविकता है तथा भौतिकता के साथ-साथ आध्यात्मिकता है।"** 'अज्ञेय' ने प्रायः तीन प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग किया है। पहले वर्ग में वे प्रतीक लिए जा सकते हैं जिनका सम्बन्ध कवि के निजी जीवन से है। उदाहरण के रूप में, **'हारिल पक्षी'** कवि की दुर्दम सृजन शक्ति का प्रतीक है, लेकिन हारिल पक्षी की चोंच में दबा तिनका सृजन के यत् किंचित् साधन का प्रतीक है।

'नन्हीं शिखा' यदि वासना का प्रतीक है तो दीप ईर्ष्यापूर्ण अस्मिता का प्रतीक है। दूसरे वर्ग में वे प्रतीक आते हैं जिनका सम्बन्ध कवि की निजी प्रेम-भावना से है। इनको प्रेम सम्बन्धी प्रतीक भी कहा जा सकता है। ज्वर, कसमसाता रुद्र सागर, कुमुद, झील का निर्जन किनारा, उदास साँझ, सूनी-सी सांझ आदि कुछ ऐसे प्रतीक हैं जो प्रेम की विभिन्न स्थितियों को संकेतित करते हैं, जैसे 'सूनी-सी सांझ' असफल प्रेमिका का प्रतीक माना गया है। तीसरी कोटि में 'अज्ञेय' के वे प्रतीक समाहित किए जा सकते हैं, जिनका सम्बन्ध कवि की ऐतिहासिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक विचारधारा से है। उदाहरण के रूप में, एकलव्य यदि आज के क्रूर मानव का प्रतीक है तो द्रोणाचार्य आधुनिक राजनीतिज्ञ का प्रतीक हैं।

(11) बिम्ब विधान–'अज्ञेय' जी की कविता अपने बिम्बों के लिए अत्यधिक प्रसिद्ध है। उन्होंने बिम्बों के द्वारा अपनी अभिव्यक्ति को न केवल मनोहारी बनाया है बल्कि अपने कथनों को अधिकाधिक रोचक और मनोरंजक भी बनाया है। 'अज्ञेय' का सम्पूर्ण काव्य बिम्ब विधान की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। जब भी कवि प्रकृति चित्रण या वातावरण चित्रण करता है तो वह प्रायः बिम्बों का सहारा लेता है। तदर्थ 'अज्ञेय' जी इस प्रकार के शब्दों का चित्रण करते हैं जो वर्ण्य-विषय का चित्र पाठकों के समक्ष उपस्थित कर देता है। 'अज्ञेय' के काव्य में इस प्रकार के अनेक बिम्ब देखे जा सकते हैं। यथा–

"उड़ गई चिड़िया
काँपी, फिर
थिर
हो गई पतली।"

कवि ने स्पर्श, गंध, ध्वनि, आस्वाद्य, मानस, अलंकृत तथा यौन बिम्बों का अधिकाधिक प्रयोग किया है।

(1) स्पर्श बिंब–

"नर्तिता अपवर्ग की अप्सरा-सी वह
शिखा मेरा भाल छूती है
वक्तृ छूती है

आलोचनात्मक प्रश्न

1. नागार्जुन का काव्य-वैशिष्ट्य

1. नागार्जुन के काव्य-वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।

अथवा

बाबा नागार्जुन के काव्य के आधार पर उनकी काव्यगत विशेषताएं बताइए।

अथवा

नागार्जुन की काव्यगत प्रवृत्तियों को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–नागार्जुन : काव्यगत-वैशिष्ट्य–यथार्थवादी लोक चेतना एवं प्रगतिवाद के कवि के रूप में नागार्जुन हिन्दी साहित्य के प्रमुख कवियों में से एक है। कवि की हैसियत से नागार्जुन प्रगतिशील और एक हद तक प्रयोगशील भी हैं। उनकी अनेक कविताएँ प्रगति और प्रयोग का एक मणि-कांचन सहयोग के कारण विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी है। नागार्जुन अपने चुटीले व्यंग्य के लिए प्रसिद्ध हैं। इसलिए उनकी काव्य रचनाएँ एक अलग पहचान लिए हुए हैं। कहीं-कहीं इन्होंने सरस, मार्मिक प्रकृति का वर्णन भी किया है। वे मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होने के कारण जनवादी कवि कहे जाते हैं इसका प्रमुख कारण यह है कि उनके काव्य में यदि एक ओर दलितों, शोषितों और उपेक्षितों के प्रति सहानुभूति की भावना है तो दूसरी ओर पूँजीपतियों के प्रति आक्रोश भी है। उनकी असंख्य कविताएँ वर्ग-वैषम्य का उद्‌घाटन करती हैं। उनकी काव्य रचनाओं का फलक अत्यधिक व्यापक और विस्तृत है। लगभग 50 वर्षों तक वे साहित्य सृजन में जुटे रहे। उन्होंने राजनीतिक कविताओं में सामन्तों पूँजीपतियों और भ्रष्ट राजनेताओं पर कटु कटाक्ष किए हैं।

कविवर नागार्जुन अनेक महापुरुषों तथा साहित्यकारों के सम्पर्क में रहे लेकिन राहुल सांकृत्यायन तथा महाकवि निराला ने उनको अत्यधिक प्रभावित किया। राजनैतिक दृष्टि से वे नागार्जुन से प्रभावित हुए हैं तथा उनकी साहित्यिक भावधारा पर निराला का प्रभाव देखा जा सकता है। संभवतः यही कारण है कि साम्यवाद और यथार्थवाद को मान्यता देने के लिए साहित्य का सृजन किया। उनकी असंख्य काव्यगत विशेषताएँ हैं जिनका विवेचन इस प्रकार से है–

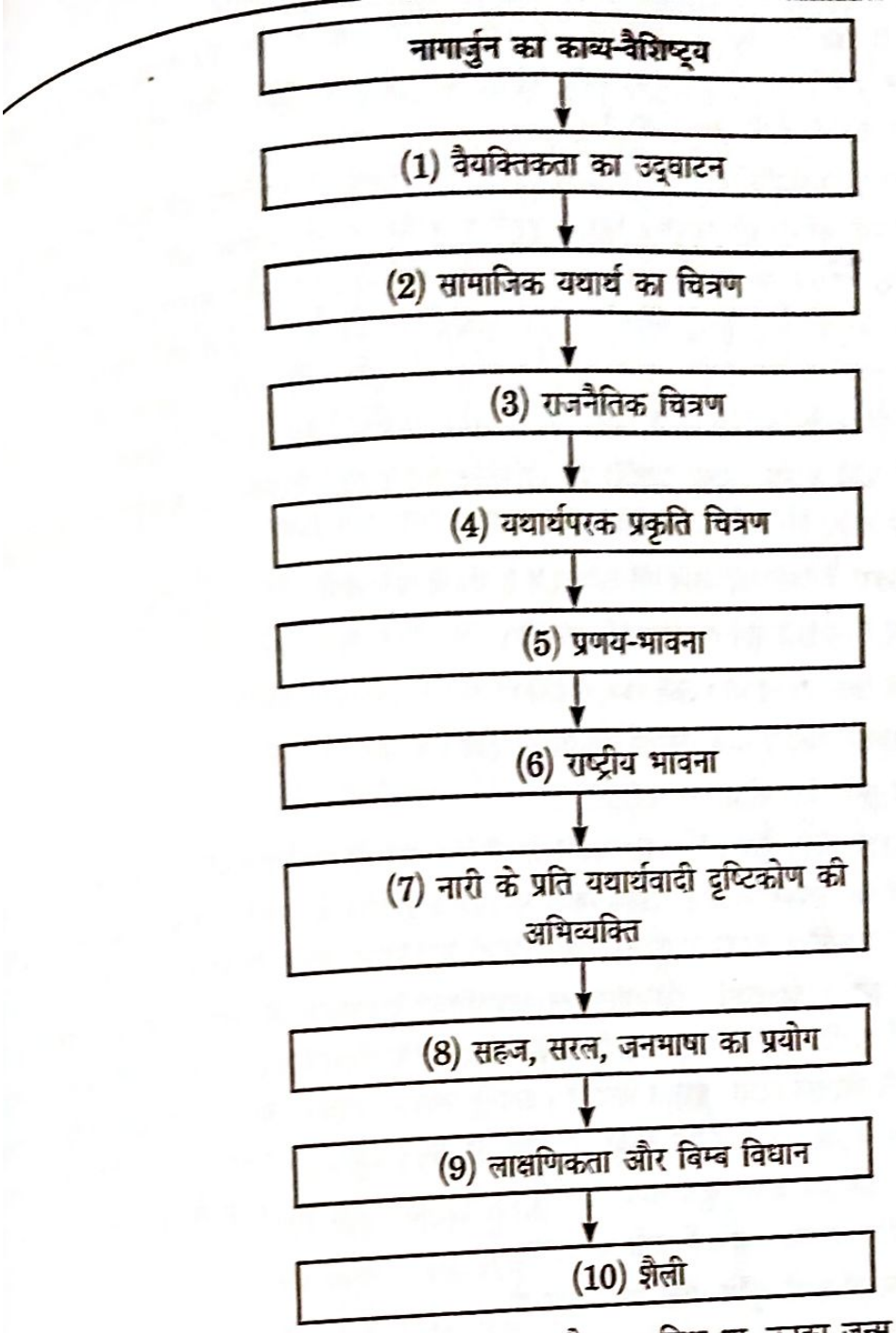

1. **वैयक्तिकता का उद्घाटन**–नागार्जुन का मूल नाम वैद्यनाथ मिश्र था, उनका जन्म एक गरीब परिवार में हुआ, परन्तु ...नकी बाल्यावस्था ने उनको संघर्ष की शक्ति प्रदान की। आरम्भ में वे यात्री उपनाम से लिखते थे लेकिन जब से बौद्ध ...के सम्पर्क में आए तब से अपना नाम नागार्जुन रख लिया। उनका यही उपनाम ही उनकी पहचान बन गई। नागार्जुन ने ...नी कविताओं में भोगे हुए अनुभव और यथार्थ को बड़ी सच्चाई के साथ व्यक्त किया है। उनकी काव्य रचनाओं में कहीं-कहीं ...क्तिक अनुभूतियाँ उभर कर हमारे सामने आती हैं। 'जनता की आवाज' नामक कविता में कवि ने वैयक्तिक अनुभूति को ...बयान करते हुए लिखा है–

"पैदा हुआ था मैं
दीन-हीन अपठित किसी कृषक-कुल में
आ रहा हूँ पीता अभाव का आसव ठेठ बचपन से
कवि मैं हूँ दबी हुई दूब का
जीवन गुजरता प्रतिपल संघर्ष में।"

इसमें दो मत नहीं हो सकते कि जीवन के कटु सत्यों, अभावों और आर्थिक संकटों ने ही उनको प्रगतिवाद के प्रति आकर्षित ...किया, आगे चलकर तो वे पूर्णतया मार्क्सवाद के ही गीत गाने लगे। जनता की आवाज नागार्जुन की आत्म-कथ्य मूलक कविता ...है तथा इसमें उन्होंने अपने जीवन की झाँकी प्रस्तुत की है। वे स्पष्ट करते हैं कि वे स्वयं 'दबी हुई दूब' के कवि हैं और उनके

जीवन का प्रत्येक क्षण संघर्षों का सामना कर रहा है। वे प्रायः शोषितों, सर्वहारा तथा दलितों की व्यथा-कथा को अपनी काव्य रचनाओं में अभिव्यक्त करते हैं, परन्तु हमें यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि वे स्वयं ही एक दलित और शोषित व्यक्ति थे और उन्होंने अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को ही वाणी प्रदान की है।

2. सामाजिक यथार्थ का चित्रण–नागार्जुन ने समाज के अभावग्रस्त और दलितों के आर्तनाद को सुना था, उन्होंने मध्य वर्ग की समस्याओं को पहचाना और उनकी बेचैनी को अनुभव किया। इसलिए वे समाज की आर्थिक और सामाजिक विसंगतियों के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हैं। उनका विचार था कि सेठ, साहूकार, जमींदार सामन्त-शाही और नौकरशाही जन शोषण के लिए जिम्मेदार हैं। जब तक इस वर्ग पर लगाम नहीं लगाई जाती तब तक शोषण व्यवस्था को समाप्त नहीं किया जा सकता। कवि ने अनेक स्थलों पर वर्ग-वैषम्य का उद्घाटन किया है। 'पैसा चहक रहा' नामक कविता में कवि ने रहीसों की शान-शौकत और ऐश्वर्यमय जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। '26 जनवरी' तथा '15 अगस्त' नामक कविताओं में वे आर्थिक विषमता का वर्णन करते हैं। 'लक्ष्मी' नामक कविता में कवि ने महल और झोंपड़ी को आमने-सामने रखकर बेरोजगारी, मजदूरों की छंटनी और ऋण व्यवस्था जैसी समस्याओं पर प्रकाश डाला है। कवि कहता भी है–

"बेकार है जनबल, हाथों पर चल रही है छंटनी की आरी
ओर है न छोर है। अपव्यय का जोर है।
कब तक चलेगा ऋण कब तक उधारी।
झुकाकर व्यथित माथ, खाली मन खाली हाथ।
पूजे तुम्हें कैसे कोटि नर-नारी।"

नागार्जुन ने कुछ ऐसे चित्र प्रस्तुत किए हैं जिन्हें पढ़कर शोषितों के प्रति पाठकों की सहानुभूति उत्पन्न हो जाती है। इसके साथ-साथ शोषक वर्ग के प्रति घृणा भी उत्पन्न होती है। इस प्रकार सामाजिक यथार्थ के असंख्य चित्र उनके काव्य में देखे जा सकते हैं। कवि ने गरीब, शोषित और पीड़ित जनता के दुःखों तथा अभावों का यथार्थ वर्णन किया है।

3. राजनैतिक चित्रण–पहले बताया जा चुका है कि नागार्जुन राजनैतिक विचारधारा के लिए राहुल सांकृत्यायन के ऋणी हैं लेकिन हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि राजनीति के क्षेत्र में उनका चिंतन बड़ा ही गंभीर है। राजनीति के अनेक विषयों पर कवि ने बड़ी निर्भीकता के साथ अपने मौलिक विचार प्रस्तुत किए हैं। अपनी 'स्वदेशी शासक' नामक कविता में कवि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति पर प्रश्न चिह्न लगाया है। कवि का कथन है कि शहीदों ने व्यर्थ ही अपने प्राणों का उत्सर्ग किया और देश को आजाद कराया, क्योंकि स्वतन्त्रता प्राप्ति के फल को केवल कुछ लोग ही भोग रहे हैं। एक स्थल पर वे कहते भी हैं–

"पंडित जी जाने वाले हैं रानी के दरबार में
अपने ही हाथों गूँथेंगे मोती उसके हार में
मनमाने डुबकी लगाएँगे वहाँ टेम्स की धार में
दिल-दिमाग को पेश करेंगे, अब की वह उपहार में।"

'आओ रानी हम ढोएंगे पालकी' नामक कविता में कवि ने नेहरु जी की विदेश नीति और बुर्जुआ नीति को बेनकाब किया है। कवि का विचार है कि प्रधानमंत्री बनने के बाद भी जवाहर लाल नेहरु ब्रिटिश सरकार का ही समर्थन करते रहे। वस्तुतः नागार्जुन के राजनैतिक विचार उनके साहित्यिक विचारों से जुड़े हुए हैं। इस सन्दर्भ में **डॉ. विष्णु प्रभाकर** ने लिखा भी है–**"इसमें सन्देह नहीं है कि बाबा राजनीति में अत्यन्त डूबे हैं। आन्दोलन, प्रदर्शन, जेल कुछ भी नहीं छूटा उनसे, उसी को लेकर उनका व्यक्तित्व घोर रूप से विवादास्पद हो उठा है।"** नागार्जुन के राजनैतिक दृष्टिकोण के बारे में **डॉ. जगन्नाथ पंडित** लिखते हैं–**"बाबा आजादी के बाद के हिन्दी के सबसे बड़े राजनीतिक कवि हैं तथा उन्होंने भारतीय समाज और राजनीति की विकासमान तथा ह्रासमान स्थितियों को रेखांकित किया है।"**

'तीनों बंदर बापू के' नामक कविता में कवि ने स्पष्ट किया है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् गाँधी जी के नाम पर सत्ता प्राप्त करने वाले राजनीतिज्ञों और सर्वोदय समाज सेवकों ने प्रत्येक दृष्टि से राष्ट्र का शोषण किया है। प्रायः सभी कांग्रेसी नेता अपना-अपना घर भरने में लगे रहे। वे एक ओर पूँजीपतियों का हित साधन करते हैं और दूसरी ओर सत्य, अहिंसा के नाम पर जनता को मूर्ख बनाते हैं। वे दुनिया और जहान को मूंड रहे हैं। खुद अच्छा खा-पी रहे हैं और जनता का शोषण कर रहे हैं।

कवि लिखता भी है–

"मूंड रहे दुनिया जहान की तीनों बंदर बापू के
चिढ़ा रहे हैं आसमान को तीनों बंदर बापू के
करे रात-दिन दूर हवाई तीनों बंदर बापू के
बदल-बदल कर चखें मलाई तीनों बंदर बापू के।"

4. यथार्थपरक प्रकृति वर्णन–प्रगतिवादी कवि होते हुए भी नागार्जुन का प्रकृति के प्रति अत्यधिक प्रेम था, लेकिन उनका प्रकृति वर्णन काल्पनिक न होकर पूर्ण तथा यथार्थ परक है। कवि के प्रकृति चित्रण में न कल्पना की अतिशयता है और न ही कृत्रिमता है। उनका प्रकृति वर्णन सहानुभूति और यथार्थ पर आधारित है। 'बादल को घिरते देखा है' नामक कविता में कवि ने प्रकृति का जो चित्रण किया है वह पूर्णतया यथार्थ पर पड़ा हुआ है।

"कहाँ गया धनपति कुबेर वह, कहाँ गई उसकी वह अलका
नहीं ठिकाना कालिदास के, व्योम प्रवाही गंगाजल का
ढूँढ़ा बहुत परन्तु लगा क्या, मेघदूत का पता कहीं पर,
कौन बताए वह छायामय बरस पड़ा होगा न यहीं पर,
जाने दो वह कवि कल्पित था, मैंने तो भीषण जाड़ों में
नभचुम्बी कैलाश शीर्ष पर, महामेघ को झंझानिल से।
गरज-गरज भिड़ते देखा है, बादल को घिरते देखा है।

इसी प्रकार से 'शरद पूर्णिमा' तथा 'झूक आए कजरारे बादल' कुछ अन्य ऐसी कविताएँ हैं जिनमें नागार्जुन ने प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया है। वस्तुतः प्रकृति के प्रति कवि की गहरी आत्मीयता थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नागार्जुन ने प्रकृति सम्बन्धी जितना भी चित्रण किया है, वह समूचा यथार्थ परक है, लेकिन कुछ स्थलों पर उनका प्रकृति वर्णन बड़ा ही आकर्षक, मनोहर और मन को लुभाने वाला है। 'बादल को घिरते देखा' है नामक कविता में वे लिखते भी है–

"रजत-रचित मणि खचित कलामय
पान पात्र द्राक्षासव पूरित
रखे सामने अपने-अपने
लोहित चंदन की त्रिपटी पर,
नरम निदाग बाल-कस्तूरी
मृगछालों पर पालथी मारे
मदिरारुण आँखें वाले उन
उन्मद किन्नर-किन्नरियों की
मृदुल मनोरम अंगुलियों को
वंशी पर घिरते देखा है
बादल को घिरते देखा है।"

5. प्रणय-भावना–कविवर नागार्जुन केवल आक्रोश और विद्रोह के कवि ही नहीं है। उन्होंने प्रेम-विरह की रचनाएँ भी लिखी हैं, लेकिन उनकी प्रणय भावना निश्छल, साहित्यिक, दिव्य तथा संयत हैं। उन्होंने प्रायः प्रेम के अलौकिक, अशरीरी तथा पवित्र प्रेम का चित्रण किया है। उनकी प्रेम भावना में संयोग वर्णन का उदाहरण देखिए–

"बहुल दिनों के बाद
अब की मैंने जी भर भोगे
गंध-रूप-रस-शब्द-स्पर्श सब साथ-साथ इस भू पर।"

उनकी 'प्रत्यावर्तन' नामक कविता दाम्पत्य प्रेम की रचना है। इसलिए 'तू याद आए' नामक कविता में कवि अपनी प्रियतमा को प्रेरक शक्ति मानता है। यही नहीं कवि उसे बुढ़ापे की प्रेरक और जीवनदायिनी शक्ति भी कहता है। कुछ स्थलों पर वे अपनी प्रेमिका की ज्योत की छाक, छरहरी टहनी और भावों की तलैया कहता है। वस्तुतः नागार्जुन की प्रणय भावना प्रक्रिया के प्रेम पर आधारित नहीं है। वह केवल स्वकीया से ही सम्बन्धित है। एक स्थल पर वह अपनी पत्नी के सामने अपने दोषों को स्वीकारता है और कहता है–

"मर्जना कर दोष मेरे बहुत कुछ अविवाहित किया है
बहुत कुछ अनुचित किया है, क्षमा कर दे मुदित मन से
क्योंकि तू सर्वसहा है।"

इसी प्रकार से जहाँ के कवि ने वियोग का वर्णन किया है वहाँ उनके भाव मानों हृदय से विस्तृत प्रतीत होते हैं।

"तुम नहीं हो पास,
मैं तो तरसता हूँ प्यार के दो बोल सुनने के लिए।"

प्रेम के बारे में नागार्जुन का पूर्णतया यथार्थपरक दृष्टिकोण है। कवि ने उच्च वर्ग के एकान्तिक प्रेम का तिरस्कार किया है। उन्हें केवल वही प्रेम मान्य है जो व्यक्ति को जीवन में संघर्ष की प्रेरणा देता है।

6. राष्ट्रीय भावना–कविवर नागार्जुन ने अपनी कविताओं में देश प्रेम की भावना का भी मार्मिक चित्रण किया है। उनके मन और प्राणों में राष्ट्र प्रेम निवास करता है। उनका विचार है कि लेखक की पहली वफादारी अपने देश के प्रति होनी चाहिए। कवि स्वतन्त्र भारत की दीन-हीन और दयनीय दशा के बारे में लिखता भी है–

"सताती तुमको न क्या अपने वतन की पीर
हाय! नाहक देश माता के दृगों से बह रहा है नीर।"

कवि को इस बात का अत्यधिक दुःख है कि एक समय सोने की चिड़िया कहलाने वाला हमारा देश आज आर्थिक दृष्टि से पूर्णतया खोखला हो चुका है। अमीर-अमीर होता जा रहा है और गरीब की गरीबी बढ़ती जा रही है। जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो उसकी सेनाओं ने हिमालय, नेपाल और लद्दाख की धरती को अपने पैरों तले कुचला तो कवि की राष्ट्रीय भावना उद्दीप्त हो उठी। कवि के मन में विचार आया कि वह भी बन्दूक चलाना सीख ले और फौलाद गलाकर मार्ग अस्त्रों का निर्माण करे। कवि कह उठता है–

"जी करता है सीखूँ मैं बन्दूक चलाना
जी करता है सीखूँ मैं फौलाद गलाना
जी करता है जन-जन में भड़काऊँ शोले।
जी करता है नेघा पहुँचुँ दागू गोले।"

नागार्जुन की राष्ट्रीय चेतना के बारे में **डॉ. श्याम कान्त वर्मा** ने उचित ही लिखा है–**"नागार्जुन अपने देश की चप्पा-चप्पा भूमि से प्यार करते हैं। देश के लिए मर-मिटने वालों के प्रति उनके मन में श्रद्धा थी। गाँधी जी को गोली मारी गयी तो कवि रो पड़ा। राष्ट्रपिता का महामौन उसके मन को रह-रहकर कुरेदने लगा, पितृ-वियोग की व्यथा से वह भर उठा। चीन और पाकिस्तान के आक्रमण पर उसने 'माओ' को गाली दी और अय्यूब के हिटलर गुमान को ललकार कर दुश्मनों को सावधान रहने की धमकी दी।"**

वस्तुतः नागार्जुन ने अन्य प्रगतिवादी कवियों के समान राष्ट्रीय भावना को हमेशा प्रमुखता प्रदान की है। कभी-कभी तो कवि राष्ट्रीयता की सीमाओं को पार करके अन्तर्राष्ट्रीयता की सीमाओं में प्रवेश करता दिखाई देता है। फिर भी कवि नागार्जुन की राष्ट्रीय भावना पर लिखी गई कविताएँ पूर्णतया यथार्थ पर आधारित हैं।

7. नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति–कविवर नागार्जुन एक सच्चे प्रगतिवादी कवि थे। उन्होंने मजदूर और किसान के समान नारी को भी शोषित व्यक्ति स्वीकार किया है। नारी युगों-युगों से सामन्तवादी पुरुष दासता का शिकारी बनी हुई शृंखलाओं में कैद है। नागार्जुन ने नारी को एक मानवी के रूप में चित्रित किया है। उन्होंने शोषित तथा पीड़ित नारी की समस्याओं को उजागर करके उसे एक नवीन दृष्टि प्रदान की है। कवि नारी को मात्र भोग्य नहीं मानता वह उसे पुरुष के समकक्ष स्थान दिलाना चाहता है, बल्कि नारी जागरण उनके काव्य का प्रधान स्वर है। नागार्जुन ने जहाँ एक ओर पर्दा प्रथा और

बाल विवाह को अनुचित सिद्ध किया है वहाँ दूसरी ओर अनमेल विवाह का विरोध भी किया है। कुछ स्थलों पर वे विधवा विवाह का समर्थन भी करते हैं। वे इस बात पर बल देते हैं कि नारी के सुखद और सफल दाम्पत्य जीवन के लिए समवयस्क पति का होना अनिवार्य है। एक स्थल पर अनमेल विवाह का विरोध करते हुए लिखते हैं–

'क्यों बूढ़े को करने लगी पसन्द?
क्या अनमेल समागम है अनिवार्य?
सुर समाज की बुद्धि हो गई है भ्रष्ट करते हैं कैसे-कैसे खिलवाड़
बस यों ही ये ब्रह्म, विष्णु, महेश।'

पुनः कवि ने नारी के मातृत्व रूप को अधिक महत्त्व प्रदान किया है। उनका विचार है कि मातृत्व ही नारी का चरमोत्कर्ष है। इसके साथ-साथ उनका यह भी कहना है कि नारी और पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं। नारी के बिना पुरुष अधूरा है और पुरुष के बिना नारी। पुनः वे नारी के परम्परागत रूप का ही समर्थन करते हैं। और आधुनिक स्वच्छन्द प्रवृत्ति की प्रकृति का विरोध करते हैं। कहीं-कहीं उन्होंने आधुनिक नारी पर कटु कटाक्ष भी किए हैं। अतः उनका नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण पूर्णतया स्वस्थ और प्रगतिशील है। वे नारी को समाज में सम्मानजनक स्थान दिलाना चाहते थे और आजीवन इसके लिए प्रयास करते रहे।

8. सहज, सरल, जनभाषा का प्रयोग–कविवर नागार्जुन ने अपनी काव्य रचनाओं में प्रायः सहज, सरल और सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। इसलिए वे जनवादी कवि कहे जाते हैं। वे न तो भाषा की सजावट और न बनावट में विश्वास करते हैं और न ही अलंकार प्रयोग में अधिक कायल थे। उन्होंने सर्वत्र शब्दों की सादगी पर बल दिया है। यद्यपि कुछ स्थलों पर उन्होंने संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का भी प्रयोग किया है लेकिन अन्यत्र वे उर्दू, बंगला, मैथिली तथा अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी करते दिखाई देते हैं। यथा–

(i) **संस्कृत निष्ठ भाषा**–**"रजत-रचित मणि खचित कलामय पान-मात्र द्राक्षासव पूरित"**

(ii) **उर्दू प्रयोग**– **"हम सफर को सलाम, हम सफर को सलाम"**

× × × × × ×

"फनकार को सलाम, सखुनवर को सलाम।"

यदि इन अपवादों को छोड़ दें तो अन्य स्थलों पर कवि ने प्रायः सामान्य बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग किया है। इस प्रकार की सरल भाषा में भी वे व्यंग्य करना नहीं चूकते, 'तीनों बंदर बापू के' नामक कविता से एक उदाहरण देखिए–

"बापू के भी ताऊ निकले तीनों बन्दर बापू के।
सरल सूत्र उलझाऊ निकले तीनों बन्दर बापू के।
सचमुच जीवन दानी निकले तीनों बन्दर बापू के।
ज्ञानी निकले, ध्यानी निकले तीनों बन्दर बापू के।
जल-थल-गगन-बिहारी निकले तीनों बन्दर बापू के।
लीला के गिरधारी निकले तीनों बन्दर बापू के।"

नागार्जुन की भाषा आम आदमी की धड़कनों से जुड़ी हुई है। इस सन्दर्भ में **डॉ. शिवकुमार मिश्र** लिखते हैं–**"जन सामान्य की भाषा भी, पंडितों तथा काव्य-रसिकों की भाषा भी ··· सारगर्भित उद्धात भाषा को छोड़ दिया जाए तो सामान्यतः उन्होंने सरल और सादी भाषा का ही प्रयोग किया है।"** यद्यपि कवि ने मुहावरों तथा लोकोक्तियों का प्रयोग किया है, लेकिन व्यंग्यत्मकता उनकी भाषा की प्रमुख विशेषता है। वे जो कुछ भी कहते हैं सीधी-सरल भाषा में कहते हैं। अतः अकृत्रिमता उनकी भाषा की प्रमुख विशेषता है। यही कारण है कि उनकी काव्य रचनाओं में अलंकार न के बराबर हैं।

9. लाक्षणिकता और बिम्ब विधान–लाक्षणिकता और बिम्ब विधान उनकी काव्य भाषा में सहज रूप से देखा जा सकता है। यद्यपि उन्होंने अलंकारों का अल्प मात्रा में प्रयोग किया है लेकिन ये अलंकार प्रयोग पूर्णतया स्वाभाविक है।

"बापू के भी ताऊ निकले तीनों बन्दर बापू के,
भले-भले मुँह उगल रहे हैं चीन विरोधी आग।"

जैसे उक्तियों में लक्षणा शक्ति का सफल प्रयोग देखा जा सकता है उसी प्रकार कवि ने दृश्य और श्रृव्य बिम्बों का भी सफल प्रयोग किया है। दृश्य बिम्ब का एक उदाहरण देखिए–

"छोटे-छोटे मोती जैसे अतिशय शीतल वारिकणों को
मानसरोवर के उस स्वर्णिम कमलों पर गिरते देखा है।"

इसी प्रकार से कवि ने अलंकारों का भी स्वाभाविक रूप से प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखिए–

उपमा– **"घिसे हुए पीतल-सी पांडुर पुरु मास की धूप सुहावन।**

रूपक– **"शैवालों की हरी दरी पर"**

मानवीकरण– **"तुंग हिमालय के कन्धों पर"**

10. शैली–नागार्जुन ने अपनी कविताओं में विविध प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। वे प्रायः नाटकीय शैली, उद्‌बोधनात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, सूत्रात्मक शैली, वर्णनात्मक, व्यंग्यात्मक, विचारात्मक, आवृत्ति अथवा प्रश्न शैली का प्रयोग करते हैं। उनकी शैली भी भाषा के अनुसार ही होती है, व्यंग्यात्मक शैली का एक उदाहरण देखिए–

"हमे अंगूठा दिखा रहे हैं तीनों बन्दर बापू के
कैसी हिकमत सिखा रहे हैं तीनों बन्दर बापू के
प्रेम पगे हैं, शहद-सने हैं तीनों बन्दर बापू के
गुरुओं के भी गुरु बने हैं तीनों बन्दर बापू के

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि नागार्जुन मूलतः एक प्रगतिवादी कवि थे। उन्होंने यदि वर्ग-वैषम्य का उद्‌घाटन किया है तो प्रकृति प्रेम और राष्ट्रीय चेतना को आधार बनाकर भी कविताएँ लिखी हैं लेकिन उनकी कविता का प्रधान स्वर व्यंग्यात्मक है जिसके द्वारा वे भ्रष्ट राजनेताओं तथा अवसरवादी पूँजीपतियों के असाध्य गठबन्धन का पर्दाफाश करते हैं। राजनीति भी उनकी कविता में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। चिरकाल से उपेक्षित नारी जाति को भी कवि ने समाज में उचित मान-सम्मान दिलाने का प्रयास किया है। उनकी भाषा यदि आम लोगों की भाषा है तो छन्द भी पूर्णतया मुक्त हैं। भाव अथवा भाषा किसी भी दृष्टि से वे प्राचीन परम्पराओं का पालन करते हुए दिखाई नहीं देते।

◆◆◆

2. यथार्थ चेतना और लोक-दृष्टि

2. "नागार्जुन की काव्य-रचनाओं में यथार्थ-चेतना तथा लोकदृष्टि का प्रभावशाली वर्णन हुआ है"–इस कथन की विवेचना करें।

अथवा

सिद्ध कीजिए कि नागार्जुन की यथार्थ चेतना उनकी लोकदृष्टि से जुड़ी हुई है।

अथवा

नागार्जुन की यथार्थ चेतना के विविध पक्षों को उद्‌घाटित कीजिए।

उत्तर–नागार्जुन के काव्य में यथार्थ चेतना तथा लोक-दृष्टि–नागार्जुन एक घुमक्कड़ी वृत्ति के साहित्यकार थे। राजनीति में उनकी विशेष रुचि थी। यद्यपि सन् 1931 में बीस वर्ष की आयु में इनका विवाह हुआ लेकिन परिवार से इनका संपर्क टूटा सा रहा। वे एक प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे। काव्य के अतिरिक्त उन्होंने उपन्यास, निबन्ध, अनुवाद एवं बाल साहित्य में अपनी लेखनी चलाई। यही नहीं अनुवाद और संपादन में उन्हें विशेष ख्याति प्राप्त हुई। मेघदूत, गीत गोविन्द, गिरिजा पति के गीत आदि उनकी अनुदित कृतियाँ हैं। यायावरी प्रवृत्ति और गरीबी ने नागार्जुन की लेखनी को मानव जीवन के यथार्थ से जोड़ दिया। उनके साहित्यिक व्यक्तित्व पर कबीर, राहुल सांस्कृत्यायन और निराला जैसे साहित्यकारों का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। कविवर नागार्जुन वामपंथी विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित थे। उन्होंने साम्राज्यवादी और पूँजीवादी व्यवस्था का घोर विरोध किया और समाज के उपेक्षित तथा शोषित जनसमूह के प्रति सहानुभूति व्यक्त की। इसी प्रकार भ्रष्टाचार, भाषावाद, बाह्याडम्बर, साम्प्रदायिकता तथा रूढ़ियों के प्रति उन्होंने अपना आक्रोश व्यक्त किया। उनके काव्य में अनुभूति की सच्चाई है। वे भोगे हुए यथार्थ का वर्णन

करते हैं। उनकी रचनाओं में तत्कालीन समाज, लोक जीवन और विविध आन्दोलनों का यथार्थ वर्णन हुआ है। वे ठेठ जन-जीवन और जीवन्त लोकधर्म के संवाहक थे। प्रकृतिशील कवि होने के कारण उनकी कविताओं में कल्पनाओं की उड़ान नहीं है, क्योंकि उनके पैर यथार्थ के काव्य रचनाओं में सामाजिक, राजनैतिक, प्राकृतिक तथा भाषागत यथार्थ चेतना देखने को मिलती है। नागार्जुन की यथार्थ चेतना और लोक-दृष्टि का मूल्यांकन निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर किया जा सकता है–

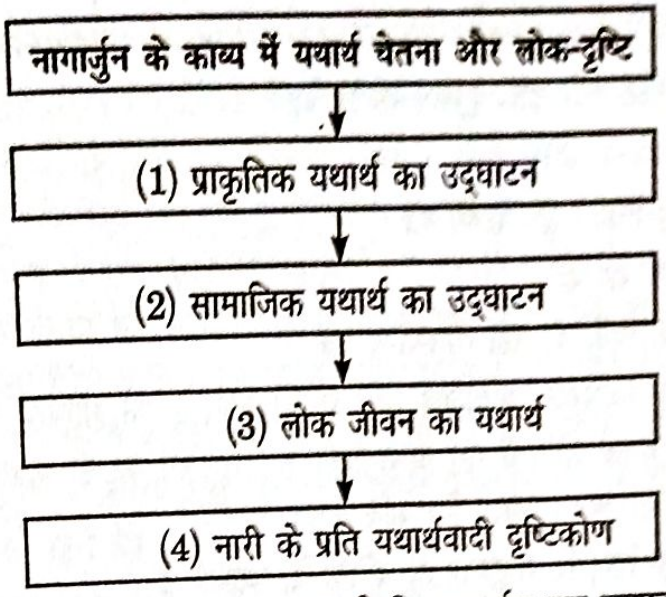

1. प्राकृतिक यथार्थ का उद्‌घाटन–पहले बताया जा चुका है कि नागार्जुन एक घुमक्कड़ी वृत्ति के साहित्यकार थे। उन्होंने पर्याप्त मात्रा में देशाल किया था। विशेषकर वन प्रदेशों तथा ग्रामीण अंचलों में वे खूब घूमे थे। अतः कवि ने अपनी कविताओं में जो प्राकृतिक वर्णन किया है वह कल्पना पर आधारित नहीं है बल्कि यथार्थपरक है। **'बादल को घिरते देखा है'** नामक कविता में कवि ने प्रकृति का यथार्थ वर्णन किया है। यह कविता उनके काव्य संग्रह **'युगधारा'** में संकलित है। अपने तिब्बत प्रवास काल में कवि ने हिमालय पर्वत के अनुपम सौन्दर्य को देखा था। अतः इस कविता में कवि ने प्रकृति की निर्मल तथा निश्छल सुन्दरता का चित्रांकन किया है। इस कविता में कवि केवल हिमालय पर्वत पर उमड़ते-घुमड़ते बादलों का ही वर्णन नहीं करता अपितु हिमालय की घाटी की वनस्पति, वहाँ के पेड़-पौधों आदि का भी यथार्थ वर्णन प्रस्तुत करता है। कालिदास के समान नागार्जुन न तो गगन बिहारी है, न ही कल्पना जीवी। वायवी कल्पना और कृत्रिमता से वे कोसों दूर हैं। एक उदाहरण देखिए–

"कहाँ गया धनपति कुबेर यह कहाँ गई उसकी वह अलका
नहीं ठिकाना कालिदास के। व्योम प्रवाही गंगाजल का,
ढूंढ़ा बहुत परन्तु लगा क्या। मेघदूत का पता कहीं पर
कौन बताए यह छायामय बरस पड़ा होगा न यहीं पर,

नागार्जुन को अपने देश की चप्पा-चप्पा भूमि से प्यार था। कालिदास के **'मेघदूत'** से वे अत्यधिक प्रभावित थे, लेकिन उन्होंने कालिदास के समान कल्पना के आधार पर ही प्रकृति का वर्णन नहीं किया बल्कि जो देखा उसी का यथार्थपरक वर्णन किया। अतः उनका प्रकृति वर्णन अनुभवजन्य है। इसीलिए वे प्रकृति के मनोरम चित्र प्रस्तुत कर पाए हैं। कहीं-कहीं तो वे प्रकृति का इतना सजीव और सुरम्य चित्र प्रस्तुत करते हैं कि पाठक भी आश्चर्यचकित हो जाता है। पहले बताया जा चुका है कि नागार्जुन एक यथार्थ जीवी व्यक्ति थे। अतः उन्होंने छायावादी कवि पंत पर इसलिए कटु प्रहार किया, क्योंकि एक तो वे गगन बिहारी थे और दूसरा वे भाषा दुरुता में विश्वास करते थे। कविवर पंत पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

"कुहासा-सी भाषा, न साँझ की न भोर की।
कलित कलकंठ, विकल वेदनामय गाना।
पौरुष नदारथ स्त्रैण सवा सोलह आना।"

इसी प्रकार से 'शरद पूर्णिमा', झुक आए कजरारे बादल आदि कविताओं में भी नागार्जुन ने प्रकृति का यथार्थपरक वर्णन किया है, लेकिन 'बादल को घिरते हैं' इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ कविता कहीं जा सकती है। एक उदाहरण देखिए–

वेवस अ चकवा-चकई का, वन्द हुआ क्रंदन फिर उनमें
उस महान् सखर के तीरे
शैवालों की हरी दरी पर, प्रणय कलह छिड़ते देखा है।"

2. सामाजिक यथार्थ का उद्घाटन–नागार्जुन ने समाज के निचले तबके के लोगों के आर्तनाद को सुना था। उन्होंने मध्यम वर्ग की समस्याओं को जाना था और उनकी बेचैनी को अनुभव किया था। इसलिए उन्होंने सेठ-साहुकारों, जमींदारों और सामन्ती व्यवस्था की नौकरशाही को जन शोषण के लिए उत्तरदायी ठहराया। इसीलिए संभवतः वे सामाजिक यथार्थ के कवि कहे जा सकते हैं।

अपनी कविता **'खुर्दरे पैर'** में वे रिक्शा चलाने वाले लोगों के जीवन का यथार्थपरक वर्णन करते हैं।

"गुट्ठल घट्ठो वाले कुलिश-कठोर पैर
दे रहे थे गति
खड़-विहीन ढूँठ पैडलों को
चला रहे थे
एक नहीं, दो नहीं तीन-तीन चक्र।"

नागार्जुन ने इस प्रकार के यथार्थपरक सामाजिक चित्र प्रस्तुत किए हैं कि शोषितों के प्रति पाठकों की सहानुभूति स्वतः उत्पन्न हो जाती है। लेकिन कवि केवल शोषितों एवं अभावग्रस्त सर्वहारा वर्ग का ही केवल वर्णन नहीं करता, अपितु वह कुछ स्थलों पर शोषक वर्ग पर भी आक्रोश व्यक्त करता है। कवि कहता है–

"ज़मींदार हैं, साहूकार हैं, बनिया हैं, व्यापारी हैं
अन्दर-अन्दर विकट कसाई बाहर खद्दरधारी हैं।
× × × × × × × × × ×
खादी ने मलमल से अपनी साँठ-गाँठ कर डाली है
बिड़ला, टाटा, डालमिया की तीसों दिन दीवाली है।"

इसी सन्दर्भ में कवि ने वर्ग-वैषम्य का भी वर्णन किया है। उनका विचार है कि सच्ची समाजवादी अर्थव्यवस्था द्वारा ही यह वर्ग-विषमता दूर हो सकती है। एक स्थल पर वे वर्ग-वैषम्य को दूर करने के लिए लिखते भी हैं–

"खेत-मज़दूरों और किसानों में जमीन बँट जाएगी।"
× × × ×

और तब

"सुजला-सुफला के गाएंगे गीत प्रसन्न किसान-मजदूर।"

नागार्जुन की कविता में सामाजिक यथार्थ के अनेक चित्र देखे जा सकते हैं। उन्होंने वर्ग-विषमता का खुलकर उद्घाटन किया है। वे एक ओर यदि पूँजीपतियों की अपार धन सम्पत्ति का वर्णन करते हैं तो दूसरी ओर सर्वहारा वर्ग की दयनीय स्थिति पर भी प्रकाश डालते हैं। समाज के पूँजीपति तथा सुविधाभोगी लोग भोग विलास तथा ऐश्वर्य सम्पन्न जीवन व्यतीत करते हैं। दूसरी ओर शोषित वर्ग झूठे पत्ते चाटकर अपनी क्षुधा को शान्त करने का प्रयास करते हैं। कवि लिखता भी है–

"रेशम की यह चकाचौंध मणिमुक्ता का उद्दीपन
पास-पड़ोस उजागर बिजली लेती अंगड़ाई
थिरक रही है माइक पर उस्तादों की शहनाई
चाट रहे हैं कुछ प्राणी बाहर झूठन के दोने

वर्गीय क्षमता का वर्णन करने के कारण कुछ आलोचक ये भी कहते हैं कि नागार्जुन सही अर्थों में प्रगतिवादी कवि हैं बल्कि प्रगतिवादी कवियों में उनका स्थान धन्य है।

'वेतन योगी टहलुआ नहीं है' नामक कविता में भी कवि ने शोषण के विरुद्ध आवाज उठायी है। वे अनेक स्थलों पर जमींदार, साहूकार और बनिया तथा व्यापारी के शोषण चक्र का पर्दाफाश करते हैं। कवि ने उन गाँधीवादी कांग्रेसियों को आड़े हाथों लिया है, जो गाँधी के नाम पर लोगों को मूर्ख बनाते हैं और शोषण द्वारा अपने घर भरते हैं। इन्हीं लोगों ने पूँजीपतियों के साथ सांठ-गांठ की हुई है।

'तीनों बंदर बापू के' में कवि कहता है–

"सेठों का हित साध रहे हैं तीनों बंदर बापू के
युग पर प्रवचन लाद रहे हैं तीनों बंदर बापू के
सत्य, अहिंसा फांक रहे हैं तीनों बन्दर बापू के
पूंछों से छवि आंक रहे हैं तीनों बंदर बापू के

नागार्जुन ने अपनी काव्य रचनाओं में राजनीतिक यथार्थ का भी बड़ा ही प्रभावशाली वर्णन किया है, क्योंकि कवि का विचार है कि साहित्यकार राजनीति से अलग-थलग नहीं रह सकता। राजनीति कहीं न कहीं साहित्यकार को अवश्य प्रभावित करती है, क्योंकि राजनीति हमारे जीवन का अविभाज्य अंग बन चुकी है। एक स्थल पर कवि स्वयं लिखता है–**"याद रखो, साहित्य केवल आत्म-केन्द्रित आत्म चिन्तन नहीं। न ही वह आराम तलब वर्गों का मनोरंजन मात्र है। उसे राजनीति से अलग नहीं किया जा सकता। साहित्य अगर व्यक्ति और समाज की टकराहटों के संघर्ष का मात्र ब्यौरा नहीं तो वह फिर हमारी राजनीतिक जद्दोजेहद से अछूता भी नहीं, रह भी कैसे सकता है?"** कवि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के राजनीतिक नेताओं को बड़े समीप से देखा था। कवि को लगा कि अधिकांश राजनेता केवल अपने स्वार्थों को पूरा करने में लगे हुए हैं। पाँच वर्षों के पश्चात् वे जनता के समक्ष लम्बे-चौड़े वायदे करते हैं, वोट प्राप्त कर संसद तथा विधानमण्डलों में प्रवेश पा लेते हैं और फिर जनता को दिए हुए वायदों को भूलकर अपने घरों को भरने में लगे रहते हैं।

सच्चाई तो यह है कि नागार्जुन स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के सबसे बड़े राजनीतिक कवि हैं। कवि का विचार था कि हमारे देश की राजनीति ही देश की दुर्दशा का प्रमुख कारण है। जिस क्षेत्र में नागार्जुन का जन्म हुआ था वह बिहार प्रदेश तो राजनीति का सबसे बड़ा गढ़ है। इस प्रदेश ने देश के महान् राजनीतिज्ञों को जन्म दिया लेकिन दुर्भाग्य तो यह है कि पूरा बिहार प्रदेश आज भी पिछड़ा हुआ है। नागार्जुन ने स्वयं अभावग्रस्त जीवन व्यतीत किया और गरीब लोगों के बीच में रहे। उनका स्पष्ट कहना था कि हमारे राजनीतिज्ञ जैसे-तैसे सत्ता को हथियाना चाहते हैं। जन-कल्याण का नारा तो मात्र दिखावा है। यही कारण है कि नागार्जुन ने राजनीतिक घटनाओं तथा चित्रों पर असंख्य कविताएँ लिखीं, यही नहीं उन्होंने भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के प्रति अपना आक्रोश भी व्यक्त किया। 'शासन' नामक कविता में कवि लिखता भी है–

"व्यर्थ हुई साधना, त्याग कुछ काम न आया,
कुछ ही लोगों ने स्वतन्त्रता का फल पाया,
इसीलिए क्या लाठी-गोली के प्रहार हमने थे झेले?
इसीलिए क्या डंडा-बेड़ी डलवाई हाथों-पैरों में।"

नागार्जुन की कविता में राजनैतिक यथार्थ का इतना स्पष्ट वर्णन हुआ है कि पाठक के मन में भी राजनीतिज्ञों के प्रति वितृष्णा उत्पन्न होने लगती है। कवि का स्पष्ट कहना है कि हमारे नेताओं की विदेश नीति भी स्वार्थों से प्रेरित है। मौका मिलने पर कवि नेहरू जी की विदेश नीति की भी कड़ी आलोचना करता है। उनका विचार था कि जवाहर लाल नेहरु की नीति बुजुर्आ नीति थी। वे हमेशा साम्राज्यवादी शक्तियों का साथ देते रहे। 'आओ रानी हम ढोएंगे पालकी' नामक कविता में कवि नेहरु जी की विदेश नीति पर करारा व्यंग्य करता है। कवि का कहना है कि इंग्लैंड एक साम्राज्यवादी देश है। स्वतन्त्र भारत के कन्धों पर अभी भी उसकी पालकी की गुलामी लदी हुई है। कवि लिखता भी है–

"आओ रानी हम ढोएँगे पालकी
यही हुई राय जवाहर लाल की
रफू करेंगे फटे-पुराने जाल की
यही हुई है राय जवाहर लाल की
आओ रानी हम ढोएँगे पालकी।"

कवि का विचार था कि हमारे देश के राजनेताओं को साम्राज्यवादी देशों से बचना चाहिए और समाजवादी देशों के साथ मित्रता स्थापित करनी चाहिए। कवि का विचार था कि पंडित जवाहर लाल नेहरु जैसा महान् नेता भी लम्बे काल तक साम्राज्यवादी देशों का साथ देता रहा। यहाँ तक कि उन्होंने देश के स्वाभिमान और गौरव को भी दाँव पर लगा दिया। जबकि सच्चाई यह है कि रूस जैसे समाजवादी देश ने ही आवश्यकता पड़ने पर भारत का साथ दिया। कहीं-कहीं नागार्जुन द्वारा व्यक्त राजनीतिक

यथार्थ बड़ा ही कटु और स्टीक है। 'खूब फंसे हैं नन्दा जी' नामक कविता में कवि ने राजनीतिक नेताओं के चारित्रिक ह्रास और उनके भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया है। हमारे राजनेता स्वार्थी तथा भ्रष्ट होने के साथ-साथ क्रूर और कुचाली भी हैं। चापलूस लोग इनको पसन्द हैं। देश हित से इन्हें कोई सरोकार नहीं। सत्ता से इन्हें अवश्य प्यार है और उसे पाने के लिए वे कुछ भी कर सकते हैं। आधुनिक मंत्री के चरित्र को उजागर करता हुआ कवि कहता भी है–

"अभी-अभी उस दिन मिनिस्टर आए थे
बत्तीसी दिखलाई थी, वादे दुहराए थे।
भाषा लटपटाई थी नयन शरमाए थे
छपा हुआ भाषण भी नहीं पढ़ पाए थे,
जाते वक्त हाथ जोड़ कैसे मुस्काए थे।"

3. लोक जीवन का यथार्थ–नागार्जुन की यथार्थ चेतना पूर्णतया लोक जीवन से जुड़ी हुई है। वे केवल प्रकृति के सौन्दर्य पर ही मोहित नहीं होते बल्कि कीचड़ और धूल के प्रति भी आत्मीयता प्रदर्शित करते हैं। 'जय हे कीचड़' नामक कविता में कवि की यथार्थवादी दृष्टि देखी जा सकती है। कारण यह है कि नागार्जुन हमेशा गरीब लोगों के मध्य रहे। इसीलिए **डॉ. बच्चन सिंह** ने कहा है कि **"नागार्जुन की चेतना में जनपद अपने सम्पूर्ण भोलेपन और सौन्दर्य में निवास करता है। कीचड़ का स्पर्श भी कवि को ओस के समान शीतलता प्रदान करता है।"** कवि लिखता भी है–

"सरिता के कछार से धँसना तो पड़ेगा ही
कर्दम का तुहिनमय स्पर्श कंपन की पराकाष्ठा
जड़िमा में डूब गया स्पर्श बोध
रंगों में प्रवाहमान रक्त.....जय हे कीचड़, जय हे।"

उन्होंने अपनी कविताओं में प्रकृति को कहीं भी उपदेशिका या दार्शनिक के रूप में प्रस्तुत नहीं किया बल्कि वे मानव जीवन और प्रकृति में समन्वय-सामंजस्य स्थापित करने के आकांक्षी हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि उनका प्रकृति चित्रण काल्पनिक नहीं है बल्कि यथार्थपरक है।

ग्रामीण जीवन और किसानों से कवि का गहरा सम्बन्ध रहा है। इसीलिए उन्होंने अपनी काव्य रचनाओं में किसानों तथा मजदूरों की दुर्व्यवस्था का यथार्थ अंकन किया है। कवि का विचार है कि जमींदारों तथा महाजनों के शोषण के कारण ही किसान तथा मजदूर नरकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। किसानों के पास बीज नहीं है, बैल नहीं है और वर्षा का भी अभाव है। सब कुछ उनके विरुद्ध है।

"बीज नहीं हैं, बैल नहीं हैं वर्षा बिन अकुलाते हैं
नहर रेट बढ़ गया, खेत में पानी नहीं पटाते हैं।
नहीं भूमि में कनका भर दाना उपजा पाते हैं।
पिछला कर्ज चुका न सके, साहू की झिड़की खाते हैं।"

कवि बार-बार दीनों तथा दलितों की दीन-दशा का चित्रण करता है। वस्तुतः नागार्जुन की अधिकांश काव्य रचनाएँ लोक जीवन का ही उद्घाटन करती हैं। कवि ने लोक जीवन में व्याप्त वर्ग-विषमता को उभारने का भरसक प्रयास किया है।

यही नहीं नागार्जुन ने ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों तथा वहाँ के शिक्षकों की दयनीय दशा पर भी समुचित प्रकाश डाला है। 'बहुत दिनों से मिला न वेतन' नामक कविता में कवि ने स्पष्ट किया है कि कैसे गाँव के शिक्षक वेतन न मिलने पर असामयिक मृत्यु का शिकार बन जाते हैं। 'मास्टर' नामक कविता में कवि ने जो भारतीय शिक्षण व्यवस्था का यथार्थ वर्णन किया है वह अपने आप में बेमिसाल है। प्रस्तुत कविता से यह पता चलता है कि किस प्रकार बिहार का लोक जीवन नरक बन चुका है। गाँव के टूटे-फूटे विद्यालय के बच्चे और शिक्षक मन्त्री का स्वागत करने के लिए नगर में जाते हैं लेकिन मंत्री उनकी व्यथा-कथा की ओर कोई ध्यान नहीं देता और अपने विश्राम स्थल पर चला जाता है।

4. नारी के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण–नारी के प्रति भी कवि ने अपना यथार्थवादी दृष्टिकोण व्यक्त किया है। कवि का विचार है कि नारी युगों-युगों से शोषित और पीड़ित रही है। उसे मात्र भोग्य वस्तु ही माना गया। कवियों ने भी उसकी दयनीय

दशा की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। एक सच्चा प्रगतिवादी कवि होने के कारण नागार्जुन ने नारी की व्यथा का यथार्थ वर्णन करने का प्रयास किया है। एक स्थल पर वे कहते भी हैं–

"दासी जीवन बिता रही अब भी नारी समुदाय
तितली या कुतिया अब भी समझी जाती है हाय।"

कवि ने नारी को, एक मानवी के रूप में चित्रित किया है। उन्होंने शोषित और पीड़ित नारी की विभिन्न समस्याओं का उजागर करते हुए उसे एक नवीन दृष्टि प्रदान की है। वह नारी को पुरुष के समकक्ष स्थान दिलाना चाहता है। नारी जागरण तो उनकी कविता का प्रधान स्वर रहा है। नागार्जुन ने जहाँ एक ओर पर्दा-प्रथा और बाल-विवाह को अनुचित सिद्ध किया है वहाँ दूसरी ओर अनमेल विवाह का विरोध भी किया है। विधवा-विवाह के भी वे समर्थक थे। वे हमेशा इस बात पर बल देते रहे कि सुखद और सम्पन्न दाम्पत्य जीवन के लिए नारी को समवयस्क पति मिलना चाहिए, एक स्थल पर अनमेल विवाह का विरोध करते हुए लिखते हैं–

"क्यों बूढ़े को करने लगी पसन्द?
क्या अनमेल समागम है अनिवार्य?
सुर समाज की बुद्धि हो गई है भ्रष्ट करते हैं कैसे-कैसे खिलवाड़
बस यों ही ये ब्रह्म, विष्णु, महेश।"

पुनः कवि ने नारी के मातृत्व रूप को अधिक महत्त्व प्रदान किया है। कवि के विचारानुसार मातृत्व ही नारी का चरमोत्कर्ष है। नारी और पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि पुरुष के बिना नारी अधूरी है तो नारी के बिना पुरुष भी अधूरा है। वे नारी के परम्परागत स्वरूप का ही समर्थन करते हैं और आधुनिक स्वछन्द प्रवृत्ति का विरोध करते हैं।

नारी के बारे में नागार्जुन का दृष्टिकोण स्वस्थ और प्रगतिशील है। वे नारी को समाज में सम्मानजनक स्थान दिलाना चाहते थे और आजीवन इसके लिए प्रयास करते रहे। कवि कल्पना लोक में विचरण करने वाली रूपसियों और सुन्दरियों का चित्रण नहीं करता बल्कि वह आधुनिक फैशन-परस्त नारियों पर करारा व्यंग्य करता है। 'जयति', 'नर वरंजनी', 'विज्ञापन सुन्दरी' नामक आदि कविताओं में कवि ने फैशन-परस्त नारियों का मजाक उड़ाया है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हें कि नागार्जुन ने अपनी काव्य रचनाओं में यथार्थ चेतना और लोक दृष्टि का प्रभावशाली वर्णन किया है। कवि ग्रामीण जनता तथा उसके दुःख-दर्द का जो यथार्थ वर्णन करता है। वह आज के कवियों के लिए चुनौती है, लेकिन इसके लिए वे प्रायः व्यंग्य का प्रयोग करते हैं। नागार्जुन का व्यंग्य सतही न होकर सटीक और धारदार है। उनके व्यंग्य में करुणा, विनोद, भंगिमा तथा वक्रता का अद्‌भूत मिश्रण देखा जा सकता है। 'रामराज्य', 'प्रेत का ब्यान', 'आए दिन बहार के', 'चंदन और पानी', 'दीपक और बाती', 'चौराहे के उस नुक्कड़ पर', 'तालाब और मछलियाँ' आदि कविताओं में कवि ने शिक्षकों की दयनीय स्थिति, फैशन परस्ती, सामाजिक तथा धार्मिक रूढ़ियों, लोक जीवन की विसंगतियों आदि पर करारे व्यंग्य किए हैं।

◆◆◆

3. राजनीतिक दृष्टि

3. नागार्जुन की राजनीतिक दृष्टि का परिचय दीजिए।

अथवा

नागार्जुन की राजनीतिक चेतना पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–नागार्जुन की राजनीतिक दृष्टि अथवा राजनीतिक चेतना–आज राजनीति हमारे जीवन का अविभाज्य अंग बन चुकी है। हमारे जीवन का प्रत्येक पहलू प्रत्यक्षतः अथवा अप्रत्यक्षतः राजनीति से प्रभावित है। आज के राजनेता ही देश को दिशा-दर्शन देते हैं तथा उसके विकास या ह्रास का कारण बनते हैं। हमारे देश में लोकतन्त्रीय शासन-व्यवस्था थी। अतः विभिन्न राजनीतिक दल देश की सत्ता को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते रहते हैं। साहित्यकार भी कहीं न कहीं राजनीति से अवश्य प्रभावित रहता है। कुछ साहित्यकार दल विशेष से जुड़े हुए हैं और उसकी नीतियों का प्रचार भी करते हैं। नागार्जुन आधुनिक युग बोध से जुड़े हुए कवि हैं। वे यह मानते थे कि साहित्यकार राजनीति से अलग-थलग नहीं रह सकता, राजनीति कहीं न कहीं उसे अवश्य प्रभावित

करती है, क्योंकि राजनीति हमारे जीवन का एक आवश्यक अंग बन चुकी है। एक स्थल पर वे लिखते हैं—**"याद रखो, साहित्य केवल आत्म-केन्द्रित आत्म-चिंतन नहीं, न ही वह आराम तलब वर्गों का मनोरंजन मात्र है। उसे राजनीति से अलग नहीं किया जा सकता। साहित्य अगर व्यक्ति और समाज की टकराहटों के संघर्ष का ब्यौरा मात्र नहीं, तो वह फिर हमारी राजनीतिक जद्दोजहद से अछूता भी नहीं, रह भी कैसे सकता है?"** नागार्जुन ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के भारत और उसके राजनेताओं को नजदीक से देखा, कवि को लगा कि हमारे राजनेता अपने स्वार्थों को पूरा करने के लिए जनता को मूर्ख बनाते हैं। उन्हें केवल कुर्सी से मोह है, क्योंकि सत्ता से चिपके रहकर वे जीवन की सुख-सुविधाओं को भोग सकते हैं। उनकी करनी-कथनी में जमीन-आसमान का अन्तर है। वे स्वार्थी, लालची, पतित, लोभी हैं। जनता के धन पर वे ऐश करते हैं इसलिए कवि ने बड़ी निर्भीकता और निष्पक्षता के साथ आज की राजनीति और राजनेताओं पर करारे व्यंग्य किए हैं। विशेषकर नेहरु, मोरार जी देसाई, इन्दिरा गाँधी जैसे राजनेताओं को भी उन्होंने क्षमा नहीं किया। नागार्जुन की राजनीतिक चेतना का विवेचन निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर किया जा सकता है—

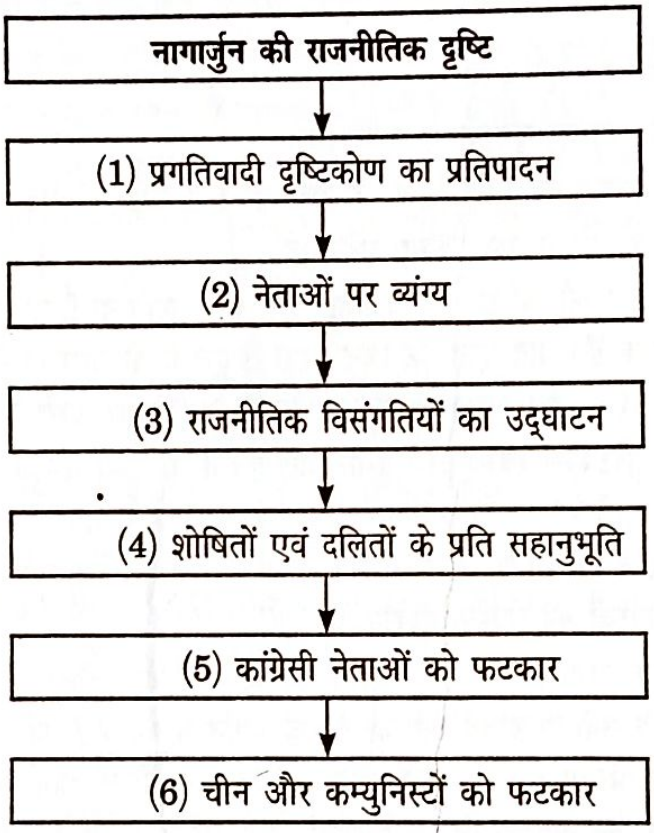

1. प्रगतिवादी दृष्टिकोण का प्रतिपादन—नागार्जुन सच्चे अर्थों में एक प्रगतिवादी कवि थे। उनका प्रगतिवाद किसी दल विशेष से सम्बन्धित नहीं था। वे तो हृदय से महसूस करते थे कि साम्राज्यवादी शक्तियाँ हमेशा गरीबों तथा अभावग्रस्त लोगों का शोषण करती रहती हैं। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि भले हमारे देश ने समाजवादी अर्थव्यवस्था एवं नीतियों को अपनाने का दावा किया हो लेकिन सत्ता प्राप्त कांग्रेस पार्टी हमेशा साम्राज्यवादी नीतियों को क्रियान्वित करती रही है। इसलिए बाबा ने असंख्य राजनीतिक कविताएँ लिखी हैं। सत्य तो यह हैं कि नागार्जुन स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के सबसे बड़े राजनीतिक कवि कहे जा सकते हैं। कवि ने यह स्वयं अनुभव किया कि हमारे देश की राजनीति ही देश की दुर्दशा के लिए उत्तरदायी है। जिस क्षेत्र में उनका जन्म हुआ और जहाँ वे पलकर बड़े हुए वह बिहार प्रान्त राजनीति का सबसे बड़ा गढ़ है। उन्होंने स्वयं अभावग्रस्त जीवन व्यतीत किया और अभावग्रस्त लोगों के मध्य रहे। उनका यह स्पष्ट कहना था कि आपके राजनीतिज्ञ येन-केन-प्राक्रेण गद्दी हथियाना चाहते हैं। जन कल्याण का नारा तो मात्र दिखावा है। ये राजनीतिज्ञ अपने स्वार्थों को पूरा करने के लिए किसी भी सीमा तक गिर सकते हैं। यही कारण है कि नागार्जुन ने राजनीतिक घटनाओं और चित्रों पर असंख्य कविताएँ लिखी हैं। साथ ही उन्होंने भ्रष्ट राजनीतिज्ञों के विरुद्ध अपना स्वर अभिव्यक्त किया है। 'शासक' नामक कविता में कवि जहाँ एक ओर स्वतन्त्रता के लिए भोगी गई यातना और कष्टों का स्मरण करता है वहीं दूसरी ओर देश के राजनीतिज्ञों पर कटु-कटाक्ष भी करता है। कवि को लगता है कि भक्त सिंह, चन्द्रशेखर आदि देशभक्तों ने आजादी के लिए व्यर्थ ही अपने प्राण गवाएँ।

कवि का कहना है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए भारतवासियों ने कारावास की यातनाएँ भोगीं, काले पानी की सजा काटी और अपने प्राणों का बलिदान किया लेकिन इस स्वतन्त्रता का सुख केवल मुट्ठी भर राजनेता भोग रहे हैं। जो एक बार गद्दी से चिपक जाता है वह उसे छोड़ने का नाम नहीं लेता। हमारे नेताओं की विदेश नीति भी स्वार्थों से प्रेरित होती है। जो भी राजनीति

में प्रवेश करता है उसके लिए दल विशेष का कोई महत्त्व नहीं है। यदि वह पाँच वर्ष तक एक दल में रहकर सुख-सुविधाएँ भोगता है तो फिर अवसर आने पर वह दूसरे दल में प्रवेश ले लेता है। आया राम गया राम की यह दूषित राजनीति लोकतन्त्र के नाम पर एक बहुत बड़ा कलंक है। अवसर आने पर कवि नेहरु की विदेश नीति की भी कड़ी आलोचना करता है।

"पंडित जी जाने वाले हैं रानी के दरबार में
अपने ही हाथों गूँथेंगे मोती उसके हार में
मनमाने डूबकी लगाएँगे वहाँ टेम्स की धार में
दिल-दिमाग को पेश करेंगे अबकी वह उपहार में।"

नागार्जुन का विचार है कि जवाहर लाल नेहरू की नीति बुजुर्आ नीति थी जो कि वर्ग संघर्ष को जन्म दे रही थी, वे साम्राज्यवादी देशों के साथ भारत की विदेश नीति को जोड़ना चाहते थे, विशेषकर ब्रिटेन के साथ उनको अत्यधिक लगाव था, क्योंकि स्वयं भी तो उन्होंने सारा जीवन सुविधाओं को भोगा था, 'आओ रानी हम ढोएंगे पालकी' नामक कविता में कवि ने नेहरु जी की विदेश नीति पर करारा व्यंग्य किया है। कवि का विचार है कि इंग्लैंड एक साम्राज्यवादी देश है। स्वतन्त्र भारत के कन्धों पर अब भी उसकी पालकी की गुलामी लदी हुई है। जब नेहरू जी भारत के प्रधानमंत्री थे, तब भारतीय अर्थव्यवस्था राजनीति पर साम्राज्यवादी शक्तियों का प्रभाव था। इसलिए कवि प्रस्तुत करता है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी भारत को राष्ट्र मण्डल के हाथों गिरवी क्यों रखा जा रहा है? आज भी हमारे देश की विदेश नीति अमेरिका की साम्राज्यवादी नीतियों से अत्यधिक प्रभावित है। इस सन्दर्भ में कवि लिखता भी है–

"आओ रानी, हम ढोएंगे पालकी
यही हुई राय जवाहर लाल की
रफू करेंगे फटे-पुराने जाल की
यही हुई है राय जवाहर लाल की
आओ रानी, हम ढोएँगे पालकी।"

कवि का आक्रोश कहीं-कहीं तो काफी उग्र हो उठा है। ये नागार्जुन ही थे जो कांग्रेसी नेताओं को खरी-खोटी सुनाने का साहस करते थे। कवि को लगा कि इन राजनेताओं के कारण साम्राज्यवाद के कदम भारत की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं। नेहरू जी को सावधान करते हुए कवि कहते भी हैं–

'संभलो-संभलो पंडित नेहरु, दानव दल से नाता तोड़ो,
आँख-मिचौनी बहुत हुई, बस, महाकाल का सत्यानाशी
दामन छोड़ो, वतन समूचा रेहन रखकर क्या पाओगे?
किस मुँह से फिर गाँधी जी के गुण गाओगे।"

2. नेताओं पर व्यंग्य–प्रगतिवादी कवियों में नागार्जुन ही मात्र एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने देश के भ्रष्ट, स्वार्थी तथा अवसरवादी नेताओं पर करारे व्यंग्य किए हैं। ये नेता ही लोगों में जातिवाद, क्षेत्रवाद तथा साम्प्रदायिकता का दूषित विष फैलाते रहते हैं। इनकी कथनी और करनी में जमीन-आसमान का अन्तर है। वायुयानों में यात्रा करना इनको बड़ा प्रिय लगता है। जब ये लोग लालबत्ती की कार में यात्रा करते हैं तो इनके आगे-पीछे असंख्य कारों की पंक्तियाँ होती हैं और हथियार बंद पुलिस इनके चारों ओर मंडराती रहती हैं। इनके चेहरे का तेज देखने योग्य होता है। श्वेत परिधान और सिर पर उजली टोपी होती है जिसके नीचे इनके घिनौने कृत्य छिपे रहते हैं। 'खूब फंसे हैं नंदा जी' नामक कविता में कवि ने नेताओं के चारित्रिक ह्रास और उनके भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया है। ये नेता लोग स्वार्थी तथा भ्रष्टाचारी होने के साथ-साथ क्रूर और कुचाली हैं। चापलूस लोगों से इन्हें अत्यधिक लगाव है। कवि ने इन नेताओं के कुकृत्यों की पोल खोली है। कवि का विचार है कि देश हित अथवा जन कल्याण से इन्हें कोई सरोकार नहीं, इन्हें तो केवल अपनी कुर्सी ही प्यारी है, उसके लिए ये देश भर में दंगे फसाद करवा सकते हैं, उग्रवादियों से हाथ मिला सकते हैं, गुण्डों तथा भाई लोगों का आश्रय ले सकते हैं। आधुनिक मन्त्री के चरित्र को उजागर करता हुआ कवि कहता भी है–

"अभी-अभी उस दिन मिनिस्टर आए थे
बत्तीसी दिखलाई थी, वादे दुहराए थे।

भाषा लटपटाई थी नयन शरमाए थे
छपा हुआ भाषण भी नहीं पढ़ पाए थे
जाते वक्त हाथ जोड़ कैसे मुस्काए थे।"

कवि ने वोट की राजनीति पर भी समुचित प्रकाश डाला है। जातिवाद तथा क्षेत्रवाद की भूमिका का भी पर्दाफाश किया है। आज की राजनीति भाई-भतीजावाद, जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद तथा धार्मिक विसंगतियों पर आधारित है। 'अब तो बन्द करो हे देवी' नामक कविता में कवि ने राजनीति की विसंगतियों का उद्‌घाटन किया है। इसी प्रकार से 'रोए बड़े-बड़े बलिदानी' नामक कविता में सन् 1967 के चुनावी दंगे पर प्रकाश डाला है। इस चुनाव में हुई हिंसा, मार-काट और साम्प्रदायिकता का खुलकर वर्णन किया गया है। 'आए दिन बहार' के नामक कविता में टिकट पाने की खुशी का जो वर्णन किया है वह टिकट बँटवारे की राजनीति का चित्रण करता है जिसमें भाई-भतीजावाद तथा खुशामदी प्रवृत्ति को महत्त्व दिया जाता है।

3. राजनीतिक विसंगतियों का उद्‌घाटन–नागार्जुन ने भारत की राजनीति के अन्दर तक प्रवेश करके उसकी मर्यादाहीन और दायित्वहीन विसंगतियों का उद्‌घाटन किया है। कवि इस तथ्य से भली-भाँति परिचित है कि टिकट पाने के लिए किस प्रकार राजनेताओं में लड़ाई-झगड़े होते हैं और अहिंसा की हत्या की जाती है। वोट प्राप्त करने के लिए सत्य, अहिंसा आदि सिद्धान्तों की दुहाई देकर ये स्वार्थी नेता मतदाताओं को मूर्ख बनाते हैं। यही नहीं गाँधी जी के नाम का सहारा लेकर ये लोग लोगों के वोट प्राप्त करते हैं और फिर पाँच वर्ष तक जनता की छाती पर मूँग दलते हैं। कवि ने इन स्वार्थी नेताओं को 'खादी पहने लोग' कहा है। कवि लिखता भी है–

"बेच बेचकर गाँधी जी का नाम
बटोरो वोट
बैंक बैलेंस बढ़ाओ'
राजघाट पर बापू की वेदी के आगे अश्रु बहाओ।"

कवि का कथन है कि आम चुनावों में पूँजीपतियों की अहम् भूमिका रहती है समाचार पत्र भी इन्हीं पूँजीपतियों के हाथ के खिलौने हैं और ये लोग उसी का प्रचार करते हैं जिसके लिए इनके आका आदेश देते हैं। रेडियो हो, चाहे अखबार हो या दूरदर्शन सभी इन राजनेताओं के हथियार हैं। 'भज गोविन्दम् मूढ़मते' नामक कविता में कवि ने जनसंघ (भारतीय जनता पार्टी) को कटु भर्त्सना की है और उसकी नीतियों पर प्रश्न चिन्ह लगाया है। कवि का विचार है कि ये पार्टी देश प्रेम और हिन्दुत्व के नाम पर साम्राज्यवादी शक्तियों का समर्थन कर रही है। कवि ने तो मुरारजी देसाई तथा जनता पार्टी के गठबन्धन की भी पोल खोली है। 'मन्त्र' नामक कविता में कवि जहाँ एक ओर समकालीन भ्रष्ट और कुत्सित राजनीति का चित्रांकन करता है वहाँ दूसरी ओर अवसरवादी नेताओं की भी पोल खोलता है।

4. शोषितों एवं दलितों के प्रति सहानुभूति–कवि की दृष्टि पूर्णतया दीन-दलितों, पीड़ितों, शोषितों और अभावग्रस्त लोगों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करती है। नागार्जुन की प्रतिबद्धता किसी विशेष राजनीतिक दल के प्रति नहीं है। उसकी प्रतिबद्धता केवल शोषितों और सर्वहारा वर्ग के प्रति है। वे हमेशा सत्ताधारी दल की आलोचना करते रहे हैं। जहाँ मौका लगा उन्होंने विपक्षी दल को भी आड़े हाथों लिया। पहले नागार्जुन कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य थे लेकिन सन् 1962 में जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो कम्यूनिस्ट पार्टी की भूमिका संदेह के घेरे में आ गई। कवि ने तत्काल पार्टी से त्यागपत्र दे दिया और उसकी कड़ी आलोचना भी की। विशेषकर कांग्रेस के प्रति कवि का आक्रोश अनेक स्थलों पर व्यक्त हुआ है। कारण यह था कि हमारे देश पर लम्बे काल तक कांग्रेस पार्टी का शासन रहा है। गाँधी जी के नाम पर वोट माँगने वाले कांग्रेसी नेता सब प्रकार की सुख-सुविधाएँ भोग रहे हैं। सत्य अहिंसा का राग अलापकर ये लोग असत्य और हिंसा में लिप्त हैं। इनके शासन काल में ही निरीह और बेकसूर लोगों पर गोलियाँ चलाई गईं और हिंसा का वातावरण उत्पन्न किया गया। शासन की बन्दूक में कवि लिखता भी है–

कवि ने देश के पुलिस विभाग को भी क्षमा नहीं किया, क्योंकि पुलिस कर्मचारी सत्ता वर्ग की उचित-अनुचित आज्ञाओं को मानकर लोगों पर अत्याचार करने लगते हैं। कहने को तो भारत भूमि अहिंसा और शान्ति की पवित्र भूमि है लेकिन यहाँ की घिनौनी और कुत्सित राजनीति देश की जनता पर तरह-तरह के अत्याचार करती रहती है। पुलिस इन राजनेताओं के हाथ में एक ऐसा सशक्त हथियार है जो किसी भी समय चलाया जा सकता है।

'पुलिस अफसर' नामक कविता में कवि ने पुलिसकर्मियों के अमानवीय तथा निष्ठुरतापूर्ण विचारों का यथार्थ वर्णन किया है–

"जिनके बूटों से कीलित है भारत माँ की छाती
जिनके दीपों में जलती है तरुण आँत की बाती
ताजा मुंडों से करते जो पिशाच का पूजन
हे असहन जिनके कानों को बच्चों का कल कूजन।"

'तीनों बन्दर बापू के' कवि की एक अन्य उल्लेखनीय कविता है जिसमें उन्होंने आज के राजनेताओं और तथाकथित समाज सेवियों पर कटु कटाक्ष किया है। ये लोग गाँधी जी के अनुयायी होने का दावा करते हैं लेकिन महात्मा गाँधी, गीता तथा उपनिषद् आदि की आड़ लेकर अपने स्वार्थ को पूरा करने में संलग्न हैं। इनका कोई भी दीन-ईमान नहीं, कोई सिद्धान्त नहीं अपना घर भरने के लिए ये विदेशियों से भी हाथ मिला सकते हैं और पूँजीपतियों का हित-साधन करते हैं।

नागार्जुन एकमात्र ऐसा प्रगतिवादी कीव है जिसने पंडित जवाहर लाल नेहरु, श्रीमति इन्दिरा गाँधी, मुरारजी देसाई, संजय गाँधी, राजीव गाँधी, जय प्रकाश नारायण, राम मनोहर लोहिया तथा राजनारायण जैसे राजनेताओं पर कविता लिखी। कवि ने इन नेताओं के सद्कर्मों की यदि प्रशंसा की है तो कुकर्मों पर करारे व्यंग्य भी किए हैं। सन् 1967 में जब इन्दिरा गाँधी ने देश की बागडोर संभाली तो कवि ने उनके शासन काल को नया जमाना कहा, परन्तु इसी इन्दिरा गाँधी ने जब आपातकाल की घोषणा की तो कवि ने इन्दिरा गाँधी को हिटलर की नानी तक कह दिया, साथ ही यह कह दिया कि वह लोकजीवन के मानचित्र को रौंद रही है और प्रजातन्त्र की हत्यारन है। यही नहीं कवि ने मोरारजी देसाई के व्यक्तिगत जीवन पर कटु-कटाक्ष किया।

"मूत्र अपना पी रहे हो, दिव्य जीवन जी रहे हो।"

पुनः बोफोर्स घोटाले की दलाली की ओर संकेत करता हुआ कविता लिखता है–

"बोफोर्स की दलाली। गुप-चुप हज़म करोगे।
नित राजघाट जाकर। बापू भजन करोगे।"

5. कांग्रेसी नेताओं को फटकार–नागार्जुन ने अपनी कविताओं में सर्वाधिक व्यंग्य कांग्रेसी नेताओं पर किए हैं, क्योंकि कांग्रेस ही लम्बे काल तक देश पर शासन करती रही है। धीरे-धीरे कांग्रेसी नेता अवसरवादी, स्वार्थी और शोषक बनने लगे। यही नहीं वे अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए पूँजीपतियों की सहायता करने लगे और जनसाधारण के हित को भूल गए। कवि लिखता भी है–

"कांग्रेस जन तो तेणे कहिए, जे पीर आपनी जागी रे।
पर दुःख में अपना सुख साधे, दया भाव भागे रे।
तीन भुवन मा, ठगे सभी को, शरम न राखे केनी रे।
टोपी, कुर्ता, धोती, खद्दर, धन-धन जननी तेरी रे।"

किसी भी राजनेता के बारे में नागार्जुन के विचार स्थिर नहीं कहे जा सकते। आवश्यकता पड़ने पर वे जिसकी प्रशंसा करते हैं, उसकी निन्दा भी करने लग जाते हैं। इस सन्दर्भ में वे बड़े-बड़े नेताओं को भी आड़े हाथों लेते हैं। जिस जय प्रकाश नारायण को वे 'महाकारुणिक बुद्ध' कहते थे, 1953 में उसके समाजवाद का मज़ाक उड़ाने लगते हैं–

"जय प्रकाश का अनशन देखो
सोसलिज़्म का प्रहसन देखो।"

कांग्रेस सरकार द्वारा जब देश में आपातकालीन स्थिति की घोषणा की गई तो कवि ने इन्दिरा गाँधी को 'हिटलर की नानी' तक कह डाला। कवि का विचार था कि वह देश में परम्परा की स्थापना करना चाहती है। कवि का यह कथन पूर्णतया सत्य सिद्ध हुआ है। आज भी कांग्रेसी नेता सोनिया गाँधी तथा उसके पुत्र राहुल गाँधी को राजगद्दी पर बिठाना चाहते हैं। परन्तु कवि ने इन्दिरा गाँधी को 'लोकतन्त्र का मानचित्र रौंदने वाली', 'लोकतन्त्र में वंश परम्परा की कील गाड़ने वाली' तक कहा।

नागार्जुन ने अपनी कविताओं में भारत-रूस के संबंधों पर सफलतापूर्वक लेखनी चलाई है। वे यदि दिल्ली, पैकिंग और मास्को के मधुर संबंधों का वर्णन करते हैं तो मौका पड़ने पर कम्यूनिस्टों को आड़े हाथों भी लेते हैं।

"दिल्ली पैकिंग मॉस्को का यह मीठा सम्बन्ध
सपने में भी जिस गरिमा का नहीं हुआ था मान
धन्य भाग तुमने हमको यह गौरव किया प्रदान।"

6. चीन और कम्युनिस्टों को फटकार–सन् 1962 में जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया उस समय कवि ने तथाकथित कम्यूनिस्टों को भी आड़े हाथों लिया, क्योंकि कवि का विचार है कि राष्ट्रीय चेतना सबसे ऊपर है। विदेशी शक्तियों द्वारा देश पर आक्रमण करने पर सभी देशवासियों को एकजुट होकर दुश्मनों का सामना करना चाहिए। कम्यूनिस्टों कठमुल्लों की खबर लेते हुए लिखते हैं–

"जी हाँ, पैकिंग ही रहते थे कल तक मेरे नाना
जी हाँ, मैंने अपनी माता को अबके पहचाना
जी हाँ, कल नोचेंगे मुझको कम्यूनिष्ट कठमुल्ले
जी हाँ, लाल चीन के, ठुल्ले चाबेंगे रसगुल्ले।"

◆◆◆

4. नागार्जुन की काव्य-भाषा/काव्य शिल्प

4. नागार्जुन की काव्य-भाषा अथवा काव्य-शिल्प का परिचय दीजिए।

अथवा

नागार्जुन के अभिव्यंजना-शिल्प पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–नागार्जुन की काव्य-भाषा/काव्य-शिल्प–कविवर नागार्जुन प्रगतिवाद के प्रमुख कवि हैं। निर्धन तथा शोषित जनों के प्रति सहानुभूति रखने वाले नागार्जुन मानवता के सच्चे उपासक और कलुष मान्यताओं के विरोधी थे। उन्हें एक व्यंग्यकार, कथाकार तथा कवि के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त हुई। इनके काव्य का भाव पक्ष पूर्णतया प्रगतिवादी है। अतः उनके काव्य का शिल्प पक्ष भी प्रगतिवादी काव्य के समान सहज एवं सरल है। यद्यपि उन्होंने अपनी आरम्भिक रचनाओं में तत्सम् प्रधान संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया है लेकिन आगे चलकर वे जनभाषा का प्रयोग करते हुए दिखाई देते हैं। उनकी काव्य भाषा भावानुगामनी है। कवि ने खड़ी बोली के अतिरिक्त संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी, बंगला, मैथिली आदि भाषाओं के शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है। नागार्जुन की काव्यभाषा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

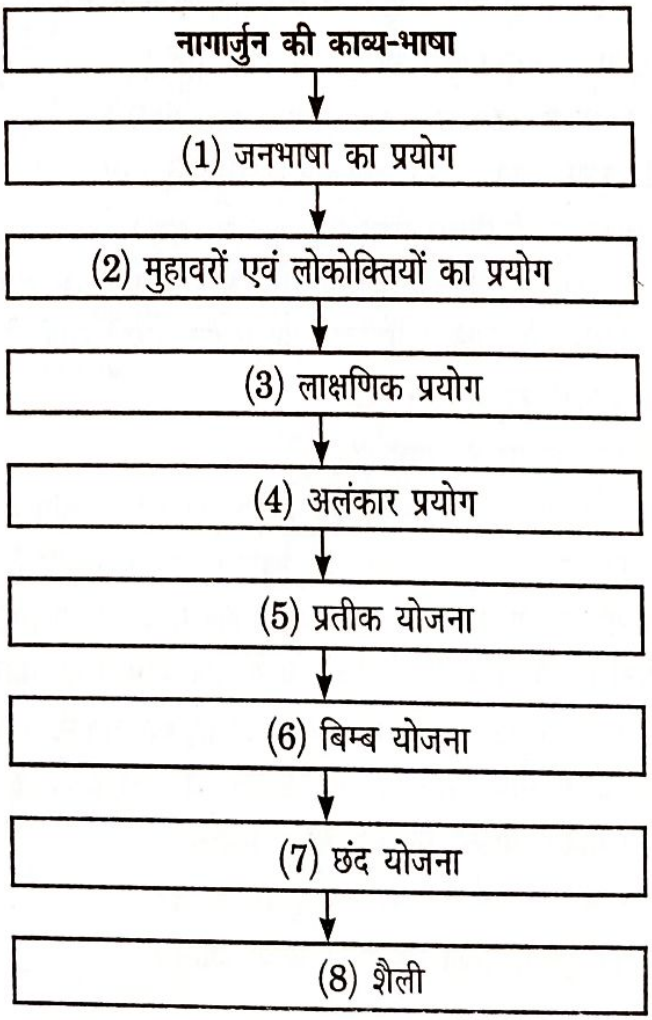

1. जनभाषा का प्रयोग–वस्तुतः नागार्जुन प्रगतिवादी काव्य के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। यद्यपि जनवन्दना 'काली सप्तमी का चाँद', 'शरद पूर्णिमा', 'कालिदास के प्रति', 'बादल को घिरते देखा है' आदि कविताओं में उन्होंने संस्कृतनिष्ठ तत्सम् प्रधान भाषा का प्रयोग किया है, लेकिन अन्यत्र उन्होंने सहज, सरल तथा सामान्य जनभाषा का ही प्रयोग किया है। उनकी काव्य भाषा आम लोगों की भाषा है, जिसमें तद्भव, देशज तथा विदेशज शब्दों का खुल कर प्रयोग देखा जा सकता है। 'तीन दिन तीन रात' नामक कविता में कवि द्वारा जिस भाषा का प्रयोग किया गया है वह पूर्णतया जन भाषा ही कहीं जाएगी। एक उदाहरण देखिए–

"दस गुनी कमाई पर ताँगा व रिक्शावाले
मस्त थे, मग्न थे तीन दिन तीन रात
डूबे थे ताड़ी और दारु में माटी के हजारों चुक्कड़
धुत थे, नग्न थे तीन दिन तीन रात
बस-सर्विस बंद थी तीन दिन तीन रात"

उनकी भाषा में चहुँ, दूब, कँटीली, सिंह, पूँछ, भैंस, राख, धरती, दीठ, नाच, कलमुंही भावी सामान्य बोलचाल के शब्दों का प्रयोग देखा जा सकता है। जनवादी कवि होने के कारण वे लोक भाषिक शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं। घूसट, उट-पटाँग, अनाप-शनाप, छलिया, देशज आदि शब्द उनकी कविताओं में प्रयुक्त हुए हैं। यही नहीं अपनी भाषा को सहज, सरल तथा व्यावहारिक बनाने के लिए वे उर्दू तथा अंग्रेजी के शब्दों का भी खुल कर प्रयोग करते हैं–

(क) **उर्दू के शब्द**–निगाह, बेरुखी, दरवेश, दुरुस्त, हाजिर, अलविदा, मुश्किल, मौज, मेहनत, फिक्र, रजाक मुस्तैद, होश, किस्मत, फौज, खजाना, बदनाम, बेखबर, नाशवार आदि।

(ख) **अंग्रेजी के शब्द**–कलैण्डर, ड्यूटी, रेल, कोर्स, पैट्रोल, शॉक, मिनिस्टर, डॉक्टर, मिलिटरी, हैड, लंच-डीनर, गिफ्ट, प्लान, प्राईवेट, कैपीटल, बस, स्टॉर्ट, पोस्टर, ट्रेन, आदि।

(ग) **आंचालिक शब्द**–पढ़ऊनी, तामझाम, बिसतुइया, चुक्कड़, छोकरी, पुरवइया, लील, चेला-चाटी, भुलुकमलिकाइन, बिछौने, तिपहिया, बतियाना, अखनाख, पाहुन, भाटी आदि।

कुल मिलाकर नागार्जुन की भाषा जन-साधारण की भाषा है, लेकिन वह पण्डितों और काव्य रसिकों को भी आनंद प्रदान करती है। यदि हम संस्कृतनिष्ठ भाषा की ओर ध्यान न दें तो उन्होंने प्रायः सहज, सरल और सादी भाषा का ही प्रयोग किया है। **श्री विशम्भर नाथ उपाध्याय** ने नागार्जुन की भाषा के बारे में लिखा है–**"वे जनप्रयुक्त भाषा के सबसे बड़े प्रयोगशील कवि हैं। उनकी भाषा में ठेठ हिन्दी का ठाठ है और उनकी बनावट में इस जन शब्दावली के वैसे ही विचार हैं जैसे कबीर में मिलते हैं।"** लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि नागार्जुन ने केवल जनभाषा का ही प्रयोग किया है। संस्कृतनिष्ठ तत्सम् प्रधान साहित्यिक हिन्दी भाषा का प्रयोग करने में भी वे सिद्धस्त हैं। **'बादल को घिरते देखा है'** में से एक उदाहरण देखिए–

"ऋतु बसंत का सुप्रभात था
मन्द-मन्द था अनिल बह रहा
बाला रूप की मृदु किरणें थीं
अगल-बगल स्वर्णाम शिखर थे।

नागार्जुन की काव्य भाषा अत्यन्त सरल होने के साथ सरस भी है। यह भाषा भावानुकूल बदलती हुई चलती है। वे प्रायः तद्भव तथा देशज शब्दों के प्रयोग पर अधिक बल देते हैं।

2. मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग–कवि ने अपने कथ्य को सशक्त तथा प्रभावशाली बनाने के लिए मुहावरों तथा लोकोक्तियों का भी सफल प्रयोग किया है। अंगूठा दिखाना, टुकुर-टुकुर ताकना, पीठ ठोंकना, बाल बाँका करना, बार-बार छाती पीटना, खैर मनाना, जान में जान आना, बाजी मार लेना, खाक हो जाना, जान-बूझकर खिलवाड़ करना, आनन-फानन में गायब होना आदि मुहावरों का प्रयोग करके उन्होंने अपनी काव्य भाषा में चमत्कार उत्पन्न कर दिया है। उनकी काव्य-रचनओं से कुछ उदाहरण देखिए जिनके माध्यम से लाक्षणिक प्रयोग आकर्षक और सारगर्भित बन गए हैं–

(i) वतन बेचकर पण्डित नेहरु फूले नहीं समाते हैं।

(ii) गिरगिट के अंडे सेता हूँ, मैं देख रहा।

(iii) बापू के भी ताऊ निकले, तीनों बंदर बापू के।

(iv) सत्तर चूहे खाकर रीझा वृद्ध बिलौटा अब जन-मन पर।

(v) अपने हाथों से झोकों यों अपनी आँखों में धूल।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नागार्जुन द्वारा प्रयुक्त जनभाषा सहज, सरल और स्पष्ट होने के साथ-साथ पात्रानुकूल तथा भावानुकूल है। कवि ने अपनी काव्य भाषा को जनभाषा बनाने के लिए ग्रामीण शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग किया है। वे देशज तथा उर्दू के शब्दों का भी इसी दृष्टि से प्रयोग करते हैं। फलस्वरूप उनकी भाषा जीवन्त और समृद्ध बन गई है।

3. लाक्षणिक प्रयोग–अन्यत्र यह स्पष्ट किया जा चुका है कि नागार्जुन एक सफल व्यंग्यकार हैं। उन्होंने यत्र-तत्र व्यंग्य का प्रयोग करके समाज की विषमताओं और विसंगतियों का उद्‌घाटन किया है। तदर्थ कवि लाक्षणिक प्रयोगों द्वारा अपनी कविताओं को अधिकाधिक आकर्षक और मार्मिक बनाता है। लाक्षणिक प्रयोगों से ही उनकी कविता में उचित वैचित्र्य का समावेश हुआ है। **'राम-राज्य', 'प्रेत का बयान', 'आए दिन बहार के', 'चन्दन और पानी', 'दीपक और बाती', 'सौन्दर्य प्रतियोगिता', 'महाप्रभु जॉनसन के प्रति', 'चौराहे के उस नुकक्ड़ पर'** तथा **'तालाब और मछलियाँ'** आदि कविताओं में कवि ने शिक्षकों की दयनीयता, दिखावा, सामाजिक तथा धार्मिक रूढ़ियों तथा फैशन परस्ती आदि पर करारे व्यंग्य किए हैं। ऐसे स्थलों पर कवि लाक्षणिक प्रयोग द्वारा ही भावभिव्यक्ति करता है। एक उदाहरण देखिए–

"आजादी की कलियाँ फूटीं, पाँच साल में होंगे फूल,
पाँच साल में फल निकलेंगे, रहे पंत जी झूल-झूल।
पाँच साल कम खाओ भैया, गम खाओ दस पन्द्रह साल,
अपने हाथों से झोकों यों, अपनी आँखों में धूल।।"

नागार्जुन की काव्य रचनाओं में असंख्य लाक्षणिक प्रयोग देखे जा सकते हैं। कवि मुहावरों के द्वारा ही लाक्षणिकता का समावेश करता है जिससे अभिव्यक्ति में चारुता और रमणीयता उत्पन्न हो जाती है। लाक्षणिक प्रयोगों के कुछ उदाहरण देखिए–

(i) वतन बेचकर पण्डित नेहरू फूले नहीं समाते।

(ii) असमय हरियाली का पारावार।

(iii) अपने हाथों से झोंकों यों अपनी आँखों में धूल।

(iv) तुम जाओ बूढ़े का करो इलाज।

(v) होठों को कम्पित कर लो, रह-रहकर कनखी मार लो।

(vi) तुम तो मन्मथ बौडम हो क्या खूब।

(vii) बापू के भी ताऊ निकले तीनों बन्दर बापू के।

(viii) भले-भले मुँह उगल रहे हैं चीन विरोधी आग।

4. अलंकार प्रयोग–अलंकार कविता रूप कामिनी के शृंगार के साधन हैं। लेकिन जब कोई कवि अलंकारों का प्रयोग साध्य के रूप में करता है तो अलंकारों का महत्त्व समाप्त हो जाता है। नागार्जुन एक सफल प्रगतिवादी कवि कहे जा सकते हैं। उन्होंने अलंकारों का प्रयोग साधन के रूप में किया है साध्य के रूप में नहीं। फिर भी उनकी काव्य रचनाओं में भारतीय और पाश्चात्य दोनों प्रकार के अलंकारों का सफल प्रयोग देखा जा सकता है। इस संदर्भ में **डॉ. जगन्नाथ पंण्डित** ने लिखा भी है–**"नागार्जुन के काव्य में अनुप्रास, वीप्सा, उपमा तथा उत्प्रेक्षा के प्रयोग अधिक हैं। वीप्सा के प्रति उनमें सबसे अधिक झुकाव है। पाश्चात्य अलंकारों में उन्हें मानवीकरण तथा ध्वन्यर्थ व्यंजना अधिक प्रिय है।"** लेकिन उनकी रचनाओं में अलंकारों का प्रयोग पूर्णतया स्वाभाविक रूप से हुआ है। कवि ने अपनी कविताओं पर अनावश्यक अलंकारों का भार नहीं लादा। कुछ उदाहरण देखिए–

(i) अनुप्रास– **(क) भारी भरकम डाल की।**
(ख) फर-फर-फर फहराने वाला तिरंगा था।

(ii) उपमा– **(क) शंख सरीखे सुघड़ गलों में।**
(ख) पूस मास की धूप सुहावन

(iii) मानवीकरण– **"सत्य को लकवा मार गया है।**
तुम हिमालय के कंधों पर।"

(iv) रूपक– **"एक-एक शब्द है दुधारू गाय**
उसका दुरुपयोग करना न हाय।"

(v) विरोधाभास– **"हिमदग्ध होठों के प्राण-शोषी चुम्बन**
तन-मन पर लेप गए ज्वालामुखी चन्दन।"

(vi) असंगति– **"वोट मिलना लगता आसान**
कहीं पर भोज कहीं गुनगान
कहीं पर थोक नगद नवादान।"

इस प्रकार नागार्जुन का अलंकार भण्डार काफी बड़ा है। इससे पता चलता है कि भाषा की शक्तियों पर उनका पूर्ण अधिकार था। वे आधुनिक कवियों की अपेक्षा अधिक अलंकार प्रिय नहीं हैं, क्योंकि वे अलंकारों को भावों की सजावट का साधन मानते थे। फिर भी उन्होंने भारतीय और पाश्चात्य दोनों प्रकार के अलंकारों का सजल प्रयोग किया है। लेकिन हमें यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि अलंकारों के प्रति उनका अधिक मोह नहीं था।

5. प्रतीक योजना–प्रतीक के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए विश्व कोश में उसे मूर्त का अमूर्त रूप कहा गया है। **वेब्स्टर** के अनुसार, **"प्रतीक अपने संपर्क, संदर्भ और परम्परा से किसी अदृश्य वस्तु की ओर संकेत करता है।"** इस प्रकार **एनसाइक्लोपिडिया ब्रिटैनिका** के अनुसार, **"उस दृश्य वस्तु को प्रतीक कहा जाता है जो मूल वस्तु का प्रतिविधान साहचर्य विधान के अनुसार करती है।"** 'अज्ञेय' के अनुसार, **"प्रतीक वास्तव में ज्ञान का एक उपकरण है जो सीधे-सीधे अभिधा में नहीं बंधता और आत्मसात् करने या प्रेषित करने के लिए प्रतीक काम देते हैं।"** नागार्जुन ने भी अपनी कविताओं में असख्य प्रतीकों का प्रयोग किया है। वे प्रायः अपनी भाषाभिव्यक्ति को प्रभावशाली और अप्रत्यक्ष बनाने के लिए प्रतीकों का प्रयोग करते हैं। कवि ने सभी प्रकार के प्राकृतिक, ऐतिहासिक, पौराणिक तथा नव-निर्मित प्रतीकों का खुल कर प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखिए–

तीनों बन्दर बापू के–इसमें बन्दर गाँधी जी के अनुयायियों और कांग्रेसी नेताओं की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार से **गीद्ध** हिंसक, अत्याचारी, शोषक और साम्राज्यवादी देश का प्रतीक है। पुराने कांग्रेसियों के लिए कवि ने बहुत ही सटीक और प्रभावशाली प्रतीक का प्रयोग किया है।

"परसों था जंगल का राजा, कल था घायल बूढ़ा शेर।"

इसी प्रकार से कवि ने अवसरवादी तथा अत्याचारी प्रशांसकों के लिए **उल्लू** का प्रतीक बनाया है।

"जयन्ती अशोक के सिंहों पर बेशर्म उल्लुओं की जमात।"

परन्तु अवसरवादी नेताओं के लिए कवि ने जिन प्रतीकों का प्रयोग किया है। वह बहुत ही प्रभावशाली एवं सटीक बन पड़ा है।

"देखा हमने चिड़िया खाना
सुना चीखना और चिल्लाना
धवल टोपियाँ फेंक रहे थे
मगर गधों से रेंक रहे थे
धोती कुर्ते में ये हाथी
सुअर ऊँट थे जिनके साथी
बैलों के पीछे अनबोले
मचल रहे थे साँप सपोले
यार पास था, कार पास थी
बुढ़िया कंगारु उदास थी।"

6. बिम्ब योजना–आधुनिक कवियों ने अपनी काव्य-रचनाओं में बिम्ब योजना की ओर विशेष ध्यान दिया है। अंग्रेज़ी के कवि वर्डस्वर्थ ने समस्त काव्य को मानव प्रकृति का कलात्मक बिम्ब घोषित किया है। उधर ह्यूम ने बिम्ब विधान को काव्य की आत्मा स्वीकार किया है। लेविस बिम्ब की परिभाषा देते हुए लिखते हैं–**"बिम्ब एक ऐन्द्रिय चित्र है जो कुछ अंत्रों में अलंकृत होता है, जिसके सन्दर्भ के मानवीय संवेदनाएँ निहित रहती हैं तथा जो पाठक के मन में विशिष्ट रागात्मक भाव उद्दीप्त करता है।"**

डॉ. केदार शर्मा के अनुसार, **"भाषा और भाव के पश्चात् काव्य में जिस सशक्त वस्तु की उपेक्षा होती है वह ठोस वस्तु बिम्ब है। बिम्ब से कविता में भाषा के संयम अभिव्यक्ति की सशक्तता आती है। काव्य में बिम्ब का महत्त्व असंदिग्ध है।"**

कविवर नागार्जुन बिम्ब विधान की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध हैं। उनकी रचनाओं में दृश्य, श्रव्य स्पर्श, अलंकृत आदि सभी प्रकार के बिम्ब प्रयुक्त हुए हैं, लेकिन ऐन्द्रिय वस्तु-परक तथा भावात्मक बिम्ब इनको अधिक प्रिय हैं।

नागार्जुन की कविताओं में गतिशील बिम्ब के जीवन्त उदाहरण देखे जा सकते हैं। 'खुदरे पैर' कविता में गतिशील बिम्ब का जीवन्त उदाहरण है। यह बिम्ब करुणा और सहानुभूति के भाव उत्पन्न करता है। 'फिसल रही चाँदनी' नामक कविता में गतिशील बिम्ब का एक उदाहरण देखिए–

"पीपल के पत्रों पर फिसल रही चाँदनी
पिछवाड़े बोतल के टुकड़ों पर
नाच रही, कूद रही, उछल रही चाँदनी
दूर उधर, बुर्जी पर उछल रही चाँदनी।"

अन्यत्र कवि ने घ्राण, श्रव्य, आस्-वाद्य तथा स्पर्श बिम्बों का भी सफल प्रयोग किया है। इन बिम्बों के प्रयोग के कारण कवि की असंख्य कविताएँ महत्त्वपूर्ण बन पड़ी हैं। विशेषकर बिम्बात्मकता के कारण कवि के कथ्य का प्रभाव दोगुणा हो जाता है। कुछ उदाहरण देखिए–

(क) **स्थिर बिम्ब–** **"चौराहे के उस नुक्कड़ पर**
काँटों का बिस्तरा बिछाकर सोया साधु दाढ़ी वाला
लोग तमाशा देख रहे हैं।
काँटों पर सोया है कैसे
नागफनी पर गिरगिट जैसे।।"

(ख) **घ्राण बिम्ब–** **"अब की मैंने जी भर सूँघे**
भौल सिरी के ढेर-ढेर से ताजे टटके फूल।"

7. छंद योजना–जहाँ तक छंद योजना का प्रश्न है नागार्जुन ने छंदबद्ध और छंदयुक्त दोनों प्रकार की कविताएँ लिखी हैं। निराला के समान नागार्जुन भी छन्दयुक्त दोनों प्रकार की कविताएँ लिखी हैं। निराला के समान नागार्जुन भी छन्द मुक्ति आन्दोलन के कट्टर समर्थक थे। उन्होंने परम्परागत छन्दों का अधिक प्रयोग नहीं किया। जहाँ कहीं किया भी है वहाँ वे मात्रा एवं वर्ण गणना की ओर विशेष ध्यान नहीं देते। अक्सर देखने में आया है कि वे एक ही कविता में अनेक छन्दों का प्रयोग कर देते हैं। बैरवी छन्द उनका सर्वाधिक प्रिय छंद है और इसका उन्होंने सर्वाधिक प्रयोग भी किया है। **शासन की बन्दूक** नामक कविता में कवि ने दोहा छन्द का प्रयोग किया है। उदाहरण देखिए–

"खड़ी हो गई चांपकर कंकालों की हुक।
नभ में विपुल विराट-सी शासन की बंदूक।।
उस हिटलरी गुमान पर सभी रहे हैं थूक।
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक।।
बढ़ी बधिरता दसगुनी बने विनोवा मूक।
धन्य-धन्य वह धन्य वह, शासन की बंदूक।।"

दोहा, गीत, छंद-बद्ध कविता, मुक्तक तथा विभिन्न लोक धुनों पर आधारित कविताएँ काफी प्रभावशाली बन पड़ी हैं। जहाँ तक छंदबद्ध कविताओं का प्रश्न है कहीं तो वे एक कविता में एक ही छंद का प्रयोग करते हैं तो कहीं एक कविता में कई छन्दों का प्रयोग कर देते हैं। हर गीतिका, कवित्त, उल्लाला आदि छन्दों का उन्होंने खूब प्रयोग किया है। प्रगतिवादी कवियों में नागार्जुन ही एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने **आँसू छन्द** का प्रयोग किया है।

इसके साथ-साथ कवि ने अपनी असंख्य कविताओं की रचना मुक्त छंद में की है। नागार्जुन ने अष्टपदी, दशपदी, एकादशपदी, द्वादशपदी, चतुर्दशपदी, पंचदशपदी, षोडसपदी, सप्तदशपदी तथा अष्टदशपदी कविताएँ भी लिखी हैं।

मुक्त छंद का एक उदाहरण देखिए–

सत्य को लकवा मार गया
वह लंबे काठ की तरह
पड़ा रहता है सारा दिन सारी रात
वह फटी-फटी आँखों से
टुकुर-टुकुर ताकता रहता है सारा दिन, सारी रात

8. शैली–शैली प्रत्येक कवि की अपनी होती है। शैली के द्वारा ही हम कवि की भाषा-प्रयोग को जान सकते हैं। नागार्जुन ने अपनी कविताओं में विविध प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। वे प्रायः उद्बोधन शैली, नाटकीय शैली, आवृत्ति शैली, प्रश्न शैली, वर्णनात्मक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, आत्मकथात्मक और प्रतीक शैली का प्रयोग करते हैं। भस्मांकुर में कवि ने नाटकीय शैली का प्रयोग किया है तथा अकाल और उसके बाद, चंदू मैंने सपना देखा, अग्न ब्रह्म की माया में आवृत्ति शैली का सफल प्रयोग किया है। वस्तुतः आवृत्ति और व्यंग्यात्मक उनकी दो उल्लेखनीय शैलियाँ हैं। कुछ उदाहरण देखिए–

आवृत्ति शैली–

"चंदू मैंने सपना देखा, कल परसों ही छूट रहे हो
चंदू मैंने सपना देखा, खूब पतंगे लूट रहे हो।
चंदू मैंने सपना देखा लाए हो तुम क्या कलैंडर
चंदू मैंने सपना देखा, तुम हो नाहर, मैं हूँ बाहर
चंदू मैंने सपना देखा, अमुजा से पटना आए हो
चंदू मैंने सपना देखा, मेरे लिए शहद लाए हो।"

व्यंग्यात्मक शैली–

"हमें अँगुठा दिखा रहे हैं तीनों बंदर बापू के
कैसी हिकमत सिखा रहे हैं तीनों बंदर बापू के
प्रेम पगे हैं, शहद सने हैं, तीनों बंदर बापू के
गुरुओं के भी गुरु बने हैं तीनों बंदर बापू के
सौवीं बरसी मना रहे हैं तीनों बंदर बापू के
बापू को ही बना रहे हैं, तीनों बंदर बापू के।"

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि नागार्जुन प्रगतिवादी कवि होने के साथ-साथ प्रयोगवादी कवि भी थे। उन्होंने अपनी कविताओं में सामान्य बोल-चाल की भाषा का प्रयोग किया है। वे यदि ग्रामीण शब्दावली का प्रयोग करते हैं तो कहीं-कहीं परिष्कृत शब्दावली का भी प्रयोग करते हैं। कभी-कभी वे नए-नए शब्द भी गढ़ लेते हैं। छन्दों की दृष्टि से उनकी कविताओं में विविधता देखी जा सकती है।

आलोचनात्मक प्रश्न

1. 'मुक्तिबोध' का काव्य-संसार

1. 'मुक्तिबोध' के काव्य-संसार की विशेषताएँ बताइए।

अथवा

'मुक्तिबोध' के काव्य-वैशिष्ट्य को स्पष्ट कीजिए।

अथवा

'मुक्तिबोध' की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–'मुक्तिबोध' का काव्य-संसार–गजानन माधव 'मुक्तिबोध' एक प्रगतिवादी और गरीब कवि थे। उनकी जीवन कथा एक ऐसी त्रासदी है जिसे हम कभी नहीं भूल सकते। एक संवेदनशील साहित्यकार होने के कारण उन्होंने जो कुछ भी लिखा बड़ी ईमानदारी से लिखा। अपने जीवनकाल में तो वे प्रायः उपेक्षित ही रहे, लेकिन मृत्यु के पश्चात् 'मुक्तिबोध' को पर्याप्त यश प्राप्त हुआ। उनके लेखन का बहुत कम भाग प्रकाशित हो सका। उनकी अधिकांश कविताएं, रचनाएँ मरने के पश्चात् ही प्रकाशित होकर पाठकों के सामने आयीं। 'मुक्तिबोध' का प्रथम काव्य संग्रह 1964 में छपा था और दूसरा काव्य संग्रह पन्द्रह वर्ष बाद 1980 में प्रकाशित हुआ। उनके जीवन काल में केवल दो छोटे-छोटे समीक्षात्मक ग्रंथ छप सके थे। ये हैं—नयी कविता का आत्म-संघर्ष और अन्य निबन्ध तथा कामायनी...एक पुनर्विचार। इसके अतिरिक्त तार सप्तक (1943) में उनकी कुछ कविताएँ छपी थीं। उनकी तीन रचनाओं के आधार पर काव्य विशिष्टताओं का विवेचन किया जा सकता है। ये तीन रचनाएँ हैं–

1. सन् 1943 के 'तार सप्तक' में संकलित रचनाएँ। 2. चाँद का मुँह टेढ़ा है (1964) 3. भूरी-भूरी खाक धूल (1980)

'तार सप्तक' में कवि की कुल सत्रह कविताएँ हैं, 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में अट्ठाइस कविताएँ हैं और भूरी-भूरी खाक धूल में संतालीस कविताएँ हैं। आरम्भ में 'मुक्तिबोध' की कविताओं के बारे में जो निर्णय लिए गए वे उचित नहीं थे। भूरी-भूरी खाक धूल के प्रकाशित होने के बाद ही 'मुक्तिबोध' का समुचित मूल्यांकन किया जा सकता है।

'मुक्तिबोध' बचपन से ही सुख-दुःख से जूझते रहे है। उन्होंने अपने जीवन में अनेक संघर्षों का सामना किया। ऐसा करते हुए कवि ने मार्क्सदर्शन का गहन अध्ययन किया और कवि उससे प्रभावित भी हुआ।

उनके काव्य की निम्नलिखित विशेषताएँ उल्लेखनीय हैं–

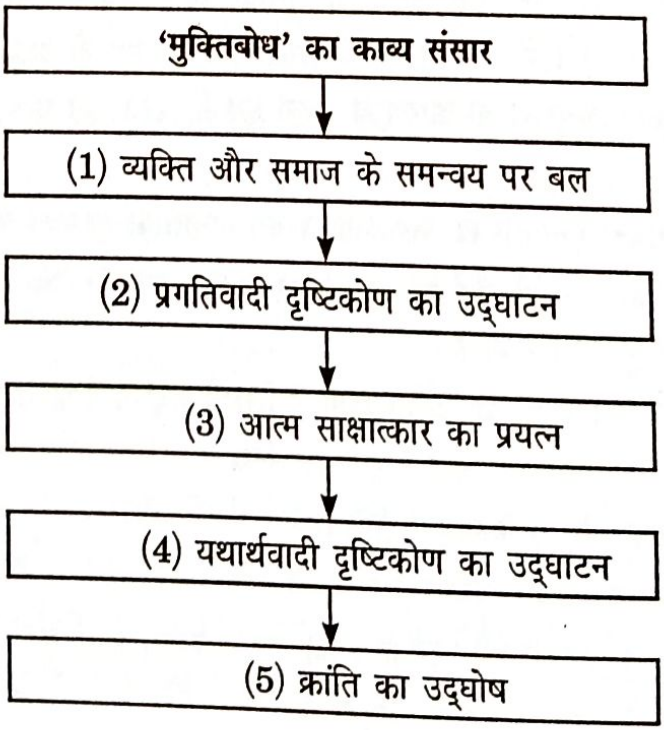

1. व्यक्ति और समाज के समन्वय पर बल–'मुक्तिबोध' ने अपनी कविताओं में व्यक्ति और समाज के समन्वय पर विशेष बल दिया है। तार सप्तक में 'मुक्तिबोध' की जो सत्रह कविताएँ हैं उन पर छायावाद का प्रभाव देखा जा सकता है, लेकिन यह प्रभाव शिल्प के धरातल तक ही सीमित है। इन कविताओं का प्रतिपाद्य प्रगतिशील भाव बोध से सम्बन्धित है।

लेकिन 'मुक्तिबोध' की वैयक्तिकता सामाजिकता की ओर अग्रसर होती दिखाई देती है। यदि वे एक साँस में वैयक्तिकता की बात करते हैं तो दूसरे ही क्षण वे समाजोन्मुख हो जाते हैं। **'चाँद का मुँह टेढ़ा है'** कविता में वे कहते हैं :–

याद रखो
कभी अकेले में मुक्ति नहीं मिलती
यदि वह है तो सब के साथ ही।

'मुक्तिबोध' की आरम्भिक रचनाओं में व्यक्तिवादी स्वर ही सुनाई देता है। वैयक्तिक्ता की इस प्रवृत्ति के कारण उनकी कविताओं में हमें अवसाद, वेदना, निराशा, कुंठा आदि देखने को मिलती है। इन कविताओं से ये भी स्पष्ट होता है कि कवि अकेलेपन के बोध का शिकार है। कभी-कभी तो वह पूर्णतया हताश और निराश दिखाई पड़ता है। विशेषतः उनकी लम्बी कविताओं में सुनापन, भटकाव तथा अकेलेपन के बिम्ब अंकित हुए हैं।

'मुक्तिबोध' में ऐसी अदम्य जिजीविषा है जो कवि को भविष्य के प्रति आस्थावान बनाती है। जीवन की असंख्य बाधाओं का सामना करते हुए कवि की आस्था डगमगाती नहीं। वह अपने खून की आखिरी बूँद तक संघर्षों से जूझने का सामर्थ्य रखता है। वह कभी भी संघर्षों के सामने घुटने नहीं टेकते। **'अंधेरे में'** कविता इसी तथ्य को प्रमाणित करती है। अंधेरे में कवि एक स्थल पर कहता भी है–

"चाँद उग आया है
गलियों की आकाशी लम्बी-सी चीर में
तिरछी है किरणों की मार
उस नीम पर
जिसके कि नीचे
मिट्टी के गोल चबूतरे पर नीली
अदृश्य साकार।"

इस प्रकार 'मुक्तिबोध' का काव्य निराशा से आशा, अनास्था से आस्था और दुःख से सुख की यात्रा करता हुआ दिखाई देता है।

2. प्रगतिवादी दृष्टिकोण का उद्घाटन–'मुक्तिबोध' शीघ्र ही व्यक्तिपरकता को त्याग कर सामाजिकता की ओर बढ़ने लगे थे। आरम्भ में वे बर्गसां के व्यक्तिवाद से प्रभावित हुए थे, लेकिन बाद में उनका झुकाव मार्क्सवाद की ओर हुआ। एक स्थल पर वे लिखते भी हैं–**"क्रमशः मेरा झुकाव मार्क्सवाद की ओर हुआ। अधिक वैज्ञानिक अधिक मूर्त और अधिक दृष्टिकोण मुझे प्राप्त हुआ।"** इस प्रकार कवि की काव्य यात्रा समाजवाद की ओर बढ़ती हुई दिखाई देती है। अपनी सामाजिक चेतना के कारण वे समाज की ओर आकर्षित हुए। शोषण का शिकार बने हुए शोषितों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए वे कहते भी हैं–

"कि पत्थर-ईंट के चूल्हे सुलगते हैं
फुदकते हैं वहीं दो-बार
बिखरे बाल वाले बालकों के श्याम गन्दे तन
व लोहे की बनी स्त्री-पुरुष आकृतियाँ
दलिदर के भयानक देवता के भव्य चेहरे
चमकते धूप में।"

कवि को इस बात का दुःख है कि पूँजीपति वर्ग निरन्तर गरीबों का शोषण कर रहा है। अमीर अमीर होता जा रहा है और गरीब पतन के गड्ढे में दबता चला जा रहा है। शोषित वर्ग की गरीबी को देखकर कवि अपने प्रति ग्लानि अनुभव करने लगता है।

'मुक्तिबोध' ने सही अर्थों में जीवन मूल्यों की स्वस्थ परम्परा का समर्थन किया। तार सप्तक कविताओं में वे जहाँ एक ओर शोषितों के प्रति अपनी सहानुभूति को व्यक्त करते हैं वहाँ दूसरी ओर पूँजीवाद के प्रति अपनी घृणा भी व्यक्त करते हैं। **'पूँजीवादी समाज के प्रति'** में वे पूँजीवादियों की मनोवृत्ति पर करारा व्यंग्य करते हुए कहते हैं–

"तू है मरण, तू है रिक्त, तू है व्यर्थ
तेरे ध्वंस केवल तेरा एक अर्थ।"

कवि का विचार है कि पूँजीवादी सभ्यता ने ही शहरी जीवन को बल प्रदान किया है। इसमें एक ओर तो बाहरी चमक और झूठी शान है और दूसरी ओर श्रमिक वर्ग की गरीबी और मजबूरी है। शहरी जीवन का व्यक्तित्व दोहरा व्यक्तित्व है जिसे कवि ने अपनी आत्मा की गहराई तक महसूस किया। उनका यह कहना था कि प्रत्येक नगर के दो रूप होते हैं। पहला तो वैभव और विलास का रूप है तथा दूसरा नितांत विवश रूप है।

कवि स्वीकार करता है कि वर्तमान पूँजीवादी शोषण चक्र कभी भी समाप्त नहीं हो सकता। इसके हृदय का परिवर्तन नहीं किया जा सकता, इसके लिए क्रांति ही एकमात्र साधन है।

3. आत्म-साक्षात्कार का प्रयत्न–'मुक्तिबोध' के काव्य में आत्मालोचन और आत्मपरिष्कार की भावना देखी जा सकती है। भले ही कवि सामाजिकता के निर्वाह से जुड़ा हुआ है। लेकिन वह अपने प्रति भी काफी सचेत है। उनका समग्र काव्य आत्म-साक्षात्कार का काव्य है। वे अपने व्यक्तित्व का परिष्कार करना चाहते हैं। इसके लिए कवि ने आत्मान्वेषण का मार्ग अपनाया है। यही मार्ग कवि को आत्म-साक्षात्कार के सोपानों तक ले जाता है। उनकी प्रत्येक लम्बी कविता में आत्मान्वेषण का प्रयास देखा जा सकता है। उदाहरण के रूप में, **'भूल गल्ती'** नामक कविता में कवि का आत्म द्वन्द्व निरूपित हुआ है। **'ब्रह्म राक्षस'** कविता में आत्म-संघर्ष की स्थिति देखी जा सकती है। इसी कविता से एक उदाहरण देखिए–

पाप-छाया दूर करने के लिए, दिन-रात
स्वच्छ करने
ब्रह्म-राक्षस
घिस रहा है देह
हाथ के पंजे, बराबर
बाँह-छाती-मुँह छपाछप
खूब करते साफ
फिर भी मैल
फिर भी मैल।

लम्बी कविताओं की तो बात ही क्या करनी है, अपनी आरम्भिक कविताओं में ही कवि आत्मान्वेषण और आत्म-साक्षात्कार की अभिव्यक्ति करता है। **'तार सप्तक'** में संकलित अपनी कविताओं के विषय में वे लिखते हैं–मेरी ये कविताएँ अपना पथ ढूँढ़ने वाले बेचैन मन की अभिव्यक्ति हैं। उनका सत्य और मूल्य उसी जीवन स्थिति में दिया गया है। **'दूर तारा'** नामक कविता में कवि इसी भावना को व्यक्त करता हुआ लिखता है–

"वे नाचने वाले लिखे उसके उदय और उसकी गाथा
सदा ही ग्रहण का विवरण–
किन्तु वह तो चला जाता
व्योम का राही
भले ही दृष्टि के बारह रहे–उसका विषय ही बन जाता
और जाने क्यों
मुझे लगता है ऐसा ही अकेला नील तारा।"

इसी प्रकार से कवि आत्म-साक्षात्कार के लिए भी सक्रिय नजर आता है। वह स्वयं को पिपासा कुल पथिक स्वीकार करता है। उसकी पीठ पर ज्ञान की गठरी पड़ी हुई है जिसके बोझ से पीठ झुक रही है। कभी-कभी तो कवि इस यात्रा को बेकार तक कह बैठता है। वह अपनी जिज्ञासा का तत्काल उत्तर चाहता है।

पथिक है प्यासा, थका-सा धूप में
पीठ पर ज्ञान की गठरी बड़ी
झुक रही है पीठ, बढ़ता बोझ है
यह रही बेगार की यात्रा कड़ी

4. यथार्थवादी दृष्टिकोण का उद्‌घाटन–यथार्थवादी वही कवि हो सकता है जो आधुनिक जीवन की चुनौतियों को स्वीकार करता है और सत्य को ग्रहण करने का प्रयास करता है। 'मुक्तिबोध' ने अपने युग के मानव की पीड़ा, असमर्थता और विडम्बना को समीप से देखा था। यही नहीं जीवन की इस कड़वी सच्चाई से वे स्वयं भी भागते रहे। उन्होंने समझ के सच्चे और कटु पक्ष का यथार्थ वर्णन किया है। उनकी कविता समकालीन जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है। अतः 'मुक्तिबोध' का यथार्थ स्वयं का भोगा हुआ यथार्थ है। इसलिए **हरिशंकर परसाई** ने उनके विषय में लिखा है–**"वे संत्रास में जीते थे। आजकल संत्रास का दावा बहुत किया जा रहा है। मगर 'मुक्तिबोध' का एक चौथाई तनाव भी कोई झेलता तो उससे आधी उमर में मर जाता। आधुनिक भाव बोध के नाम पर यथार्थ का जो भ्रम जाल फैलाया गया 'मुक्तिबोध' ने इस मिथ्या चेतना को उद्‌घाटित कर 'आधुनिकता' में एक नया अर्थ दिया।**

यथार्थ का जितना अनुभव 'मुक्तिबोध' को है उतना सम्भवतः किसी ओर कवि को नहीं है। वे जिस यथार्थ का वर्णन करते हैं वे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित है। उनका यह यथार्थ कल्पना पर आधारित नहीं है। उन्होंने अपने जीवन के चारों और निराशा और सन्त्रास की प्रक्रिया को देखा इसलिए उनको सच्चे अर्थों में प्रगतिवादी कवि कहा जाता है। 'मुक्तिबोध' ने समाज के मध्य वर्ग को समाज में विशेष स्थान दिया है, क्योंकि वे स्वयं भी इसी कड़ी के सदस्य थे। जहाँ अन्य प्रगतिशील कवियों ने मार्क्सवाद की मान्यताओं के अनुसार मजदूरों और किसानों को अधिक महत्त्व दिया है वहीं 'मुक्तिबोध' ने मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों और दफ्तर के कर्मचारियों को अपनी कविता में अधिक स्थान दिया है। कवि इस मध्यम वर्ग को ही निम्न वर्ग कहता है जिसकी मानसिकता निम्न पूँजीवादी होती है। फलस्वरूप ये पूँजीपति वर्ग की ओर भी जाते हैं और मजदूर वर्ग की ओर भी। इस प्रकार के यथार्थ का उद्‌घाटन केवल 'मुक्तिबोध' ने ही किया है।

5. क्रांति का उद्‌घोष–क्रांति में 'मुक्तिबोध' की अखण्ड आस्था थी। उनका विचार था कि शोषक और शोषित वर्गों का अन्तिम विरोध जब चरम बिन्दु पर पहुँच जाएगा तो शोषित वर्ग अपनी संगठन शक्ति और सही नेतृत्व से शोषण पर टिकी हुई सत्ता को उखाड़ फेकेंगे। **'जिन्दगी बुरादा तो बारूद बनेगी ही'** शीर्षक कविता में वे कल्पना द्वारा क्रांति को अपनी आँखों के सामने घटित होते देखते हैं। इस कविता में कवि ने विद्वानों कवियों और चिंतकों की भूमिका पर भी प्रकाश डाला है जो हमेशा शोषक वर्ग का समर्थन करते रहते हैं। **'अंधेरे में'** कवि ने स्वीकार किया है कि वर्तमान समाज अधिक चल नहीं पाएगा।

'अंधेरे में' कविता में कवि ने सत्ता द्वारा समाज पर थोपे गए सेंसर की भी चर्चा की है, क्योंकि यह सेंसर क्रांतिकारी संघर्ष को नष्ट करना चाहता था। कवि का कथानायक अभिव्यक्ति के खतरों को झेलने की बात करता है।

"अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब।"

पुनः निरंकुश सरकार का प्रतिकार करने के लिए आम आदमी की क्रांति का जो वर्णन किया गया है वह बहुत ही प्रभावशाली बन पड़ा है। समाज के उपेक्षित एवं नगण्य लोग भी इसमें भाग लेते हुए चित्रित किए गए हैं।

"मकानों के छत से
गडर कूद पड़े धम से
घूम उठे खंभों
भयानक वेग से चल पड़े हवा में

कविवर 'मुक्तिबोध' प्रगतिवादी कवि होने के कारण ही क्रांति का आह्वान करता है। कवि का विचार है कि जीवन रूपी जंगल में अब क्रांति की आग लग चुकी है। इस आग का बुझना नामुमकिन है। यह आग अब पूँजीवादी अर्थव्यवस्था को जलाकर राख कर देगी।

'मुक्तिबोध' ने अपनी काव्य रचनाओं में युग जीवन में व्याप्त ना-ना प्रकार की विसंगतियों, विडम्बनाओं और विभाषिकाओं का यथार्थ वर्णन किया है। कवि ने अपने जीवन में ही इन विसंगतियों को भोगा और अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देखा तथा परखा। इसलिए उनकी कविता अपने समकालीनों में सर्वोत्कृष्ठ स्थान रखती है।

कवि ने आज के स्वार्थ लिप्सु तथा करुणाहीन व्यक्तियों पर भी करारा व्यंग्य किया है। क्षुद्र स्वार्थों के लिए अपनी आत्मा को बेचने के वाले लोग 'मुक्तिबोध' की पैनी नजर से नहीं बच सके हैं। इस प्रकार के स्वार्थी लोगों के बारे में वे लिखते हैं–

"लोहित-पिता को घर से निकाल दिया,
जन-मन करुणा-सी माँ को हंकाल दिया,
स्वार्थों के एरियार कुत्तों को पाल लिया
× × × × × ×
विवेक विचार डाला स्थार्थों के तेल में।"

कहीं-कहीं 'मुक्तिबोध' राजनैतिक तथा सामाजिक मूल्यों के पतन पर भी व्यंग्य करते हैं। 'मुक्तिबोध' का जीवन भयंकर आर्थिक संकट से ग्रस्त है, लेकिन उन्होंने न तो अपने सिद्धांतों को छोड़ा और न ही विषम परिस्थितियों से समझौता किया। हमेशा जीवन के आदर्शों का पालन करते रहे। 'अंधेरे में' कवि ने ऐसे कलाकारों पर करारा व्यंग्य किया है जो जन रोष की अनदेखी करते हैं और खून चूसने वाले पूँजीपति वर्ग के हाथ में बिके हुए हैं। वे लिखते हैं–

"सब चुप, साहित्यिक चुप और कविजन निर्वाक्
चिन्तक, शिल्पकार, नर्तक चुप हैं।
उनके ख्याल से यह सब रूप है।
मात्र किंवदन्ती।"

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'मुक्तिबोध' नयी कविता के सर्वाधिक प्रमुख कवि रहे हैं। वे सच्चे प्रगतिवादी कवि थे। भारतीय जीवन के उस पक्ष का उन्होंने वर्णन किया है जिसमें वे स्वयं पिसते रहे थे। 'मुक्तिबोध' जीवन भर जनविरोधी, समाज व्यवस्था और विचारधारा के विरुद्ध संघर्ष करते रहे। अपने युग की सारी अमानवीयता और संकट के बीच भी वे व्यस्था को बदलने के प्रति आस्थावान थे।

◆◆◆

2. 'मुक्तिबोध' की विश्व-दृष्टि

2. 'मुक्तिबोध' के काव्य के आधार पर 'मुक्तिबोध' की विश्व-दृष्टि की समीक्षा कीजिए।

अथवा

'मुक्तिबोध' की विश्व-दृष्टि की व्यापकता के महत्त्व को उद्घाटित कीजिए। **(Most Imp.)**

अथवा

'मुक्तिबोध' की 'विश्व-दृष्टि' का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

उत्तर–'मुक्तिबोध' की विश्व दृष्टि–विश्व दृष्टि का अर्थ है– सम्पूर्ण विश्व के बारे में कवि की सोच, कवि की दृष्टि और कवि का चिंतन। विश्व दृष्टि उसी कवि के पास हो सकती है जो प्रान्तीय, क्षेत्रीयता तथा राष्ट्रीयता से ऊपर उठकर सम्पूर्ण विश्व के लोगों की चिन्ता करता है और उनके दुःख-दर्द को अभिव्यक्त करने का साहस रखता है। 'मुक्तिबोध' पर प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि वे मार्क्सवादी चिंतन से अत्यधिक प्रभावित थे। फलस्वरूप उन्होंने प्रगतिवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए शोषकों तथा पीड़ितों के दुखों को अभिव्यक्त किया। एक स्थल पर कवि स्वीकार भी करता है– **"क्रमशः मेरा झुकाव मार्क्सवाद की ओर**

हुआ। **अधिक वैज्ञानिक अधिक मूर्त्त और अधिक तेजस्वी दृष्टिकोण मुझे प्राप्त हुआ।''** इसमें सन्देह नहीं कि 'मुक्तिबोध' मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रभावित थे, परन्तु यह भी एक सत्य है कि उनका मार्क्सवाद मात्र राष्ट्रीय सीमाओं तक ही सीमित नहीं है बल्कि वे सम्पूर्ण विश्व के मानव के दुखों की चिंता करते हुए नजर आते हैं। एक स्थल पर वे स्पष्ट कहते हैं– **''मेरे बाल मन की पहली मुख, सौन्दर्य और दूसरी विश्वमानव का सुख-दुःख– इन दोनों का संघर्ष मेरे साहित्यिक जीवन की पहली उलझन थी। इसका स्पष्ट वैज्ञानिक समाधान मुझे किसी से न मिला। परिणाम था कि इन अनेक आन्तरिक द्वन्द्वों के कारण एक ही काव्य-विषय नहीं रह सकता।''** उनके इस कथन से यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि वे केवल भारतीय मानव के सुख-दुख के प्रति सरोकार रखने थे बल्कि विश्व मानव के सुख-दुख की भी चिंता करते थे। उन्होंने न केवल नगर में रहने वाले लोगों की चिंता की बल्कि गाँव में रहने वाले लोगों के दुःख-दर्द को भी समझा। जीवनपर्यंत वे एक ही समस्या को लेकर चिंतित रहे। एक स्थल पर वे कहते भी हैं–

मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में सभी मानव
सुखी, सुन्दर वे शोषण मुक्त कब होंगे?

उपर्युक्त पंक्तियों में सभी मानव शब्द विचारणीय है। यहां कवि सम्पूर्ण मानव जाति की बात करता है, न कि केवल अपने देश के मानव की जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मुक्ति बोध के पास एक विश्व दृष्टि थी। वे संसार के सभी लोगों को सुखी देखना चाहते थे यही उनके काव्य की मूल चेतना है। मानवीय संवेदना ही उनकी कविता का प्रतिपाद्य है।

प्रायः लोगों को यह भ्रान्ति है कि विदेशों में सभी लोग सुखी और शोषण मुक्त हैं। इस भ्रांति का निवारण वही व्यक्ति कर सकता है जो दो-चार समृद्ध देशों में भ्रमण करके लौटा हो। अमेरिका को संसार का सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्र माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि वहाँ के सभी नागरिकों को सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं परन्तु यह हमारी भ्रांति है। अमेरिका में भी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था समाज के श्रमिकों और मजदूरों का शोषण कर रही है। वहाँ के मजदूरों और श्रमिकों के पास वे सुख-सुविधाएँ नहीं, जो होनी चाहिए। अमेरिका में न्यूयार्क एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ पर श्रमिक अक्सर प्रदर्शन करते रहते हैं और समाज के समक्ष अपनी माँगें प्रस्तुत करते रहते हैं। इसी प्रकार यदि अन्य समृद्ध राष्ट्रों के बारे में सोचा जाए तो गरीबों का शोषण वहाँ पर भी हो रहा है। 'मुक्तिबोध' के काव्य की मूल संवेदना है, विश्व मानव के सुख-दुख का उद्घाटन। कवि बार-बार समाज के असहाय, सामर्थ्यहीन तथा अभावग्रस्त लोगों की व्यथा-कथा को निरूपित करता हुआ दिखाई देता है।

यदि गहराई से देखा जाए तो 'मुक्तिबोध' की काव्य संवेदना ड्राइंग-सम-संस्कृति की संवेदना नहीं थी। उनका नाता छोटे-से-छोटे एवं नगण्य मनु पुत्र से था। उसका छोटे-से-छोटा दुख भी कवि को हृदय को कचोटता था और वे उसकी पीड़ा को स्वर देने के लिए अधीर हो उठते थे। उनकी कविताओं में सच्चे अर्थों में संसार के निम्न मध्य वर्ग और उसके जीवन की समस्याओं का समग्र चित्रण हुआ है। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

विशाल श्रमशीलता की जीवन्त
मूर्तियों के चेहरों पर
झुलसी हुई आत्मा की अनगिनत लकीरें।
मुझे जकड़ लेती है अपने में, अपना सा जानकर।

'मुक्तिबोध' का काव्य सत्-चित् का काव्य नहीं है, बल्कि यह सत्-चित् और वेदना का काव्य है। यह वेदना मात्र कवि की नहीं है बल्कि यह सम्पूर्ण मानव जाति की वेदना है जिसका चित्रण कवि अपनी कविताओं में करता है। उन्होंने व्यक्ति और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों की पारस्परिक व्याख्या की है, यही कारण है कि 'मुक्तिबोध' के काव्य को मानवता का दस्तावेज कहा गया है। कवि का विचार है कि मानवता अमर है और मानवता की धारा को आगे बढ़ाते रहना ही सृजनशीलता है। कवि पुरातन को नष्ट करने के लिए मरण गीत गाता है और जन-जन में नई ज्योति, नई आशा जगाता है–

हम घुटनों पर नाश देवता
बैठ तुझे करते हैं वन्दन
मेरे सिर पर एक पैर रख
नाप तीन जग तू असीम बन।

'मुक्तिबोध' अपनी काव्य-रचनाओं में विश्व मानव की असहायता, घुटन और छटपटाहट को रेखांकित करता है और इनसे मुक्त होने के लिए मार्ग खोजना चाहता है। वह निर्बल मानव के मुख को नई आशा से ज्योतिर देखना चाहता है। कवि सामान्य जन को कर्मठ बनाना चाहता है। यही कारण है कि वे श्रमहारा को सृजन की शक्ति ग्रहण करने और संघर्ष की प्रेरणा देते हैं–

प्रत्येक पत्थर में
चमकता हीरा है
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है
प्रत्येक सुस्मित में विमल सदानीरा है
प्रत्येक वाणी में
महाकाव्य पीड़ा है।

'मुक्तिबोध' अग्निधर्मी चेतना के कवि कहे गए हैं। यही कारण है कि उनके काव्य में प्रतिक्रिया एवं विद्रोह के तत्त्व देखे जा सकते हैं। उनके भाई शरतचंद्र ने उन्हें True Rebel कहा था। 'चाँद का मुहँ टेढ़ा है' नामक काव्य संग्रह में शोषण और यातना का यथार्थ वर्णन हुआ है लेकिन इस काव्य संग्रह से पहले ही तार सप्तक में वे पूंजीवादी समाज के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त कर चुके थे। एक कविता में वे कहते भी हैं–

तेरी रेशमी वह शब्द संस्कृति अन्ध
देती क्रोध मुझको, खूब जलता क्रोध
तुझको देख मितली उमड़ आती शीघ्र

उनकी कविता 'भूल-गलती' आम आदमी की आन्तरिक कुव्यवस्था का प्रतीक है। समाज में ऐसी व्यवस्था स्थापित हो चुकी है जिसमें केवल सुविधा भोगी ही पनप सकते हैं। वे अवसरवादिता को अच्छी प्रकार पहचानते थे तथाकथित। महानुभावों एवं अनुभव समृद्ध विद्वानों को शहर के गुण्डे रोमा जी उस्ताद और संगीनधारी सैनिकों के साथ खड़ा कर देने का साहस रखते थे। कवि ने इन सबको राक्षसी स्वार्थ के पुतले कहा है। उनकी दृष्टि में ये भूत-पिशाचकाय हैं। कवि का विचार था कि जब-जब शोषण पर आधारित व्यवस्था पनपती है सभ्यता मर जाती है। 'अंधेरे में' नामक कविता से एक उदाहरण देखिए-

कमर में, चमड़े के कवर में पिस्तौल,
रोषभरी एकाग्र दृष्टि में धार है,
कर्नल, ब्रिगेडियर, जनरल, मार्शल
कई और सेनापति सेनाध्यक्ष
उनमें कई प्रकाण्ड आलोचक, विचारक, जगमगाते कवि-गण
मन्त्री भी, उद्योगपति और विद्वान
यहाँ तक कि शहर का हत्यारा कुख्यात
डोमा जी उस्ताद
बनता है बलबन
हाय, हाय!!

'मुक्तिबोध' ने आधुनिक सभ्यता की विसंगतियों तथा विद्रूपताओं पर करारा व्यंग्य किया है। चाँद और चाँदनी के माध्यम से उन्होंने मूल कथ्य को उभारा है। उन्होंने आज के जमाने का निर्मम, कठोर और कुरूप चित्र प्रस्तुत किया है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले शोषण तथा भ्रष्टाचार को अपनी कविता 'बाहर बने रात के' में व्यक्त करते हैं। यहाँ चाँद आसमानी तख्त पर सोने की गिन्नी सा चेहरा लिए बैठे है और यूरोपीय सभ्यता के भव्य भवनों का ठाठ मुस्कराकर देखता है। यह चाँद अंग्रेजी साम्राज्यवाद का प्रतीक है जो अपने बढ़ते हुए साम्राज्य और ऐश्वर्य को देखकर मुस्कराने लगता है। इसके साथ-साथ कवि ने साम्राज्य विस्तार के लिए किए गए षड्यंत्रों और रक्तपात की भी पोल खोली है। वे लिखते भी हैं–

खून की लकीरों से
देश- विदेशों की नई-नई
खूनी लाल-खूनी लाल
सरहदें-सीमाएँ बनाते ही जाते हैं।

अपने समकालीन समाज में व्याप्त अनेक प्रकार के भ्रष्टाचारों के लिए कवि स्वयं को और साहित्यकारों को अपराधी समझने लगता है। 'अंधेरे में' नामक कविता में उनकी यह भावना बड़े ही तीव्रतम रूप में अभिव्यंजित हुई है। कवि चाहता था कि वह सम्पूर्ण मानव जाति को सुख-समृद्धि प्रदान करने के लिए काव्य रचना करे। प्राकान्तर से वह यह आशा करता था कि साहित्यकार वर्ग केवल अपने देश की नहीं, अपितु विश्व की मानव जाति के कल्याण के लिए काव्य रचना करेंगे। परन्तु ऐसा हो नहीं पाया। अधिकांश साहित्यकार सीमित घेरे में ही जकड़े हुए काव्य रचना करते रहे। कवि यह भी स्वीकार करता है कि वह भी मानव जाति के कल्याणार्थ कुछ नहीं कर सका। इसके लिए वह अपराध बोध से ग्रसित है। यही दृष्टि उसे विश्व दृष्टि प्रदान करती है। कवि कहता भी है–

मानो मेरे कारण ही लग गया
मार्शल-लॉ वह,
मानो मेरी निष्क्रिय संज्ञा ने संकट बुलाया,
मानो मेरे कारण ही दुर्घट
हुई यह घटना।

इसी प्रकार कवि ने स्वार्थ से अंधे बने हुए साहित्यकारों पर भी करारे व्यंग्य किए हैं। इसके साथ-साथ कवि स्वयं से यह प्रश्न करता है–

ओ मेरे आदर्शवादी मन,
ओ मेरे सिद्धान्तवादी मन,
अब तक क्या किया?
जीवन क्या किया!!

उपर्युक्त पंक्तियों से यह स्पष्ट होता है कि कवि ने निजी अस्तित्व के प्रति यह संबोधन किया है लेकिन निम्नलिखित पंक्तियों में कवि ने समानधर्मी उन साहित्यकारों की स्वार्थपरता की निंदा की है जो पूंजीपति वर्ग की चाटुकारिता में संलग्न हैं–

उदरम्भरि अनात्म बन गये
भूतों की शादी में कनात से तन गये
किसी व्यभिचारी के बन गए बिस्तर।

ऐसे कवियों-कलाकारों की जिन्दगी को-जो अपने व्यक्तिगत राग-द्वेष को मुखरित करना ही साहित्य साधना समझते हैं– जिन्हें समाज के सुख-दुखों की कोई परवाह नहीं है– कवि ने निश्चेष्ट पड़े रहने वाले तलघर से उपनित किया है–

दुखों के दागों का तमगों-सा पहना
अपने ही ख्यालों में दिन रात रहना
असंग बुद्धि व अकेले में सहना
जिंदगी निष्क्रिय बन गयी तलघर।

'मुक्तिबोध' मात्र जनवादी कवि नहीं थे, बल्कि विश्व दृष्टि रखने के कारण वे मानवतावादी कवि भी थे। उनका व्यक्तित्व जाति-पाँति, ऊँच-नीच तथा अपने-पराए आदि के संकुचित भावों से मुक्त था। उनके कवि हृदय में उदार मानवीय अनुभूतियाँ थीं। उनके काव्य में दो स्थलों पर मानवतावाद का प्रतिपादन हुआ है। पहले स्थल पर उन्होंने समाज में बढ़ती हुई मूल्यहीनता का चित्रण किया है और दूसरे स्तर पर वे स्वयं को मानव मात्र की पीड़ा से जोड़ते हैं और उसे सुखी बनाने का प्रयास भी करते हैं। कवि का स्पष्ट कथन है कि समाज में बढ़ती हुई मूल्यहीनता के का'ण ही पूँजीवादी सभ्यता पनप रही है। पूंजीपति येन-केन-प्रकारेण पूंजी संग्रह में विश्वास करता है। उसे मानव मूल्यों की कोई चिंता नहीं है। इस सन्दर्भ में कवि एक स्थल पर लिखता भी है–

"इतने प्राण, इतने हाथ, इतनी बुद्धि
इतना ज्ञान, संस्कृति और अन्तः शुद्धि
इतना दिव्य इतना भव्य इतनी शक्ति
यह सौन्दर्य, यह वैचित्र्य, ईश्वर भक्ति।"

कवि ने पूंजीवादी सभ्यता को रेशम का आवरण कहा है और उसके विनाश की कामना की है। कवि ने उन लोगों पर करारे व्यंग्य-किए हैं जो भारतीय संस्कृति और मूल्यों की भाषा बोलकर लोगों को धोखा देते हैं और अपने स्वार्थों को पूरा करते हैं। कवि का कथन है कि राजनीति और साहित्य जगत में भी इस प्रकार के धोखेबाज विद्यमान हैं। ये लोग असत्य का सहारा लेकर अपने स्वार्थ को पूरा करने में संलग्न हैं। कवि लिखता भी है–

"राजनीति-साहित्य-क्षेत्र भी
महा असत्य-शूकरो का है एक तमाशा
यद्यपि बोली जाती मुँह से
भारतीय संस्कृति की भाषा।"

कवि के विचारानुसार पूंजीवादी सभ्यता का समर्थन करने वाले लोग अवसरवादी हैं। कवि के विचारानुसार इनका सम्बन्ध मूल्यहीन मध्य वर्ग से है, जो अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए पूंजीपतियों के पीछे-पीछे दुम हिलाते हुए फिरते हैं। मूल्यहीन समाज को देखकर कवि बड़ा दुखी है। ऐसे समाज को वह कौरव नगरी कहता है–

"इस नगरी में कौरव के हर
वीर द्रौण की थकन भरी है भूरि-भूरि
पीली है सूरत अनचाहों की सेवा में
कुन्ती-पुत्र कर्ण-कृप-सात्यकि की ग्रीवा में
कुत्ते की गर्दन का पट्टा।"

अपनी लम्बी कविता अंधेरे में कवि ने विश्व में बढ़ती मूल्यहीनता पर प्रकाश डाला है। समाज की इस मूल्यहीनता को देखकर कवि का हृदय व्याकुल हो जाता है। कवि का कथन है कि मूल्यहीनता का प्रमुख कारण पूंजीवादी अर्थव्यवस्था है। जब तक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का उन्मूलन नहीं हो जाता तब तक विश्व का आम आदमी दुःखों को भोगता रहेगा। आज विश्व का प्रत्येक व्यक्ति पूंजीवादी सभ्यता के चक्र में फँसा हुआ है। मात्र किसी ऐसे अभिमन्यु की आवश्यकता हैं जो इस चक्रव्यूह को तोड़ सके और मानवजाति का कल्याण कर सके।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि 'मुक्तिबोध' का काव्य उनके जीवन का प्रतिबिम्ब है। उन्हें तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक शक्तियों की पूरी जानकारी थी। भले ही वे मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित हुए और उन्होंने सर्वहारा वर्ग की व्यथा-कथा का चित्रण किया, लेकिन मूलतः वे मानवतावादी कवि थे। उनकी विश्व-दृष्टि बड़ी ही व्यापक और विस्तृत थी। उन्होंने राष्ट्र को लांघकर अन्तर्राष्ट्रीय मानव जाति को स्वयं से जोड़ने का प्रयास किया। उनकी कविताएं विश्व के आम आदमी के लिए सरोकार रखती हैं।

◆◆◆

3. 'मुक्तिबोध' : सामाजिक चेतना

3. 'मुक्तिबोध' की सामाजिक चेतना का विवेचन कीजिए।

अथवा

'मुक्तिबोध' की सामाजिक चेतना की व्यापकता पर प्रकाश डालिए।

अथवा

'मुक्तिबोध' के समाज-दर्शन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–'मुक्तिबोध' की सामाजिक चेतना–'मुक्तिबोध' का प्रायः सम्पूर्ण जीवन आर्थिक विषमताओं से जूझता हुआ व्यतीत हुआ। उन्होंने आर्थिक अभाव तथा शोषण की चक्की में पिसते हुए लोगों को देखा और स्वयं भी आर्थिक अभावों के शिकार बने रहे, लेकिन फिर भी कवि ने न तो परिस्थितियों के सामने घुटने टेके और न ही समाज के रावणों से समझौता किया।

'मुक्तिबोध' की सामाजिक चेतना मार्क्सवाद से अत्यधिक प्रभावित है। मार्क्सवाद के प्रति कवि की आस्था आकस्मिक नहीं है, बल्कि यह गम्भीर अध्ययन चिन्तन तथा अनुभूत वास्तविकताओं पर आधारित है। एक समय 'मुक्तिबोध' रवीन्द्र और गाँधी जी

की विचारधारा से प्रभावित रहे थे। परन्तु जीवन के कटु यथार्थ को भोगने के बाद उनका झुकाव मार्क्सवाद की ओर होने लगा। कुछ समय तो वे कांग्रेस पार्टी के सदस्य भी रहे थे, लेकिन उन्होंने न तो पार्टी के कार्यक्रमों में भाग लिया और न ही मार्क्सवादी कवियों के समान नारेबाजी की। फिर भी मार्क्सवाद में उनकी पूर्ण निष्ठा थी। एक स्थल पर वे कहते भी हैं–**"मेरे बाल मन की पहली भूख सौन्दर्य और दूसरी मानव का सुख-दुःख। इन दोनों का संघर्ष मेरे साहित्यिक जीवन की पहली उलझन थी।"** 'मुक्तिबोध' ने अपनी आँखों से देखा कि मानव जीवन और उसके परिवेश में काफी बड़ी विषमता है। समाज में किसी प्रकार का तालमेल नजर नहीं आता। भारतीय समाज की यह विषमता ही उनके मन की गहरी बेचैनी और तीव्र छटपटाहट का कारण बन गई। वे इस स्थिति का कोई न कोई हल खोजना चाहते थे लेकिन यह कार्य इतना सहज नहीं था। सम-सामायिक युग में सामाजिक और आर्थिक विषमता को देखकर कवि असन्तुष्ट हो चुका था और वह ऐसी व्यवस्थित प्रणाली को खोजने लगा जिसके कारण इस विषमता को दूर किया जा सके। फलस्वरूप कवि को लगा कि मार्क्सवाद द्वारा ही इस समस्या का हल निकाला जा सकता है। लेकिन आगे चलकर मार्क्सवाद से उत्पन्न कवि की वैचारिक पकड़ ढीली होती चली गई। एक बार तो कवि को यह विश्वास हो गया था कि सन् 1980 तक देश में समग्र क्रांति हो जाएगी और ये विषमता समाप्त हो जाएगी। दूसरी ओर कवि ने स्वयं भी विषमताओं और विसंगतियों को भोगा। फलस्वरूप कवि प्रगतिवाद की राह पर चल पड़ा।

निम्नलिखित बिन्दुओं को आधार बनाकर 'मुक्तिबोध' के सामाजिक चेतना के बारे में चिन्तन किया जा सकता है–

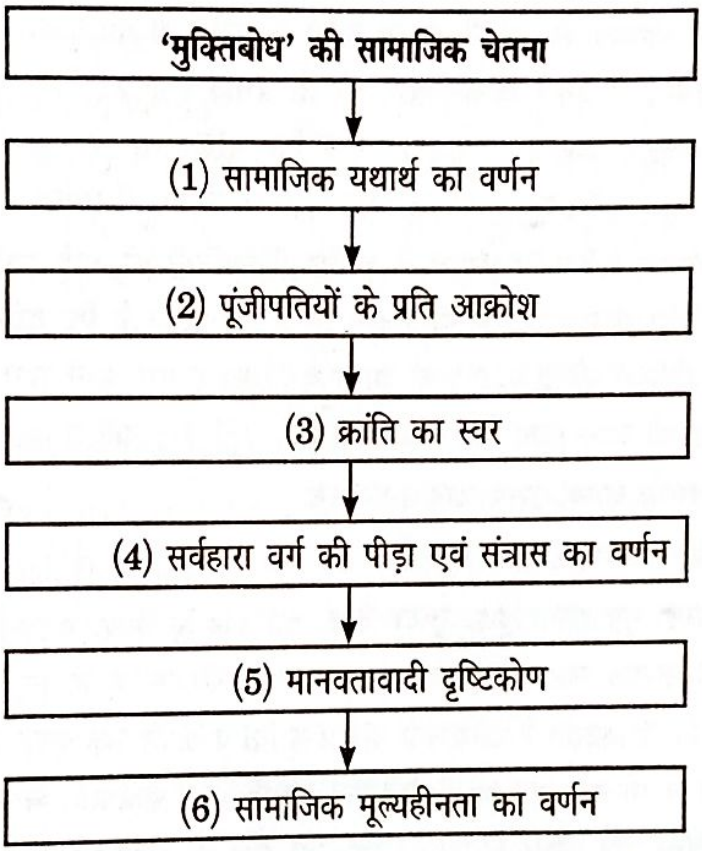

1. सामाजिक यथार्थ का वर्णन–'मुक्तिबोध' की सामाजिक चेतना का मूल आधार है–सामाजिक यथार्थ का वर्णन। कवि ने अपनी अधिकांश कविताओं में सम-सामायिक सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया है। उनके विचारानुसार भारतीय यथार्थ भीषण दुःस्वप्न के समान है। इन्हीं को आधार बनाकर कवि ने कुछ यथार्थपरक कविताएँ लिखी हैं। इस प्रकार की कविताओं को वे 'भयानक हिडिम्बा' कहते हैं। सामाजिक यथार्थ को आधार बनाकर कवि यदि एक ओर पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का यथार्थ वर्णन करता है तो दूसरी ओर मध्य वित्त वर्ग की विसंगतियों और विडम्बनाओं का उद्‌घाटन करता है। कवि को लगता है कि मध्यवर्ग के लोग हमेशा अवसरवादिता की ओर चलते हैं। कालिदास और यक्ष के माध्यम से वे कलाकारों के जीवन के यथार्थ पर प्रकाश डालते हैं। एक स्थल पर वे लिखते भी हैं–

"बेच रहा है कालिदास सड़कों पर कंघी
लगा चाहे दुकान यक्ष सब का है संघी।"

'मुक्तिबोध' के अनुसार, पूँजीवादी सभ्यता ने ही हमें शहरी जीवन प्रदान किया है। इसमें एक ओर तो बाहरी चमक-दमक और झूठी शान है तो दूसरी ओर मजदूरों की शोषित जिन्दगी है। नगर के इस दोहरे जीवन को कवि ने अपनी आत्मा की गहराई

में अनुभव किया है। कवि का कहना है कि एक नगर में मानो दो नगर निवास करते हैं। पहला नगर तो वैभव और विलास का नगर है और दूसरा नितांत विवश है। **'मुझे याद आते हैं'** नामक कविता में लिखते हैं–

"पाऊडर में सफेद अथवा गुलाबी
छिपे बड़े-बड़े चेचक के दाग मुझे दीखते हैं।
सभ्यता के चेहरे पर।"

'मुक्तिबोध' आधुनिक मानव जीवन तथा उसकी समस्याओं से पूर्णतया परिचित थे। वे अच्छी प्रकार से जानते थे कि आज के मानव को न जाने प्रतिदिन कितनी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

2. पूँजीपतियों के प्रति आक्रोश–पहले बताया जा चुका है कि 'मुक्तिबोध' एक जनवादी कवि थे। उन्होंने अपने जीवन काल में कार्ल मार्क्स तथा उनके चिन्तन का गम्भीर अध्ययन किया था। वे स्वीकार करते हैं कि क्रमशः मेरा झुकाव मार्क्सवाद की ओर हुआ। अधिक वैज्ञानिक, अधिक मूर्त और अधिक तेजस्वी दृष्टिकोण मुझे प्राप्त हुआ। इस सन्दर्भ में **डॉ. मदन गुलाटी** लिखते भी हैं–**"युवा 'मुक्तिबोध' ने मार्क्स दर्शन का गहन अध्ययन और मनन किया था। उनके कवि मानस पर उसका गहरा प्रभाव भी पड़ा था। वह जीवनानुभवों की विविधता और व्यापकता जैसे-जैसे उनके सामने प्रत्यक्ष होती गई, मार्क्स दर्शन से पैदा हुई वैचारिक पकड़ ढीली होती गई। इस पहचान के बाद से वे इस दर्शन के प्रभाव से बाहर आने की बराबर कोशिश भी करते रहे। पर मार्क्सवाद के सिद्धान्तों और विचारों ने उनके दिलो-दिमाग पर जो प्रभाव पैदा कर दिया था, उनकी जड़ें बहुत गहरी थीं। वे उससे जूझने के बावजूद भी उससे उभर न पाए थे।"** यही कारण है कि 'मुक्तिबोध' का काव्य मार्क्सवाद की साहित्यिक व्याख्या न होकर मार्क्सवाद का विवेचन है। उनके काव्य को हम राजनैतिक प्रचार के रूप में प्रयोग भी कर सकते हैं।

'पूँजीवादी समाज के प्रति' नामक कविता में समाज के शोषित पूँजीपतियों को आड़े हाथों लिया है। वे शोषण पर्क नीतियों की तीव्र भर्त्सना करते हैं। इस कविता में उन्होंने यह भी बताने का प्रयास किया है कि गरीबों का शोषण करने वाले पूँजीपति अनेक प्रकार का आश्वासन देकर शोषितों की क्रोधाग्नि को शान्त करने का प्रयास करते रहते हैं। लेकिन उनके प्रयत्न बेकार हैं, क्योंकि सर्वहारा वर्ग उनकी सच्चाई को जान चुका है। अधिक देर तक उन्हें मूर्ख नहीं बनाया जा सकता–

"इतना काव्य, इतने शब्द इतने छन्द
जितना ढोंग, जितना भोग है निबंध
इतना गूढ़ इतना गाढ़, सुन्दर जाल
केवल एक जलता सत्य देते टाल।"

कवि बार-बार पूँजीपतियों को ललकारता है और उन्हें कहता है कि वे अपने छल-कपट द्वारा शोषितों को फाँसने का प्रयास न करें। कवि को पूँजीवाद के खून में भी सत्य का अवरोध दिखाई देता है। वह पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति आक्रोश और घृणा की भावनाएँ व्यक्त करता है। 'मुक्तिबोध' की विहार शिक्षक कविता इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

3. क्रान्ति का स्वर–समाज में व्याप्त इस आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए 'मुक्तिबोध' ने हमेशा क्रांति को उचित ठहराया। कामायनी की आलोचना में कवि ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि शोषक सत्ता का खात्मा क्रान्ति से ही किया जा सकता है। स्थल पर वे लिखते हैं, **"अपने कष्टानुभव की सामाजिकता से अपनी वर्गीय विशेषता के फलस्वरूप वे तुरन्त संघबद्ध होकर अपने दीर्घकालीन तथा सुविस्तृत संघर्षों को क्रांति के रूप में परिणत कर देते हैं। गरीब वर्गों के लिए क्रांति मनुष्यता का तकाजा है। 'चम्बल की घाटी'** नामक कविता में वे लिखते भी हैं–

"कभी अकेले में मुक्ति नहीं मिलती।
यदि वह है तो सबके साथ है।"

श्री नन्द किशोर नवल ने इस सन्दर्भ में लिखा भी है–**"क्रांति में 'मुक्तिबोध' की अखंड आस्था थी। इतिहास की गति के अवलोकन और इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या से उन्होंने जान लिया था कि शोषक और शोषित वर्गों का अति विरोध जब चरम बिन्दु पर पहुँच जाएगा, तो शोषित वही अपनी संगठित शक्ति और सही नेतृत्व से शोषण पर टिकी हुई सत्ता को उखाड़ फेंकेंगे।**

'जिन्दगी बुरादा तो बारूद बनगा हा' शीर्षक कविता में उन्होंने अपनी कल्पना में क्रांति को आँखों के सामने घटित होते देखा है। इस कविता में उन्होंने मध्यवर्गीय विद्वानों, कवियों और चिंतकों की भी क्रांतिकालीन भूमिका पर प्रकाश डाला है, जो अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए शोषक वर्ग का हर तरह से समर्थन करते हैं। जब क्रांति हो रही है ये 'साहित्य और संस्कृति के रजतशंखधर' 'घंटा घर की घड़ी के काँटों को पकड़कर लटके हुए हैं। ये नहीं चाहते कि इतिहास की घड़ी की सुइयाँ आगे खिसकें।"

'अंधेरे में' शीर्षक कविता में 'मुक्तिबोध' ने एक स्थल पर लिखा भी है–

"कविता में कहने की आदत नहीं
पर कह दूँ।
वर्तमान समाज चल नहीं सकता।"

4. सर्वहारा वर्ग की पीड़ा एवं संत्रास का वर्णन–'मुक्तिबोध' ने स्वयं जीवनगत विषमता को भोगा। अन्तर्बाह्य संघर्ष के कारण वे असफलता एवं असन्तोष को भोगते रहे। कभी-कभी तो कवि असन्तोष एवं पराजय की स्थिति में कवि मन और शरीर में शक्तिहीनता अनुभव करने लगता है। कवि लिखता भी है–

"प्राण की बुरी है हालत
और जर्जर देह
यह है खरी हालत।"

आरम्भ में कवि ने भले ही वैयक्तिक दुःख एवं वेदना की बार-बार चर्चा की हो, लेकिन आगे चल कर वे सर्वहारा वर्ग की पीड़ा और संत्रास का वर्णन करने लगते हैं। जो अभाव और पीड़ा कवि ने स्वयं भोगी, वही उसे सर्वहारा वर्ग में भी दिखाई दी। अतः कवि की सामाजिक चेतना धीरे-धीरे गहराने लगी। कवि लिखता भी है–

"घनी रात बादल रिमझिम हैं, दिशा मूक निस्तब्ध वनांतर।
व्यापक अन्धकार में सिकुड़ी सोई नर की बस्ती भयंकर।।
है निस्तब्ध गगन रोती-सी सरिता-धार चली गहराती।
जीवन लीला को समाप्त कर मरण सेज पर है कोई नर।।"

5. मानवतावादी दृष्टिकोण–भले ही 'मुक्तिबोध' एक जनवादी कवि थे, लेकिन वे मानवतावादी कवि भी थे। उनका व्यक्तित्व जाति-पाति, ऊँच-नीच तथा अपने-पराए आदि के संकुचित भावों से मुक्त था। उनका व्यक्तित्व उदार मानवीय अनुभूतियों से सराबोर था। उन्होंने जाति तथा कुल के बंधनों को त्यागकर सामाजिक विरोध की परवाह न करते हुए शान्ता से प्रेम विवाह किया था। अपने इस मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण उनका प्रेम शोषितों और दलितों के लिए दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था।

'मुक्तिबोध' के काव्य में मानवतावाद का प्रतिपादन दो स्थलों पर हुआ है। पहले स्थल पर उन्होंने समाज में बढ़ती हुई मूल्यहीनता का चित्रण किया है। दूसरे स्तर पर कवि ने स्वयं को मानव मात्र की पीड़ा से जोड़ा है और उसे सुखी बनाने का प्रयास किया है। कवि का स्पष्ट कहता है कि समाज में बढ़ती हुई मूल्यहीनता का मूल कारण पूँजीवादी सभ्यता है। जैसे **'येन-केन प्रकारेण'** पूँजी संग्रह में विश्वास करती है। उसे मानव मूल्यों की कोई चिन्ता नहीं है। इस सन्दर्भ में कवि लिखता भी है–

"इतने प्राण, इतने हाथ, इतनी बुद्धि
इतना ज्ञान, संस्कृति और अन्तःशुद्धि
इतना दिव्य, इतना भव्य, इतनी शक्ति
यह सौन्दर्य, यह वैचित्रय, ईश्वर भक्ति।"

जो लोग पूँजीवादी सभ्यता का समर्थन करते हैं वे निश्चय ही अवसरवादी हैं। कवि इनको मूल्यहीन मध्य वर्ग कहता है जो अपना पेट भरने के लिए पूँजीपतियों के पीछे-पीछे कुत्ते के समान दुम हिलाते हुए घूमते-फिरते हैं। मूल्यहीन सामाजिक परिवेश को देखकर कवि अत्यधिक दुखी है। वह ऐसे समाज को कौरव नगरी कहता है।

"इस नगरी में कौरव के हर
वीर द्रोण की थकन भरी है भूरी-भूरी

पाली है सूरत अनचाहा का सेवा में

कुन्ती-पुत्र कर्ण-कृप-सात्यकि की ग्रीवा में

कुत्ते की गर्दन का पट्टा।"

6. सामाजिक मूल्यहीनता का वर्णन–अपनी लम्बी कविता **'अंधेरे में'** में 'मुक्तिबोध' ने समाज में बढ़ती हुई मूल्यहीनता का चित्रण किया है। वह अद्वितीय बन पड़ा है। आज हमारे समाज में चारों ओर भ्रष्टाचार फैला हुआ है और प्रत्येक व्यक्ति भ्रष्टाचार के कीचड़ में अकण्ठ डूबा हुआ है। चारों ओर मूल्यहीनता बढ़ती जा रही है।

"ओ मेरे आदर्शवादी मन

ओ मेरे सिद्धान्तवादी मन

अब तक क्या किया?

जीवन क्या जिया!

उदरं भरि बन अनात्म बन गये

भूतों की शादी में कनात से तन गये।

किसी व्यभिचारी के बन गये बिस्तर

बताओ कि किस किस के लिए तुम दौड़ गये,

करुणा के दृश्यों से हाय! मुँह मोड़ गये।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'मुक्तिबोध' की कविताएं उनके जीवन का प्रतिबिम्ब हैं। उनका काव्य अपने सृजन में अन्तर्मुखी होकर भी अपने सम्प्रेषण में बहिर्मुखी है। उनको सामाजिक शक्तियों की गहन समझ थी। राजनीतिक व्यवस्था के प्रति वे पूर्णतया जागरूक थे। उन्होंने मार्क्सवादी विचारधारा को अपने जीवन और साहित्य में ईमानदारी के साथ अपनाया। वे हमेशा सर्वहारा वर्ग के साथ खड़े रहे। उनकी संवेदनाएँ हमेशा शोषित और दलित वर्ग की पीड़ा तथा व्यथा को रेखांकित करती रहीं।

◆◆◆

4. 'मुक्तिबोध' : काव्य-शिल्प

---

4. 'मुक्तिबोध' के काव्य-शिल्प की समीक्षा कीजिए।

अथवा

'मुक्तिबोध' के अभिव्यंजना शिल्प पर प्रकाश डालिए।

अथवा

'मुक्तिबोध' की कविता के कला पक्ष की भाषा, प्रतीक, बिंब, छंद, अलंकारों की दृष्टि से विवेचना कीजिए।

उत्तर–'मुक्तिबोध' : काव्य-शिल्प–'मुक्तिबोध' के काव्य का शिल्प पक्ष उनके भाव पक्ष के समान काफी समृद्ध है। एक स्थल पर वे नयी कविता के कला पक्ष पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं–

"जड़ीभूत सौन्दर्याभिरुचि के फलस्वरूप ही कुछ साहित्यिक समाजशास्त्री अपने दर्रे के बाहर के क्षेत्र में प्रचलित नयी काव्य समृद्धि में विद्रूपता के अतिरिक्त कुछ नहीं देखते।" भाव यह है कि 'मुक्तिबोध' की दृष्टि में सौन्दर्यभिरुचि जड़ नहीं होनी चाहिए, प्रवाहमान होनी चाहिए। इसलिए 'मुक्तिबोध' पाठक को पहले ही सजग कर देते हैं। उनका यह भी विचार था कि जब कवि अभिव्यक्ति के लिए संघर्ष करता है उसे अपने शिल्प को माँजना चाहिए। तभी वह प्रभावशाली कविता लिख सकता है। 'मुक्तिबोध' ने अपनी कविता के शिल्प पक्ष को यथासम्भव सजाया और सँवारा। साथ ही उसे नवीन संस्कार भी दिया।

'मुक्तिबोध' के काव्य-शिल्प की समीक्षा निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत की जा सकती है–

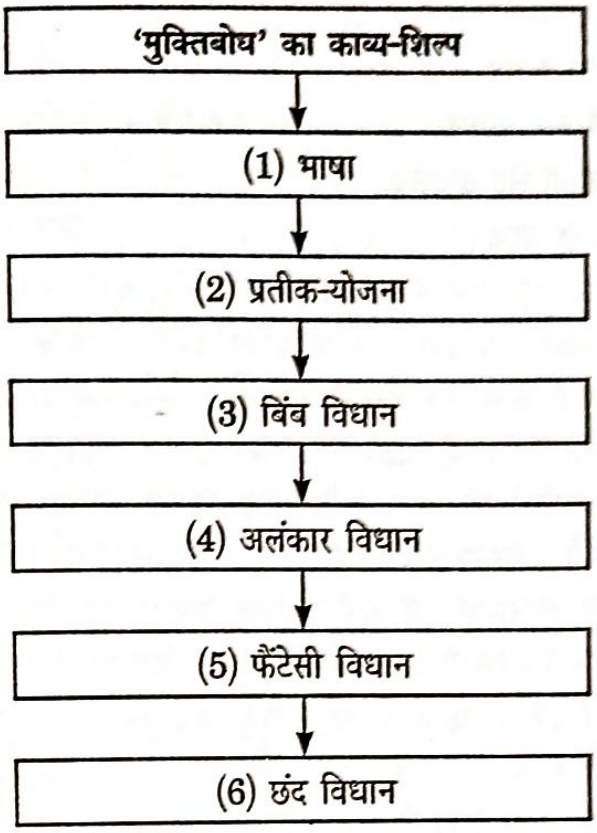

1. भाषा–अन्य प्रयोगवादी कवियों की तरह 'मुक्तिबोध' ने अपनी भावाभिव्यंजना को सजीव बनाने के जिस सक्षम भाषा का प्रयोग किया है। उनकी भाषा पूर्णतया मौलिक है जिसमें तत्सम्, तद्भव, देशज तथा विदेशज सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग हुआ है। संस्कृतनिष्ठ पदावली के प्रति कवि को कोई मोह नहीं था। उन्होंने कहीं पर भी अपने विचारों और भावों को भाषा का अनुसरण नहीं करने दिया बल्कि भावानुरूप ही भाषा का प्रयोग किया है। फलस्वरूप उनके काव्य में अंग्रेजी, उर्दू, फारसी और संस्कृत के शब्दों का प्रयोग देखा जा सकता है। अरबी, फारसी और उर्दू शब्दावली से ओत-प्रोत कविता का एक उदाहरण देखिए–

"खूँखार, सिनिक संशयवादी
शायद मैं कहीं न हो जाऊँ
इसलिए बुद्धि के हाथों-पैरों की बेड़ी
जंजीरें खनका कर तोड़ीं
तुमने निर्दय औजारों से,
टूटती बेड़ियों की नोकों
से जख्म हुआ और खून बहा"

अंग्रेजी की शब्दावली के प्रति भी 'मुक्तिबोध' को कोई परहेज नहीं है बल्कि वे इसका अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में प्रयोग करते हैं। कवि ने क्विक-मार्च, प्रोसेशन, आर्टिलरी, गैसलाइट, केवेलरी डिसेक्शन, मार्शल लॉ, ऑक्सीजन, कर्नल आदि शब्दों का बड़े धड़ल्ले से प्रयोग किया है। **"अंधेरे में"** कविता से एक उदाहरण देखिए–

"केवेलरी!
काले-काले घोड़ों पर मिलिट्री ड्रेस
चेहरे का आधा भाग सिंदूरी गेरुआ"

'मुक्तिबोध' की काव्य भाषा में नसेधार, नक्षे, हंकाल दिया, गजर, कंदील, पूर, बास आदि मराठी शब्दों का भी प्रयोग किया है। जहाँ कहीं वे विदेशी शब्दों का प्रयोग करते हैं वहाँ वे शिल्पकार की तरह शब्दों को तराशने लगते हैं जैसे लहरीला, कोरीला, धूमेले, रोगीला आदि। वस्तुतः 'मुक्तिबोध' जनजीवन में प्रचलित विदेशी शब्दावली का ही प्रयोग करते हैं। अपने कथ्य को सम्प्रेष्य बनाने के लिए मुहावरों और कहावतों का भी प्रयोग कर लेते हैं। मुहावरे का यह प्रयोग उनकी काव्य रचना को जनभाषा के समीप लाता है। इसके साथ अर्थ में भी चमत्कार उत्पन्न करता है। 'मुक्तिबोध' ने लोक प्रचलित कहावतों का तो प्रयोग नहीं किया लेकिन मुहावरों के प्रयोग के कारण उनकी भाषा सशक्त बन गई है।

'ब्रह्मराक्षस' नामक कविता से चित्रात्मक भाषा का उदाहरण देखिए–

"ब्रह्म राक्षस
घिस रहा है देह
हाथ के पंजे बराबर
बाहर छाती मुँह छपाछप
खूब करते साफ।"

2. प्रतीक योजना–'मुक्तिबोध' की कविताओं में नाना-प्रकार के प्रतीकों की योजना की गई है। इस दृष्टि से अंधेरे में शीर्षक कविता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रतीकों के द्वारा वे अनेक प्रकार की स्थितियों को उभारते हैं और अपनी अभिव्यक्ति शैली को समर्थ बनाते हैं। 'मुक्तिबोध' ने अपनी काव्य रचनाओं में प्रतीकों का अत्यधिक प्रयोग किया है। वे प्रतीकों द्वारा जीवन और युग के प्रभावों को गूँथने का प्रयास करते हैं। उनके प्रतीकों की पहली विशेषता यह है कि उन्होंने परम्परागत प्रतीकों का प्रयोग नहीं किया बल्कि उन्होंने सर्वथा नवीन प्रतीकों को अपनाया है। ये प्रतीक सीधे जीवन से लिए गए हैं। दूसरा उनके प्रतीक रुचि और प्रभाव दोनों दृष्टियों से कलात्मक है। तीसरा उनके प्रतीकों में किसी प्रकार की जटिलता नहीं है। यदि उनके प्रतीक कहीं समझ नहीं आते तो भी कविता के मर्म को समझने में कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं होती। ब्रह्म राक्षस ओरांग-उटांग तथा बावड़ी 'मुक्तिबोध' के सर्वाधिक लोकप्रिय प्रतीक हैं। अपनी कविताओं में कवि ने विशिष्ट अर्थों में इन प्रतीकों का प्रयोग किया है। 'भूल गल्ती' कविता का शीर्षक अपने आप में एक प्रतीक है जो कि शोषण जीवी व्यवस्था को व्यंजित करता है। इस कविता में 'कैदी' ईमानदार और स्वतंत्र नेता व्यक्ति का प्रतीक है। ब्रह्म राक्षस हमारे अतिरिक्त मन और अचेतन मन का प्रतीक है। उदाहरण देखिए–

"पाप-छाया दूर करने के लिए, दिन-रात
स्वच्छ करने
ब्रह्म राक्षस
घिस रहा है देह
हाथ के पंजे, बराबर
बाँह-छाती-मुँह छपाछप
खूब करते साफ
फिर भी मैल
फिर भी मैल।"

ओरांग-उटांग हमारी स्वाभाविक पाश्विक वृत्तियों का प्रतीक है। कंस क्रूर सत्ता का प्रतीक है तो पन्ना दाई एक ऐतिहासिक प्रतीक है जो अपने सिद्धान्तों के लिए सब कुछ बलिदान करने की क्षमता रखती है लेकिन रावण कवि का एक उल्लेखनीय पौराणिक प्रतीक है। इसमें कवि स्पष्ट करता है कि हमारा मन काठ के रावण के समान हमारे व्यक्तित्व की प्रतिभा बन कर रह गया है। ये परम्पराओं को मानने वाला लेकिन अन्दर से खोखला है। इसे जला देने में ही हमारा और हमारे समाज का कल्याण है।

इसी प्रकार से कवि ने गाँधी के प्रतीक द्वारा आज के तथाकथित गाँधीवादियों पर करारा व्यंग्य किया है। गाँधी जी द्वारा कवि को जो शिशु सौंपा जाता है वह अभिनव गाँधीवादी विचारधारा का प्रतीक है। भले ही, 'मुक्तिबोध' आजीवन गाँधी जी के विचारों से सहमत न रहे हों फिर भी वे एक अभिनव विचारधारा का प्रतिपादन करते हुए दिखाई देते हैं।

"नाक पर चस्मा, हाथ में डण्डा
कंधे पर बोरा, बाँह में बच्चा
आश्चर्य!! अद्‌भुत! यह शिशु कैसा!!"

3. बिम्ब विधान–जहाँ तक बिम्ब विधान का प्रश्न है इस दृष्टि से 'मुक्तिबोध' का कार्य पर्याप्त समृद्ध है। एक परिभाषा के अनुसार बिम्ब वह शब्द चित्र है जो कल्पना के द्वारा केन्द्रीय अनुभवों के आधार पर निर्भर होता है। बिम्बों के प्रयोग द्वारा 'मुक्तिबोध' सुन्दर एवं सजीव कल्पना चित्रों का निर्माण करते हैं और उन चित्रों के द्वारा कल्पना के सत्य का साक्षात्कार करवाते हैं। प्रत्येक बिम्ब एक न एक कथा लिए रहता है तथा उसमें जीवन की विषमताओं का चित्रण रहता है। अपनी कथा गर्भित कविताओं में उन्होंने बिम्बों की शृंखला प्रस्तुत की है। चक्षु, श्रवण, त्वक्, ग्राहण रसना आदि के आधार पर बिम्बों के अनेक

प्रकार हो सकते हैं, लेकिन 'मुक्तिबोध' की कविता में दृश्य, स्पर्श, रंग, स्थिर, गत्यात्मक तथा प्रकृति सम्बन्धी अनेक बिम्ब देखे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण देखिए–

(क) दृश्य बिम्ब– **"सामने मेरे**
सर्दी में बोरे को ओढ़ कर
कोई एक अपने
हाथ पैर समेटे
काँप रहा, हिल रहा–वह मर जाएगा।"

(ख) स्पर्श बिम्ब– **"बालक लिपटा है मेरे गले से चुपचाप**
छाती से कन्धे से चिपका है नन्हा-सा आकाश
स्पर्श है सुकुमार प्यार भरा कोमल
किन्तु है भार का गम्भीर अनुभव।"

4. अलंकार विधान–यूँ तो सभी प्रयोगवादी कवियों ने अलंकारों का खुलकर प्रयोग किया है, लेकिन 'मुक्तिबोध' अलंकार के प्रति बड़े सजग दिखाई देते हैं। वस्तुतः वे काव्य के अभिव्यक्ति पक्ष पर अधिक बल देते हैं। फिर भी वर्ण्य विषय को सम्प्रेषणीय बनाने के लिए यथासम्भव अलंकारों का भी प्रयोग करते दिखाई देते हैं, परन्तु वे अलंकारों का प्रयोग उसी सीमा तक करते हैं जिस सीमा तक वह अनिवार्य है। फिर भी 'मुक्तिबोध' ने परम्परागत उपमानों की अपेक्षा नवीन उपमानों का अधिक प्रयोग किया है। उपमा और रूपक उनके प्रिय अलंकार हैं। उनके काव्य में प्रयुक्त अलंकारों के कुछ उदाहरण दृश्टव्य हैं।

(i) उत्प्रेक्षा– **"चहवाओं की लहरों के आकार**
किन्हीं ब्रह्मराक्षसों के निराकार
अनाकार
मानो बहस छेड़ दे।"

(ii) रूपक– **"महाशोधक महाशिरा सत्य जल का मीन हूँ मैं "**

5. फैंटेसी विधान–फैंटेसी शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द **'फैंटेशिया'** से हुई है। इसका अर्थ है–अवास्तविक वस्तु या कथा को दृश्यमान बनाना। अन्य शब्दों में, हम कह सकते हैं कि काल्पनिक दृश्य को बिम्बात्मक स्वरूप प्रदान करना। यह एक सशक्त विधा है जिसके रचनाकार कल्पना द्वारा दूर तक विचरण करते हैं। कुछ विद्वान इसकी तुलना 'फार्स' के साथ करते हैं जो कि एक भौंडा परिहास होता है। लेकिन फैंटेसी में एक ऐसा यथार्थ रूप प्रस्तुत किया जाता है जो रहस्य से घिरा रहता है जिसे पढ़कर पाठक आश्चर्यचकित होकर रहस्यात्मक लोक में विचरण करने लगता है। 'मुक्तिबोध' के काव्य में कल्पना तत्त्व का अत्यधिक प्रयोग है। अतः वे फैंटेसी जैसे यथार्थवादी शिल्प को माध्यम बनाकर अपनी बात कहते हैं। 'मुक्तिबोध' ने ऐसी विचित्र फैंटेसियों की रचना की हैं जिन्हें पढ़ते-पढ़ते भयानक वातावरण उपस्थित हो जाता है। गुप्त तहखाने, अंधेरी सीढ़ियाँ, तालाब, अदृश्य कुएँ, सुनसान बरगद को, छाँह, खंडहर मकान आदि कुछ ऐसे दृश्य हैं जो उनकी फैंटेसियों को प्रस्तुत करते हैं। ब्रह्म-राक्षस, भूल-गल्ती, ओरांग-ओटांग आदि कविताओं में कवि ने जिन फैंटेसियों का निर्माण किया है उन्हें पढ़कर पाठक भी भोचक्का रह जाता है। कुछ उदाहरण देखिए–

ब्रह्म राक्षस– **"शहर के उस ओर खंडहर की तरफ**
परिव्यक्त सूनी बावड़ी
की भीतरी
ठण्डे अंधेरे में
बसी गहराइयाँ जल की
सीढ़ियाँ डूबी अनेकों
उस पुराने घिरे पानी में
समझ में आ न सकता हो
कि जैसे बात का आधार
लेकिन बात गहरी हो।"

6. छन्द विधान–नई कविता के प्रमुख कवि होने के कारण 'मुक्तिबोध' के काव्य में छन्दों के प्रति विशेष आग्रह नहीं है। उन्होंने छन्दों के बन्धन से स्वयं को मुक्त रखा है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि उनकी कविताओं में लय ताल आदि का निर्वाह नहीं है। कहीं तो वे तुकान्त के रूप में कविता लिखते हैं और कहीं लय का निर्वाह करने के लिए वे अपनी कविता को सजाने का प्रयास 'मुक्तिबोध' **'फ्रीवर्स'** के सफल प्रयोक्ता हैं। प्रायः उनका सम्पूर्ण काव्य मुक्त छन्द में रचित है। 'ब्रह्म राक्षस' 'भूल गल्ती' तथा 'ओरांग-ओटांग' से असंख्य उदाहरण दिए जा सकते हैं। एक उदाहरण देखिए–

"बड़े-बड़े नाम अरे कैसे शामिल हो गये इस बैण्ड दल में
उनके पीछे चल रहा
संगीन-नोकों का चमकता जंगल
चल रही पदचाप, ताल बद्ध दीर्घ पांत
टैंक-दल, मोर्टार ऑर्टिलरी, सन्नद्ध
धीरे-धीरे बढ़ रहा जुलूस भयावना।"

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि 'मुक्तिबोध' काव्य का शिल्प पक्ष विशेष महत्त्व रखता है। उनकी काव्य भाषा आधुनिक युग की काव्य भाषा है जिसमें संस्कृत के तत्सम् शब्द बहुत कम मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं। वे अंग्रेजी, अरबी, फारसी तथा देशज शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं। उनके काव्यों में नूतन प्रतीकों और अभिनव उपमानों का प्रयोग हुआ है। उनका बिम्ब विधान भी काफी समृद्ध है। चित्रात्मकता, व्यंग्यात्मकता, प्रवाहमयता आदि उनकी काव्य भाषा की कुछ उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं। विशेषकर फैंटेसी के निर्माण में उनको विशेष सफलता मिली है।

◆◆◆

5. 'अंधेरे में' : प्रतिपाद्य

5. 'मुक्तिबोध' विरचित कविता 'अंधेरे में' का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए। **(Most Imp.)**

अथवा

'मुक्तिबोध' 'अन्धेरे में' कविता में क्या कहना चाहते हैं–स्पष्ट करें।

अथवा

'अन्धेरे में' कविता के कथ्य का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

अथवा

'अन्धेरे में' कविता के भाव पक्ष पर प्रकाश डालिए।

उत्तर–'अंधेरे में' : प्रतिपाद्य–'अंधेरे में' शीर्षक लम्बी कविता आठ खण्डों में विभक्त है। यह 'मुक्तिबोध' की सर्वाधिक लम्बी और महत्त्वपूर्ण कविता है। आकार की सुदीर्घता के कारण उसे लघु-लघु काव्य भी कहा जाता है। वस्तुतः यह उनका काव्य संग्रह **'चाँद का मुँह टेढ़ा है'** संकलित है। **डॉ. नामवर सिंह** ने इसे नई कविता की चर्म उपलब्धि माना है। इस सन्दर्भ में वे लिखते हैं–**'अंधेरे में' 'मुक्तिबोध' के प्रतिनिधि काव्य-संकलन 'चाँद का मुँह टेढ़ा है" की ही अन्तिम कविता नहीं, कदाचित उनकी अन्तिम रचना भी है जिसे कवि कर्म की चरम परिणति भी कहा जा सकता है। कुल मिलाकर उसे यदि नयी कविता की भी चरम उपलब्धि कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी।"**

'मुक्तिबोध' एक सोद्देश्य कलाकार है। उन्होंने काव्य में कथ्य को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया है और कथ्य को शिल्प से अधिक महत्त्वपूर्ण माना है। **'एक साहित्यिक की डायरी'** में वे स्वीकार करते हैं–**"मैं उन लोगों का समर्थक नहीं हूँ जो सफाई के नाम पर कन्टेण्ट (कथ्य) की बलि दे देते हैं।"** वस्तुतः 'मुक्तिबोध' समकालीन कविता को छायावादी संस्कारों से मुक्त करना चाहते थे। इसके साथ-साथ उन्होंने प्रगतिवाद की अकाव्यात्मक प्रवृत्ति का भी निराकरण किया है। यही कारण है कि उनका काव्य नयी कविता के माप-दण्डों पर खरा उतरता है।

'अंधेरे में' कविता के कथ्य को लेकर विद्वानों में पर्याप्त मतभेद देखा जा सकता है। कुछ लोग इसके कथ्य को परम अभिव्यक्ति की तलाश मानते हैं, कुछ आत्म निर्वासन और कुछ जनक्रान्ति। एक यह विचार भी व्यक्त किया जाता है कि 'अंधेरे में' फासिस्ट हुकूमत के विरुद्ध प्रगतिशील मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी का आत्म-संघर्ष अभिव्यक्त हुआ है। एक अन्य विद्वान इसे अस्मिता की खोज की कविता कहता है, परन्तु असलीयत तो यह है कि यह एक बहु आयामी कविता है, जिसमें फैन्टेसी शैली के द्वारा कथ्य को अभिव्यक्त किया गया है।

'अंधेरे में' कविता के प्रतिपाद्य अथवा कथ्य का विवेचन हम निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत कर सकते हैं–

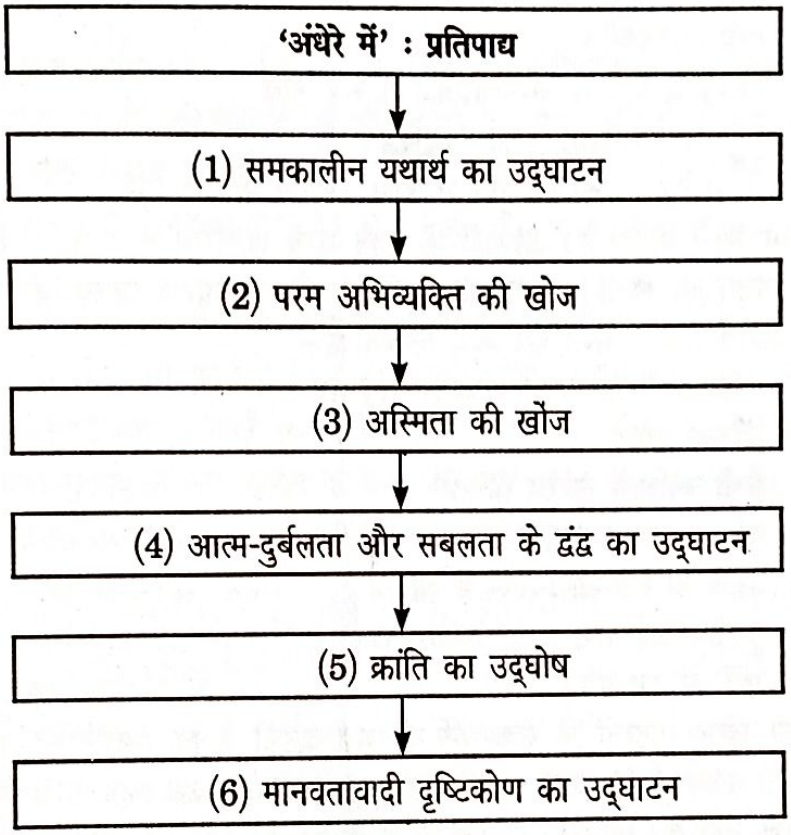

1. समकालीन यथार्थ का उद्घाटन–अंधेरे में कविता एक जटिल गहरी और बहु-आयामी लम्बी कविता कही जा सकती है। भले ही हम इसे स्वप्न कथा कहें लेकिन यह समकालीन जीवन की विषम वास्तविकताओं का उद्घाटन करती हैं। इसमें आजादी से पहले और बाद देश का पूरा नक्शा प्रस्तुत किया है। हमारे जिन महापुरुषों ने अपने प्राण न्यौछावर करके हमें स्वतंत्रता दिलायी वे ही स्वतन्त्रता के बाद नपुंसक बनकर रहे गये और अंधेरे की स्याही में लीन हो गये। कवि ने मृतक दल की शोभा यात्रा का जो वर्णन प्रस्तुत किया है वह हमारे समकालीन जीवन का जीता जागता दस्तावेज है। कवि सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन के यथार्थ के विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत करना चाहता है। कथा के द्वारा इतना बड़ा यथार्थ एक साथ वर्णित नहीं हो सकता। इसके लिए कवि ने फैंटेसी तथा स्वप्न कथा का प्रयोग किया है। कवि स्वीकार करता है कि आज देश में जो भ्रष्टाचार फैला हुआ है उसमें हमारे मंत्री, उद्योगपति, विद्वान, साहित्यकार, पत्रकार तथा बदमाश लोग पूर्णतया लिप्त हैं। दिन के उजाले में इन लोगों का रूप बड़ा सुन्दर और आकर्षक होता है, परन्तु रात के अन्धकार में इनका घिनौना रूप देखा जा सकता है। ये लोग छलकपट और बेईमानी का सहारा लेकर अपने स्वार्थों को पूरा कर रहे हैं। पुलिस और सेना से भ्रष्ट लोगों को ही सुरक्षा प्रदान कर रही हैं। स्वार्थी कवियों, आलोचकों तथा विचारकों का दल भी इनका साथ दे रहा है। कवि लिखता भी है–

"भई वाह!
उनमें कई प्रकाण्ड आलोचक, विचारक, जगमगाते कवि-गण
मन्त्री भी, उद्योगपति और विद्वान्
यहाँ तक कि शहर का हत्यारा कुख्यात
डोमा जी उस्ताद
बनता है बलबन।"

आप समाज में इस शोषक वर्ग के प्रति किसी भी प्रकार की उथल-पुथल होती है अथवा समाज के उपेक्षित और सर्वहारा वर्ग विशाल स्तर पर उन शोषकों का विरोध करना चाहते हैं तो हमारे बुद्धिजीवी उनके विद्रोह का समर्थन नहीं करते। कारण यह है कि बुद्धिजीवी वर्ग को इन्हीं लोगों से सुविधा प्राप्त हो रही है। बुद्धिजीवी शोषक वर्ग से उसी तरह जुड़े हुए हैं जिस प्रकार नाल के माध्यम से बच्चा अपनी माँ से जुड़ा होता है। कवि लिखता भी है–

"सब चुप, साहित्यिक चुप और कविगत निर्वाक्
चिंतक, शिल्पकार नर्तक चुप हैं।
उनके ख्याल से यह सब गप है।
मात्र किंवदन्ती।
रक्तपायी बड़ी से नाभितालबद्ध ये सब लोग
नपुंसक भोग-शिरा जालों में उलझे।"

यही नहीं 'अंधेरे में' कवि ने समाज के शोषित और सर्वहारा वर्ग का भी यथार्थ चित्रण किया है। समाजवाद को कवि सभी उपेक्षितों और गरीबों का आश्रय स्थल कहता है। आजादी के इतने लम्बे अन्तराल के पश्चात् भी हमारे देश के करोड़ों श्रमिक और उपेक्षित लोग गरीबी का जीवन जी रहे हैं। दूसरी ओर पूँजीपति और सत्ताप्राप्त शोषक वर्ग जीवन की सभी सुविधाओं को भोग रहा है। शोषित वर्ग का यथार्थ चित्रण करते इसे कवि लिखता है–

"दीखता है सामने ही अंधकार-स्तूप-सा
भयंकर बरगद
सभी उपेक्षितों समस्त वंचितों
गरीबों का वही घर, वही छत
उसके ही तल-खोह-अंधेरे में सो रहे
गृहहीन कई प्राण
अंधेरे में डूब गये।"

2. परम अभिव्यक्ति की खोज–विद्वानों के एक वर्ग का यह कहना है कि 'अंधेरे में' कविता का मूल प्रतिपाद्य परम अभिव्यक्ति की तलाश है। उनका कहना है कि कवि अपनी उस काव्य अस्मिता, उस परम अभिव्यक्ति को खोज रहा है जिसे वह सामाजिक निषेध के कारण व्यक्त नहीं कर पा रहा। कविता के आरम्भ में ही कवि यह अनुभव करता है कि अंधेरे कमरे में कोई चक्कर काट रहा है। इसका यह अर्थ हो सकता है कि विसंगतियों और विरूपताओं से भरे समाज के कारण कवि की अभिव्यक्ति अन्तर्मन में घुटकर रह गयी है। कवि के अवचेतन मन में स्थित वह चरम अभिव्यक्ति एक रहस्यमय व्यक्ति के समान है। कवि उसे 'रक्तलोक' स्नात' पुरुष भी कहता है। इस सन्दर्भ में कवि लिखता भी है–

"वह रहस्यमय व्यक्ति
अब तक न पायी गयी मेरी अभिव्यक्ति है,
पूर्ण अवस्था वह
निज-सम्भावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिभाओं की
मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव,
हृदय में रिस रहे ज्ञान का तनाव वह
आत्मा की प्रतिमा।"

आतंकपूर्ण सत्ताधारियों ने कवि की अभिव्यक्ति को समाज के लिए घातक और खतरनाक समझा इसलिए वे इस अभिव्यक्ति को आपत्तिजनक मानने लगे। फलस्वरूप कवि की अभिव्यक्ति की कामना को दबा दिया गया और वह परम अभिव्यक्ति कवि के अवचेतन में उतर गयी। यहाँ कवि लिखता भी है–

प्रस्तुत कविता में कुल आठ खंड हैं। प्रत्येक खंड में कवि अपनी परम अभिव्यक्ति के प्रतिरूप से बातें करने के लिए लालायित दिखाई देता है। द्वितीय खण्ड में कवि को लगता है कि उसके हृदय के द्वार पर रह-रह कर सांकल बज रही है।

"अरे हाँ, साँकल ही रह-रह
बजती है द्वार पर।
कोई मेरी बात मुझे बताने के लिए ही
बुलाता है बुलाता है।"

कवि पहचान लेता है कि उसके हृदय की सांकल को खटखटाने वाला व्यक्ति नहीं है जिसे उसने तिलस्मी गुफा में देखा था। वह कवि की अन्तर्रात्मा का ही रूपक है। वह कवि की सुविधा-असुविधा का भी ध्यान नहीं रखता। जब चाहे प्रकट होता रहता है और बार-बार कवि के मन को सचेत करता रहता है–

"पहचानता हूँ बाहर जो खड़ा है।
यह वही व्यक्ति है, जी हाँ।
जो मुझे तिलस्मी खोह में दिखा था।"

3. अस्मिता की खोज–डॉ. नामवर सिंह ने इस कविता के कथ्य के विषय में लिखा है–**"निस्सन्देह इस कविता का मूल कथ्य है–अस्मिता की खोज।"** यह कहकर उन्होंने **'अंधेरे में'** कविता को आत्मपरक सिद्ध करने का प्रयास किया है, लेकिन **चंचल चौहान** का कहना है कि यह कविता अस्मिता की खोज नहीं है बल्कि यह आत्म-विलय और आत्म-विस्तार की कथा है। वे कहते हैं **"'अंधेरे में' कविता की संरचना 'एन.टी. थीसिस' के आधार पर हुई है। ध्यान से देखें तो वह अंधेरे से प्रकाश की ओर व्यक्ति से समूह की ओर, अस्मिता से आत्म विलय की ओर, स्वात्म से निःस्वात्म की ओर, आत्म निर्वासन से आत्म विस्तार की ओर, मैं से हम की ओर यात्रा करती है। इसका विकास इन्हीं विरुद्धों के कारण हुआ है।"** अतः डॉ. नामवर सिंह के कथन से सहमत होना तनिक अनुचित ही लगता है।

इसी प्रकार से कवि बार-बार यदि उस रहस्यमय व्यक्ति की बात करता है तो दूसरे व्यक्ति की बात भी करता है जो उसे आ करके मिलना चाहता है? कवि रहस्यमय गुफा में जिस रट आलोक स्नात व्यक्ति के दर्शन करता है। उसके तेजों प्रभावमय ललाट को देखकर अजीब-सी घबराहट महसूस करने लगता है। उसके अंगों में अजीब-सी थरथराहट होने लगती है। गौर वर्णिय आलौकिक नेत्रों तथा सुन्दर शान्त मुखाकृति को देखकर कवि को विलक्षण शंका होने लगती है। उस मनभावना रूप को देखकर कवि के मन में स्नेह भाव जागृत हो उठता है और वह कहता है–

"वह रहस्यमय व्यक्ति
अब तक न पायी गयी मेरी अभिव्यक्ति है,
पूर्ण अवस्था वह
निज-सम्भावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिमाओं की
मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव
हृदय में रिस रहे ज्ञान का तनाव वह,
आत्मा की प्रतिमा।"

4. आत्मदुर्बलता और सबलता के द्वन्द्व का उद्घाटन–प्रस्तुत कविता में 'मुक्तिबोध' ने आत्मालोचन करते हुए अपनी आन्तरिक दुर्बलताओं को भी स्वीकार किया है। यदि एक ओर वे परम् अभिव्यक्ति की खोज में संलग्न हैं और हृदयगत भावनाओं तथा विचारों को यथार्थ रूप में व्यक्त करना चाहते हैं तो दूसरी ओर वे सामाजिक विधि-निषेध की भी चर्चा करते हैं जो हथकड़ियाँ बनकर उन्हें रोकती रहती हैं। इसलिए कवि स्वीकार करता है कि उसे कमजोरियों से लगाव है। इसका मतलब यह है कि कवि जनकल्याण के लिए कोई भी ठोस कदम उठाने के लिए हिचकिचाता है–

"यह भी तो सही है कि
कमजोरियों से ही लगाव है,
इसलिए ही टीलता रहता हूँ उस मेरे प्रिय को
कतराता रहता
डरता हूँ उससे।"

इस सन्दर्भ में यह उल्लेख करना उचित होगा कि यदि 'मुक्तिबोध' सक्रिय होकर राजनीति में भाग लेते और क्रान्ति का आह्वान करते तो सम्भवतः उन्हें जेल हो जाती। इसलिए कवि ने आत्म दुर्बलता को स्वीकार किया है, क्योंकि यह कहना सर्वथा अनुचित होगा कि जेल में रहकर वे अपनी काव्य साधना नहीं कर सकते थे। हिन्दी के ऐसे अनेक साहित्यकार हुए हैं जिन्होंने जेल यात्राएँ करने के बावजूद उच्च कोटि के साहित्य की रचना की है। लेकिन 'मुक्तिबोध' आत्म दुर्बलता को स्वीकार करने के बावजूद समाज के प्रति अत्यधिक जागरूक थे। उनको इस बात का दुःख था कि वे अन्य सुविधाभोगी कवियों की तरह समाज कल्याण में अधिक ठोस कदम नहीं उठा सके। उनको इस बात का दुःख है कि उन्होंने अपनी अन्तरात्मा की आवाज को नहीं सुना।

यद्यपि कवि की आत्मा उसे बार-बार सचेत करती है। दुस्साध्य कार्यों को करने की प्रेरणा देती है। समाज के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह करने के लिए सचेत करती है। लेकिन कवि आत्म दुर्बलता के कारण कुछ नहीं कर पाता। धीरे-धीरे आत्म दुर्बलता और सबलता के बीच द्वन्द्व छिड़ जाता है। कवि ने अपनी परम अभिव्यक्ति के प्रतिरूप रहस्यमय पुरुष से आँखें मिलाने से भी इन्कार कर दिया और कहा–

"अरे भाई, मुझे नहीं चाहिए शिखरों की यात्रा
मुझे डर लगता है ऊँचाइयों से
बजने दो सांकल।
उठने दो अंधेरे में ध्वनियों के बुलबुले
वह जन वैसे ही
आप चला जाएगा आया जैसा।"

5. क्रान्ति का उद्घोष–कविवर 'मुक्तिबोध' एक सच्चे प्रगतिवादी कवि थे। यही कारण है कि उन्होंने भ्रष्ट, पूँजीवादी सत्ता और आततायी शासकों के आतंक का यथार्थ चित्रण किया है। कांग्रेस सरकार द्वारा जब आपातकालीन स्थिति की घोषणा की गई तब कवि ने उसका डट कर विरोध किया। प्रस्तुत कविता में कवि ने सत्ता द्वारा समाज पर थोपे गए सेंसर की भी चर्चा की है, क्योंकि यह सेंसर क्रांतिकारी संघर्ष को नष्ट करना चाहता था। कवि का कथानायक अभिव्यक्ति के खतरों को झेलने की बात करता है।

"अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब।"

दूसरी ओर क्रांतिकारी जनसंगठन अत्याचार करने वाली सरकार से लोहा लेना चाहता है। कवि भी इसका समर्थन करता हुआ कहता है–

"साथ-साथ घूमते हैं, साथ-साथ रहते हैं
साथ-साथ सोते हैं, खाते हैं जीते हैं
जन-मन उद्देश्य।"

पुनः निरंकुश सरकार का प्रतिकार करने के लिए आम आदमी की क्रांति का जो वर्णन किया गया है वह बहुत ही प्रभावशाली बन पड़ा है। समाज के उपेक्षित एवं नगण्य लोग भी इसमें भाग लेते हुए चित्रित किए गए हैं।

"मकानों के छत से
गाडर कूद पड़े धम से
घूम उठे खंभे
भयानक वेग से चल पड़े हवा में।"

6. मानवतावादी दृष्टिकोण का उद्घाटन–**डॉ. धन्नजय वर्मा** ने स्वीकार किया है कि 'मुक्तिबोध' की परम अभिव्यक्ति ऐसी मानवीय रचना का अन्वेषण है जिसमें सामान्य जन की मुक्ति हो सके। उनकी परम् अभिव्यक्ति सामान्य जन की संघर्षशील और संकल्प धर्म चेतना शक्ति का मूर्त रूप है। वह रक्तलोक स्नात पुरुष में प्रतीकी कृत है। वस्तुतः कवि भले ही क्रांति का उद्घोष करता हो लेकिन उसका लक्ष्य तो मानवतावादी है। एक ओर तो वह शोषकों और शोषितों के बीच विषमता को समाप्त करना चाहता है तो दूसरी ओर वह आततायी सत्ता प्राप्त शक्तियों के अत्याचारों का विरोध करता है। कवि को इस बात का भी दुःख है कि वह राष्ट्र और समाज के लिए कुछ भी नहीं कर पाया जबकि वह बहुत कुछ कर सकता था।

एक स्थल पर वह कहता भी है–

"अब तक क्या किया
जीवन क्या जिया,
ज्यादा लिया और दिया बहुत बहुत कम
मर गया देश, अरे जीवित रह गये तुम।"

अपराध बोध से ग्रस्त होने के कारण कवि मानवतावादी स्वर को मुखरित करता है। वह अपनी खोई हुई अभिव्यक्ति को पुनः प्राप्त करना चाहता है। इस अभिव्यक्ति द्वारा वह जनकल्याण के लिए आततायी ताकतों से लोहा लेना चाहता है। यही कारण है कि काव्य नायक गाँधी जी से वह सत्य प्राप्त करता है जो मानवतावाद का न्योतक है।

◆◆◆

आलोचनात्मक प्रश्न

1. स्वातंत्रयोत्तर युग और रघुवीर सहाय की कविता

1. स्वातंत्र्योत्तर युग के संदर्भ में रघुवीर सहाय की कविता की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए। **(Imp.)**

अथवा

"क्या स्वातंत्र्योत्तर युग की कसौटी पर रघुवीर सहाय की कविता खरी उतरती है?" स्पष्ट करें।

उत्तर–स्वातंत्र्योत्तर युग और रघुवीर सहाय की कविता–स्वातंत्र्योत्तर युग के कवियों में रघुवीर सहाय की कविता का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने स्वतंत्र युग की विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक समसयाओं की विडम्बनाओं को आधार

बनाकर अपनी कविताओं की रचना की है। वे दूसरा सप्तक के महत्त्वपूर्ण कवि माने जाते हैं। उनका जन्म 9 दिसम्बर, 1921 ई. को लखनऊ के एक मध्य वर्गीय परिवार में हुआ। इन्होंने लखनऊ से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। जीवन-यापन के लिए इन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र को चुना। सर्वप्रथम वे लखनऊ के 'दैनिक नवजीवन' से जुड़ गए। बाद में 'प्रतीक' पत्रिका के सहायक संपादक नियुक्त हुए। कुछ समय तक वे आकाशवाणी से भी जुड़े रहे। कल्पना, दिनमान आदि पत्रों से भी उनका नाता जुड़ा रहा। 30 दिसम्बर, 1990 ई. को उनका निधन हो गया।

रघुवीर सहाय ने कविता के अतिरिक्त कुछ कहानियाँ और निबंध भी लिखे हैं। इनके काव्यों की सूची इस प्रकार है–

दूसरा सपतक (1951 में संकलित कविताएँ), सीढ़ियों पर धूप में (1960), आत्महत्या के विरूद्ध (1967), हँसो-हँसो : जल्दी हँसो (1975), लोग भूल गए हैं (1982), कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ (1989), प्रतिनिधि कविताएँ (1994)। इनकी सभी रचनाएँ रघुवीर सहाय रचनावली में संकलित हैं। रघुवीर सहाय के काव्य में स्वातंत्र्योत्तर युगीन हिन्दी काव्य की तमाम विशेषताएँ देखी जा सकती हैं। स्वातंत्र्योत्तर युग के संदर्भ में उनकी कविता की आलोचनात्मक व्याख्या निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर की जा सकती है–

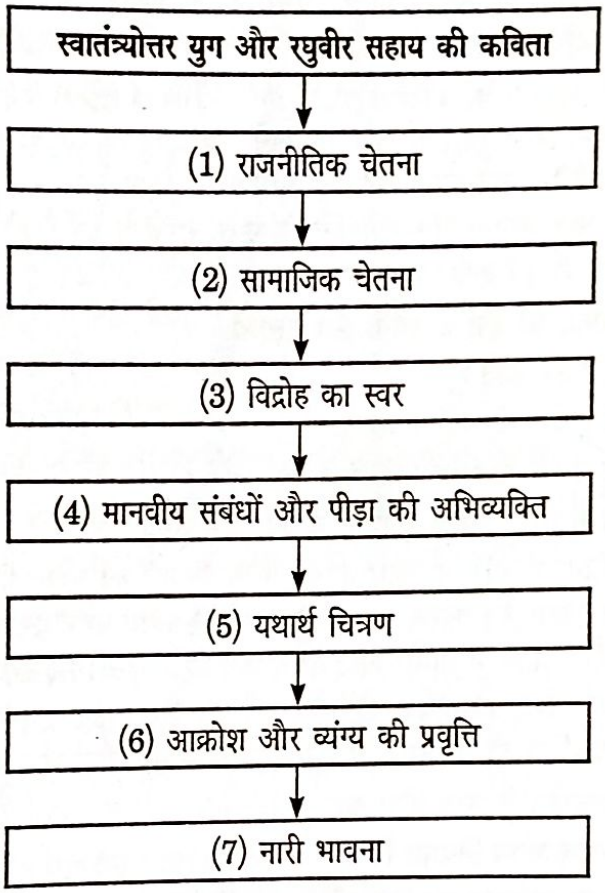

(1) राजनीतिक चेतना–रघुवीर सहाय ने पत्रकारिता को आजीविका का साधन चुना था। उनके परिवार के लोग कुछ कांग्रेसी, कुछ आर्य समाजी और कुछ सरकारी नौकर थे। अतः उन्हें घर के वातावरण से ही वैचारिक और साहित्यिक आधार प्राप्त हुआ। यही कारण है कि तत्कालीन विभिन्न राजनीतिक आयामों की समृद्ध सोच उनकी कविताओं में उपलब्ध होती है। कवि ने राजनीति की क्रूर वास्तविकताओं और षडयंत्रकारी गतिविधियों को बड़े समीप से देखा और अपनी कविताओं में उनका सूक्ष्म अंकन किया। 'लोग भूल गए' नामक काव्य संग्रह से एक उदाहरण देखिए–

लोग भूल गये हैं एक तरह के डर को जिसका कुछ उपाय था
एक और तरह का डर अब वे जानते हैं जिसका कारण भी पता नहीं,
कितना जानते हो तुम उस डर के कारण को
आज की संस्कृति का जो मूल स्रोत है।

यह बात किसी भी समझदार व्यक्ति से छिपी नहीं है कि आज राजनीति स्वार्थों की पूर्ति का साधन बनकर रह गई है। हमारे राजनेता केवल अपना घर भरने में लगे हुए हैं। उनके मन में जन-कल्याण की कोई भावना नहीं है। स्वातंत्र्योत्तर काल में

राजनीति ने अवसरवादिता, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार तथा हिंसा को जिस स्नेह से पाला है, उसे देखकर कवि अपनी भावनाओं पर नियंत्रण नहीं कर सका। यहाँ तक कि उसने बड़े-बड़े राजनेताओं का नाम लेने में भी संकोच नहीं किया। 'आत्महत्या के विरुद्ध' नामक काव्य संग्रह से एक उदाहरण देखिए–

गया वाजपेयी जी से पूछ आया देश का हाल
पर उड़ा नहीं सका एक नंगी औरत को
कम्बल रेलगाड़ी में बीस अजनबियों के सामने।

'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य में मंत्री मुसद्दी लाल लोकतंत्र के भ्रष्टाचार का प्रतीक है। इसी प्रकार रामदास राजनीतिक हिंसा का जीता-जागता उदाहरण है। यही कारण है कि डॉ. बच्चन सिंह ने रघुवीर सहाय को 'पॉलिटिकल' कवि कहने में संकोच नहीं किया।

(2) सामाजिक चेतना–एक पत्रकार और सम्पादक के रूप में रघुवीर सहाय की सामाजिक समझ में भी काफी विकास हुआ और वे जन-साधारण के पक्षधर बन गए। कवि ने तत्कालीन सामाजिक को लोइया अर्थात् मार्क्स के सांचे से नहीं देखा बल्कि जो कुछ स्वयं अनुभव किया और चारों ओर घटते देखा उसी के आधार पर सामाजिक विसंगतियों का उद्घाटन किया। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव का कहना है कि इनकी कविताएँ वर्तमान सामाजिक ढाँचों के अवरोधों, अन्तर्विरोधों और विसंगतियों का सामना करते हुए लिखी गई हैं। 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास' में डॉ. बच्चन सिंह ने रघुवीर सहाय के काव्य के सामाजिक आयामों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है– **"आधुनिक कविता के नाम पर उनमें निर्वासन, अकेलापन, अलगाव, पुरानी पीढ़ी के प्रति आक्रोश नहीं मिलेगा। उसके स्थान पर मिलेंगी– अनाहत जिजीविषा, मध्यवर्गीय जीवन का दबाव, लोकतांत्रिक जीव की विडम्बनाएँ।"** 'आत्महत्या के विरुद्ध' में कवि ने आम आदमी और राजनीति के अन्तः सम्बन्धों का विश्लेषण किया है तथा ईश्वर और ज्योतिष के प्रति अपनी आसक्ति भी व्यक्त की है। कवि कहता है–

लोगो, मेरे देश के लोगो और नेताओ
मैं सिर्फ कवि हूँ
मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता
न उसके साथ खाने के लिए गम
न मैं मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा सम्भ्रम।

रघुवीर सहाय ने अपनी कविता में विभिन्न प्रकार के सामाजिक विचारों को व्यक्त किया है। उन्होंने आम आदमी से लेकर राष्ट्र तक अपनी चिंता को व्यक्त किया है। कारण यह है कि वे अपने समय और समाज को काफी गहराई में उतर गए थे। उन्होंने अनुभव किया कि स्वातंत्र्योत्तर काल में अमीर और गरीब में अंतर लगातार बढ़ता जा रहा है। नेता आम आदमी से मात्र वोट मांगते हैं, उसका सहारा पाकर सत्ता को हथिया लेते हैं। झूठे वादे करना उनका स्वभाव बन चुका है। इस न-बराबरी की स्थिति में न तो सच्चा लोकतंत्र विकसित हो सकता है और न ही जनवाद। 'अधिनायक' में कवि लिखता भी है–

राष्ट्रगीत में भला कौन वह
भारत भाग्य विधाता है
फटा सुथन्ना पहने जिसका
गुन हरचरना गाता है
कौन-कौन है वह जन गण मन
अधिनायक वह महाबली
डरा हुआ मन बेमन जिसका
बाजा रोज बजाता है।

(3) विद्रोह का स्वर–रघुवीर सहाय पूंजीवादी जनतंत्र के प्रति अपनी चिंता को व्यक्त करते हैं क्योंकि कवि को लगा कि इसकी आड़ में शोषण, दमन, भ्रष्टाचार और अन्याय जैसी दुष्टप्रवृत्तियाँ फल-फूल रही हैं, लेकिन उस समय के बुद्धिजीवी संशयवाद के शिकार हो चुके थे। विशेषकर साठोत्तरी कविता के कवि तो यह नारा लगाने लगे–

जब सब कुछ ऊल ही जलूल है
तो सोचना ही फिजूल है। (कैलाश वाजपेयी)

धीरे-धीरे तत्कालीन व्यवस्था के प्रति आक्रोश उत्पन्न होने लगा। रघुवीर सहाय ने भी महसूस किया कि पूंजीवादी जनतंत्र में मानव और मानव के बीच असमानता लगातार बढ़ती जा रही है। सामाजिक अन्याय का बोलबाला है। ऐसी स्थिति में एक गरीब आदमी को दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती। 'नेता क्षमा करें' में कवि लिखता भी है–

मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता न उसके साथ खाने के लिए गम
न मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा भ्रम
लोगों में श्रेष्ठ लोगों मुझे माफ करो
मैं तुम्हारे साथ आ नहीं सकता।

कुछ कविताओं में रघुवीर सहाय ने पूंजीपतियों के प्रति व्यंग्य द्वारा करारी चोट की है। 'पानी-पानी, बच्चा-बच्चा' कवि की एक महत्त्वपूर्ण कविता है जिसमें पानी शब्द आर्थिक स्वतंत्रता का प्रतीक है। इस कविता के माध्यम से कवि यह कहना चाहता है कि भले ही हमारा देश राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र हो गया हो, परंतु आर्थिक दृष्टि से आज भी गुलाम है। जब तक भारत के शोषित तथा अभावग्रस्त लोग आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं हो जाते तब तक इस आजादी का कोई महत्त्व नहीं है। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

बरसों पानी को तरसाया
जीवन से लाचार किया
बरसों जनता की गंगा पर
तुमने अत्याचार किया
हमको अक्षर नहीं दिया है
हमको पानी नहीं दिया
पानी नहीं दिया तो समझो
हमको बानी नहीं दिया

कवि का विचार है कि पूंजीवादी जनतंत्र देश के शोषित लोगों को अभावग्रस्त ही रखना चाहता है और जनवादी मूल्यों को नकारता है। देश के इन श्रेष्ठ लोगों ने ही देश की दुर्गति कर दी है। वे केवल अपने स्वार्थों की ही चिंता करते हैं। गरीबों के प्रति उनके मन में कोई सहानुभूति नहीं है। 'नई हँसी' में कवि श्रेष्ठ लोगों पर करारा व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

राष्ट्र को महासंघ का यह संदेश है
जब मिलो तिवारी से.....हँसो.....क्योंकि तुम भी तिवारी हो
जब मिलो शर्मा से.....हँसो.....क्योंकि वह भी तिवारी है

(4) मानवीय संबंधों और पीड़ा की अभिव्यक्ति–रघुवीर सहाय समाज से जुड़े हुए कवि थे। एक पत्रकार होने के कारण उन्होंने समाज की समस्याओं को बड़े समीप से देखा और उन पर चिंतन किया। यही कारण है कि उन्होंने मानवीय रिश्तों की पहचान पर अधिक कविताएँ लिखी हैं। मानवीय व्यथा के विविध आयामों पर भी वे जमकर लिखते हैं। विशेषकर उन्होंने नारी जीवन की पीड़ा का बड़ी सहजता से अंकन किया है। 'बैंक में लड़कियाँ' कविता स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान की संवेदना को प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार 'चेहरा' नामक कविता में गरीब घर की लड़की का वर्णन किया गया है जो लड़के-सा चेहरा बनाकर स्वीकृत वर्ग में शामिल होना चाहती है। कवि लिखता है– उनकी तरह बनने की इसकी कोशिश एक दुःख-भरी कोशिश है क्योंकि वह चेहरा बदलकर अपने वर्ग का ही लड़का बनेगी। मानवीय सम्बन्धों की पीड़ा कवि की केन्द्रीय संवेदनात्मक वृत्ति है। कवि ने बड़े समीप से मानवीय पीड़ा को देखा और उसे गहराई से समझा। यही कारण है कि उन्होंने पारिवारिक और सामाजिक संदर्भ में अनेक कविताओं की रचना की है जिनमें मानवीय संबंधों की पीड़ा का उद्घाटन हुआ है।

सहना परायी पीड़ाओं को बार-बार
जीते रहने का अकेला उपाय है
सही फिर उसी समय
दूर खड़े हो अपने को देखो। (लोग भूल गए हैं)

कवि स्वीकार करता है कि जब उसने लोगों की असीम पीड़ा को देखा और अनुभव किया तो वे अपनी पीड़ा को भूल गए। उन्हें लगा कि कवि की निजी पीड़ा गरीबों के सामने तुच्छ है। 'सीढ़ियों की धूप' में कवि लिखता भी है–

इस पीड़ा की इस पद्धति में
हम तो कुछ भी नहीं रहे
वह सब कुछ दुखड़े भूल गये
जो तुमसे अब तक नहीं कहे (सीढ़ियों की धूप में)

यही नहीं दुःख और पीड़ा के आधार पर कवि ने कविता को भी विविध काल खण्डों में विभक्त करने का प्रयास किया है। छायावादी कवि एक दुःख लेकर गीत लिख देता था परंतु प्रगतिवादी कवि प्रत्येक दुःख के कारण को पहचान लेता था। वह इतना कुशल गीतकार था कि वह प्रत्येक दुःख के मारे अपनी जान देने की बात करता था।

(5) यथार्थ चित्रण–साठोत्तरी कविता में रघुवीर सहाय ने बहुत सी ऐसी कविताएँ लिखी हैं जो अपने समय को पार करके यथार्थ का चित्रण करने में समर्थ रही हैं। यह भारतीय राजनीति का वह युग था जब पूंजीवादी दलों में दल-बदल की बीमारी इस प्रकार नहीं फैली थी जैसे आज फैल चुकी है, परंतु रघुवीर सहाय के पास एक ऐसी पैनी दृष्टि थी जो भविष्य को देख सकती थी। कवि को इस बात का अंदाजा था कि भारतीय जनता पर अपनी सत्ता कायम रखने के लिए पूंजीवादी तथा सामंतवादी जनतंत्र धन के बल पर दल-बदल की राजनीति को बढ़ावा देंगे। इस प्रकार की खरीद-फरोख्त द्वारा शोषण सत्ता पर कोई दोषारोपण नहीं होगा बल्कि दल-बदल की यह राजनीति आकर्षक जनवादी नारों के द्वारा लोगों को गुमराह करने में सफल रहेंगे। सचमुच यह प्रक्रिया हमारी राजनीति का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गई है। आज तो 'आया राम गया राम' की प्रक्रिया निरंतर विकास की ओर अग्रसर हो रही है। 'एक अधेड़ भारतीय आत्मा' नामक कविता में कवि ने बड़ी स्पष्टता के साथ लिखा है–

गाकर सुनाता है
जनवादों की घोषणा
महामंत्री
जनता के लिए नहीं
वह विरोधियों को प्रमाण दे रहा है
कि मैं दल-बदल के लिए योग्य व्यक्ति हूँ।

इसी प्रकार 'पैदल आदमी' नामक कविता भारत और पाकिस्तान जैसे पड़ोसियों के कटु-सम्बन्धों पर करारा व्यंग्य करती है। दोनों देशों में भयंकर युद्ध हुआ और दोनों देशों की सीमाओं के इस पार और उस पार लाशों के ढेर लग गए। लाशें नंगी पड़ी थीं। उन पर कोई कपड़ा नहीं था। लेकिन दोनों देशों के राजनेता अपनी-अपनी चाल चलने के तरीके ढूँढ़ रहे थे। यहाँ कवि ने आर्थिक असमानता का उद्घाटन करते हुए यथार्थ चित्रण किया है–

परराष्ट्र मंत्रियों ने दो नियम बताये
दो पारपात्र उसको जो उड़कर आए
दो पारपात्र उसको जो उड़कर जाए
पैदल को हम केवल तब इज्जत देंगे
जब देकर के बंदूक उसे भेजेंगे
या घायल से घायल अदले बदलेंगे।

(6) आक्रोश और व्यंग्य की प्रवृत्ति–रघुवीर सहाय ने सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में व्याप्त आंतरिक विसंगतियों तथा अन्तर्विरोधों के प्रति अपने आक्रोश को व्यक्त किया है। कहीं-कहीं वे व्यंग्य करने से भी नहीं चूकते। अवसरवादिता, समझौतापरस्ती, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, आर्थिक विषमता, छद्म क्रांति आदि को देखकर कवि की वाणी में आक्रोश भर जाता है। अपना आक्रोश व्यक्त करते समय कवि देश के राज्यपालों, मुख्यमंत्रियों और विधायकों को भी नहीं छोड़ता बल्कि उन पर करारे व्यंग्य करता है। यही तो हमारे लोकतंत्र की विडम्बना है। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

अपराधी-से आते हैं राज्यपाल, मुख्यमंत्री, विधायक
बख्शे हुए से जाते हैं।

कवि के आक्रोश को देखकर लगता है कि उनमें मोह भंग की प्रवृत्ति उत्पन्न हो गई है। प्रायः लोग यही समझते हैं कि रघुवीर सहाय लोकतंत्र विरोधी थे परंतु सच्चाई यह है कि वे लोकतंत्र के मूल्यों के भ्रष्टीकरण से बड़े ही आहत थे क्योंकि लोकतंत्र का संचालन करने वाले हमारे सांसद और विधायक भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे थे। फलस्वरूप अन्याय और आर्थिक विषमता को बल मिलने लगा। 'फिल्म के बाद चीख' नामक कविता में कवि संसद पर अपना करारा व्यंग्य करते हुए लिखता है–

संसद एक मंदिर है जहाँ किसी को द्रोही कहा नहीं
जा सकता
दूधपिये मुंह पोंछे आ बैठे जीवनदानी गोंद,
दानी सदस्य तोंद सम्मुख धर
बोले कविता में देश प्रेम लाना हरियाना प्रेम लाना
आइसक्रीम लाना है।

(7) नारी भावना–रघुवीर सहाय की कविता में नारी को विशेष स्थान दिया गया है। उन्होंने अपनी अनेक कविताओं में नारी की समस्याओं पर प्रकाश डाला है। वे नारी को समतावादी दृष्टिकोण से देखते हैं। जहाँ कुछ अन्य हिंदी कवि नारी को अबला समझकर उसके प्रति दया का भाव दिखाते हैं परंतु रघुवीर सहाय की दृष्टि में यह पंक्ति सामंतवादी मूल्य का प्रदर्शन है क्योंकि इसमें दया दिखाकर पात्र विशेष को छोटा, हीन और असहाय समझा जाता है और खुद को बड़ा समझा जाता है। अपने एक लेख में उन्होंने अपना एक दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए लिखा है–

"हिंदी साहित्य में स्त्री के प्रति यह भावना बार-बार व्यक्त हुई है कि वह उपेक्षिता है, इसलिए दया की पात्र है। आधुनिक कहे जाने वाले साहित्य में पुरुष से उसके शरीर संबंध को विशेष महत्त्व दिया गया है पर वहाँ भी उसके प्रति दया का भाव लेखक के मन से गया नहीं है.....मानो आधुनिक जीवन के नर-नारी समता के विचार ने रचनाकार को छुआ ही न हो और वह पिछले जमाने के सामंती मन से ही स्त्री को देख रहा है।" 'किले में औरत' रघुवीर सहाय की एक बहुचर्चित कविता है। इसमें कवि ने वेश्यावृत्ति का जो यथार्थ चित्रण किया है, वह बड़ा ही प्रभावशाली बन पड़ा है। कवि स्पष्ट करता है कि एक किले में कैद वेश्याएँ, देह व्यापार द्वारा पुरुषों को प्रसन्न करने में लगी रहती हैं लेकिन उनकी मृत्यु एक सामान्य घटना बनकर रह जाती है। उन पर कोई भी आँसू बहाने वाला व्यक्ति नहीं है। यथा–

उस घर में बीस औरतें थीं
उनमें थी सिर्फ एक बुढ़िया
प्यारी बुढ़िया प्यारी बुढ़िया
वे सब दोपहर में एक किले पर
पहरा देती सोती थी।

संक्षेप में कह सकते हैं कि कवि नारी के प्रति न तो दयाभाव दिखाता है और न ही सहानुभूति दिखाता है, बल्कि वह नारी शोषण का यथार्थ वर्णन करता है, साथ ही पुरुष वर्ग पर करारा व्यंग्य भी करता है।

◆◆◆

2. रघुवीर सहाय का राजनीतिक परिप्रेक्ष्य

2. रघुवीर सहाय की कविताओं में व्याप्त राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का मूल्यांकन कीजिए। **(Most Imp.)**

अथवा

रघुवीर सहाय के राजनीतिक परिप्रेक्ष्य की सोदाहरण विवेचना कीजिए।

उत्तर–रघुवीर सहाय का राजनीतिक परिप्रेक्ष्य–रघुवीर सहाय समकालीन हिन्दी कविता के महत्त्वपूर्ण कवियों में अपना स्थान रखते हैं। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् उन्होंने अपनी आजीविका के लिए पत्रकारिता के क्षेत्र को चुना। वे 'दैनिक नवजीवन', 'प्रतीक', 'कल्पना', 'दिनमान' आदि के संपादन में अपना समुचित योगदान देते रहे। रघुवीर सहाय के पत्रकारिता जीवन का स्वर्ण काल निर्माण के प्रकाशन के काल में कहा जा सकता है। वे इसके सहसम्पादक और बाद में प्रधान सम्पादक रहे। फलस्वरूप रघुवीर

सहाय को तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों तथा राजीतिक परिस्थितियों का समुचित ज्ञान था। विशेषकर 'आत्महत्या के विरुद्ध' नामक काव्य संग्रह में कवि ने राजनीतिक परिवेश की क्रूर सच्चाइयों को वाणी प्रदान की है। इसमें कवि के पत्रकार-सम्पादक का अनुभव मुखरित हुआ है जिसके कारण वे राजनीति के अंतः-सम्बन्धों को कलात्मक रूप से व्यक्त करने में सफल हो सके। राजनीति इस काव्य संग्रह का मुख्य विषय है। इसी प्रकार 'हँसो-हँसो-जल्दी हँसो' काव्य रचना का प्रकाशन सन् 1975 में हुआ। इसमें कवि की सोच और कला के आयाम अपेक्षाकृत सूक्ष्म होते चले गए हैं। कवि ने इस काव्य संग्रह में राजनीकि क्षेत्र के छल-छद्म के जटिल व्यूह को उभारने का प्रयास किया है। राजनीतिक यथार्थ की सूक्ष्मतम अभिव्यक्ति के कारण इसमें कवि का शिल्प कौशल बड़ा ही सजग और प्राणवान दिखाई देता है। कवि ने जहाँ एक ओर सामाजिक ढाँचे के अवरोधों और अन्तर्विरोधों का उद्घाटन किया है, वहाँ दूसरी ओर राजनीतिक विसंगतियों का न केवल यथार्थ वर्णन किया है बल्कि उन पर व्यंग्य भी किया है। 'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य संग्रह की एक कविता में कवि कहता है–

गया वाजपेयी जी से पूछ आया देश का हाल
पर उढ़ा नहीं सका एक नंगी औरत को
कम्बल रेलगाड़ी में बीस अजनबियों के सामने।

रघुवीर सहाय ने ऐसी अनेक कविताओं की रचना की है जो राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के कारण पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। उनकी कविताओं में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के बारे में **जे. अरुण कुमार** लिखते भी हैं– "उनकी कविता में राजनीतिक चिंतन अथवा स्पर्श सहज संवेदना के रूप में है। जहाँ कहीं भी राजनीतिक तलखियाँ हैं, वे साहित्येतर हत्यारे के रूप में नहीं हैं।" वस्तुतः समसामयिक राजनीति से कवि का अत्यधिक सामीप्य था। कवि राजनीति और राजनेताओं के यथार्थ को भली प्रकार से जानता था। यही कारण है कि उनकी कविताओं में राजनीतिक कड़वाहट की सफल अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। इस संदर्भ में कवि स्वयं लिखता भी है– **"राजनीति की ओर मेरा यह रवैया है– संकटकालीन रवैया कह लीजिए – कि वह बहुत जरूरी है या वह फिजूल है, दोनों फतवे संकट से भागने के बहाने हैं – वह बहुत जरूरी है, पर मैं भी अपने लिए बहुत जरूरी है– अपनी उस कला परंपरा के लिए, जिसमें मैं अपनी एक मूर्ति बनाता और ठहाता हूँ और आप कहते हैं कि कविता की है।" 'एक अधेड़ भारतीय आत्मा'** नामक कविता में वे कहते भी हैं–

सब समाजवादी दल खोज रहा था लड़के
मंत्री बनने के लिए अगली सरकार में
मैं खोज रहा था भीड़ में रामलाल
वही मिल जाय अगर मैंकू न मिले तो

निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से रघुवीर सहाय के काव्य में व्याप्त राजनीतिक परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट किया जा सकता है–

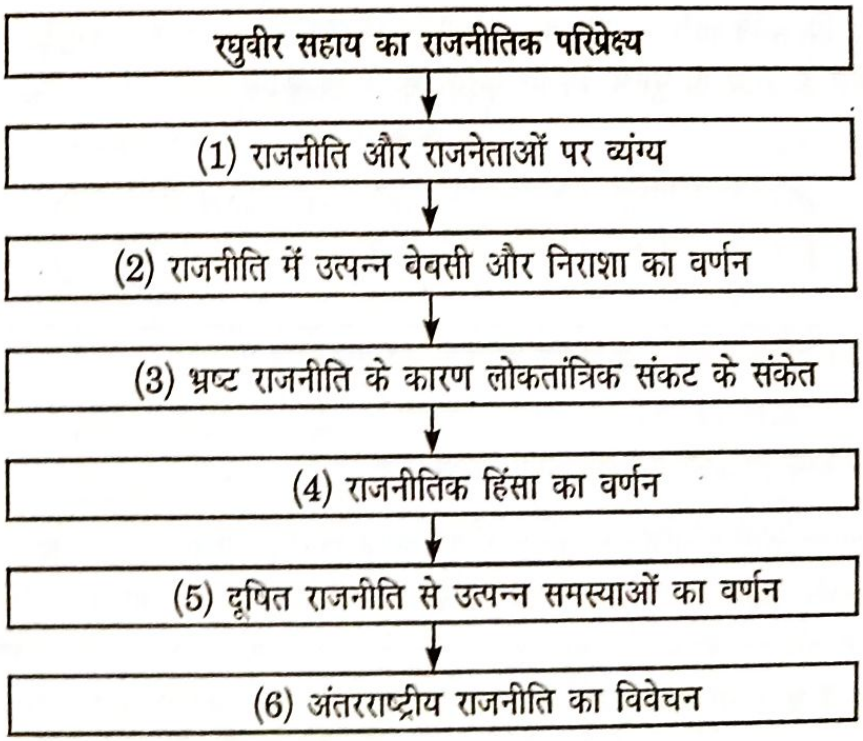

1. राजनीति और राजनेताओं पर व्यंग्य—रघुवीर सहाय ने अपने काव्य में राजनीति और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत देश के राजनेताओं पर करारे व्यंग्य किए हैं। अपने अनुभव के आधार पर कवि इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि देश में फैली हुई पूर्ण अव्यवस्था के लिए राजनेता ही उत्तरदायी हैं। यही कारण है कि देश में चारों ओर भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, अनपढ़ता, नारियों की असुरक्षा तथा गरीबी आदि समस्याएँ लगातार भयंकर रूप अवधारण करती जा रही हैं। लोगों ने अब राजनेताओं पर विश्वास करना बंद कर दिया है। कारण यह है कि हमारे राजनेता लोगों को मात्र वोट समझते हैं। जातिवाद और साम्प्रदायिकता का केवल प्रचार करते हैं। चुनाव से पूर्व झूठे वादे करना इनकी आदत बन चुकी है। कभी-कभी तो लोगों के मन में लोकतंत्र के प्रति शंका होने लगती है। राजनेता विश्वास करने के योग्य नहीं हैं। स्वयं ये लोग न तो न्याय के नियमों से डरते हैं और न ही कानून का पालन करते हैं। यदि कोई व्यक्ति इनकी अवज्ञा करता है या इन पर हँसता है तो उसे ये डराने का प्रयास करते हैं। इनका एक ही लक्ष्य है— जैसे-तैसे सत्ता को हथियाना। यदि एक पार्टी में इन्हें टिकट नहीं मिलती तो तत्काल दूसरी पार्टी का पल्लू थाम लेते हैं। एक स्थल पर कवि लिखता भी है—

एक पूरी जाति अविश्वासों की पैदा हुई
न्याय के नियमों से जो नहीं डरते,
हँसते हैं वे तो डराते हैं।
कहते हैं वे
कि कुछ विश्वसनीय नहीं रहा
जीवन में सत्ता के चरणों में किंतु वे आस्थावान
चढ़े जा रहे हैं

2. राजनीति से उत्पन्न बेबसी और निराशा का वर्णन—आजादी से पूर्व आम आदमी के मन में यह आशा जागृत हुई थी कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उसका जीवन सुखमय हो जाएगा। तत्कालीन नेताओं तथा कुछ क्रांतिकारियों के त्याग के फलस्वरूप हमारा देश स्वतंत्र हुआ और फिर देश में लोकतंत्र की स्थापना हुई। कुछ समय तक लोग इन राजनेताओं पर विश्वास करके प्रतीक्षा करते रहे कि देश में समाजवाद की स्थापना होगी। गरीब और अमीर का भेद मिटेगा और सबको बराबर सुख-सुविधा मिलेगी परंतु राजनीति के क्रूर परिवेश में आम आदमी बहुत पीछे रह गया। राजनीति और राजनेता केवल सत्ता प्राप्त करने में अपनी शक्ति खर्च करते रहे और आम आदमी ने स्वयं को बेबस और निराशा का अनुभव किया। उसने मन में जो सपने और लालसाएँ पाली थीं वे धराशायी हो गईं। आजादी के नारों से लोगों के मन में जो लोकतंत्र के प्रति एक मोह उत्पन्न हुआ था वह शीघ्र ही भंग हो गया। दिनों-दिन आम आदमी की हालत खराब होती चली गई। सत्ता प्राप्त नेता जनता से लुभावने वादे करते रहे और गरीबी समाप्त करने के नारे लगाते रहे। परंतु कोई भी नारा सच्चा सिद्ध नहीं हो सका। परिणाम यह हुआ कि राजनेता भ्रष्ट आचरण द्वारा अपना और अपने परिवारजनों का घर भरने लगे। लाल बत्ती की बड़ी-बड़ी कारों में घूमना उनका शौक बन गया। जनता हैरान होकर इनको देखने लगी परंतु अब उनके पास मात्र निराशा और बेबसी के सिवा और कुछ नहीं था लेकिन लोकतंत्र की यह विडम्बना है कि हमारे राजनेता नए मुखड़े धारण करके लोगों के समक्ष उपस्थित हो जाते हैं। करोड़ों का घोटाला करने के बाद भी बेदाग बच जाते हैं। जो व्यक्ति एक बार संसद में पहुँच जाता है, पाँच वर्षों में वह अपनी आय को सौ गुना बढ़ा लेता है। यह सब देखकर जनता निराश और परेशान हो उठती है, लेकिन वह बेबस और असहाय है। कोई भी उसकी व्यथा को नहीं समझता। कविवर रघुवीर सहाय ने इस राजनीतिक परिवेश से निराश होकर एक स्थल पर लिखा भी है—

बीस बरस बीत गए,
लालसा मनुष्य की तिल-तिलकर मिट गई
अब नहीं हो सकता कोई लेखक महान्
पहले तो ब्राह्मण होंगे, फिर ठाकुर होंगे।

3. भ्रष्ट राजनीति के कारण लोकतांत्रिक संकट के संकेत—कविवर रघुवीर सहाय का विचार है कि वर्तमान भ्रष्ट राजनीति के कारण हमारा लोकतंत्र संकट में है। कारण यह है कि भ्रष्टाचार और बढ़ती हुई महंगाई के कारण लोगों का न तो राजनीति में विश्वास रहा है और न ही लोकतंत्र पर। राजनेता राजनीति को एक व्यवसाय के रूप में अपना रहे हैं और परिवारवाद को बल प्रदान कर रहे हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि बड़े-बड़े प्रशासनिक अधिकारी भी इन राजनेताओं से डरने लगे हैं। वर्तमान

राजनीतिक व्यवस्था में बड़े से बड़ा अधिकारी भी भ्रष्टाचार से नहीं बच पाता। वह अपनी उन्नति प्राप्त करने के लिए राजनेताओं के इशारों पर नाचता है। लगता है कि जनता के प्रति उसका कोई दायित्व नहीं है। अब तो राजनीति में दबंग और बाहुबली भी प्रवेश कर चुके हैं जिससे उनके क्षेत्र के लोग डरते हैं। क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियाँ पनपने लगी है। वह दिन दूर नहीं जब देश का संघीय ढाँचा चरमराने लगेगा। दूसरा, वर्तमान भ्रष्ट राजनीति देश में अव्यवस्था को जन्म दे रही है। हमारे भ्रष्ट राजनेता लोक सेवक न रहकर तानाशाह बन चुके हैं। फलस्वरूप वे प्रजा की आवाज को सुनते तक नहीं। यदि कोई उनका विरोध करता है तो उसकी आवाज को दबा दिया जाता है। फलस्वरूप हिंसा का वातावरण उत्पन्न होने लगा है। लोकतंत्र के नाम पर लोगों को मूर्ख बनाया जा रहा है। वर्तमान भ्रष्ट राजनेताओं, प्रशासनिक अधिकारियों तथा पूंजीपतियों ने लोकतंत्र को राजतंत्र में परिवर्तित कर दिया है। एक स्थल पर कवि अपनी आवाज को बुलंद करता हुआ कहता भी है–

तब जो लोग सचमुच जानते हैं कि यह व्यवस्था बिगड़ रही है
वे उन लोगों के शोर में छिप जाते हैं
जो इस व्यवस्था को और अधिक बिगाड़ते रहना चाहते हैं।

4. राजनीतिक हिंसा का वर्णन–एक पत्रकार के रूप में कविवर रघुवीर सहाय ने यह अनुभव किया कि हमारी भ्रष्ट राजनीति और राजनेता हिंसा को बढ़ावा दे रहे हैं। प्रत्येक क्षेत्र में राजनेताओं ने अपने गुण्डे और बाहुबली पाल रखे हैं। जब भी कोई व्यक्ति अथवा सामाजिक वर्ग उनका विरोध करता है तो हिंसात्मक गतिविधियों द्वारा उनके विरोध को दबा दिया जाता है। निश्चय से जनसंख्या की वृद्धि हमारे देश की सभी समस्याओं की जननी कही जा सकती है परंतु भ्रष्ट राजनीति भी देश के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। जब तक भ्रष्ट राजनीति और राजनेताओं पर लगाम नहीं कसी जाती, तब तक न तो देश से भ्रष्टाचार दूर होगा, न ही महंगाई और न ही गरीबी, बल्कि ये समस्याएं निरंतर बढ़ती रहेंगी। **'रामदास'** रघुवीर सहाय की एक बहुचर्चित कविता है जो वर्तमान समाज में व्याप्त बर्बरता का कच्चा चिट्ठा प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत कविता में 'राम' शब्द सामाजिक मान्यताओं का पालन करने वाले आदमी का प्रतीक है और **'दास'** शब्द उसकी निरीहता और विनम्रता की ओर संकेत करता है। हमारे राजनेता ऐसे व्यक्ति का अस्तित्व ही मिटा देते हैं, जो उनका विरोध करते हैं। हिंसा का शिकार बने रामदास जैसे व्यक्ति का कोई भी साथ नहीं देता। रामदास को स्पष्ट बता दिया जाता है कि किस दिन, किस स्थान पर और किस समय उसकी हत्या की जाएगी। सभी लोगों को भी पता होता है कि आज रामदास की हत्या होने जा रही है। वह बेचारा निराश और व्यथित होकर धीरे-धीरे आगे बढ़ता है, कोई उसका साथ नहीं देता। आसपास के लोग दर्शक बने चुपचाप खड़े रहते हैं क्योंकि उन सबको पता होता है कि आज रामदास की हत्या होगी। कवि लिखता भी है–

खड़ा हुआ वह बीच सड़क पर
दोनों हाथ पेट पर रखकर
सधे कदम रख करके आए
लोग सिमट कर आँख गड़ाए
लगे देखने उसको जिसकी तय थी हत्या होगी।

यही नहीं, चुनाव के दिनों में न जाने कितने मतदाता हिंसा के शिकार हो जाते हैं। सरकार की ओर से एक ही घोषणा की जाती है कि कानून अपना काम करेगा परंतु कानून तो उन्हीं का बनाया हुआ है। कानून सत्ता प्राप्त पार्टी का दास होता है क्योंकि कानून लागू करने वाले उनके इशारों पर ही काम करते हैं। यही कारण है कि रामदास की दिन-दहाड़े हत्या कर दी जाती है। लोग उस हत्या को देखकर मात्र चर्चाएँ करते रह जाते हैं। हत्याओं की यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है जिससे समाज पर दबंगों का राज्य छा जाता है।

5. दूषित राजनीति से उत्पन्न समस्याओं का वर्णन–रघुवीर सहाय ने राजनीति से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं पर भी प्रकाश डाला है। उनका विचार है कि राजनीति के कारण देश में भ्रष्टाचार, महँगाई, गरीबी, अनपढ़ता, असुरक्षा और भाषायी समस्या दिनों-दिन गंभीर होती जा रही है। हमारे राजनेता किसी भी समस्या का हल करना ही नहीं चाहते। वे ~~राजनीतिक~~ स्वार्थों के शिकार बने हुए हैं। उनके पास वह सोच और चिंतन नहीं है जिससे देश की समस्याओं का कोई हल निकाला जाए। प्रत्येक राजनीतिक पार्टी चुनाव से पहले अपना मेनिफेस्टो तैयार करती है जिसमें जनता से सम्बंधित समस्याओं का विवरण दिया जाता है। साथ ही वे वादे किए जाते हैं कि आने वाले पाँच वर्षों में वे वादे पूरे नहीं किए जाते। फिर अगले चुनाव में नया मेनिफेस्टो तैयार कर लिया जाता है।

हमारे संविधान में यह घोषणा की गई थी कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है और शीघ्र ही यह सारे देश में राष्ट्रभाषा के रूप में काम करने लगेगी, परंतु राजनीतिक स्वार्थों के कारण आज तक हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई। कवि का कथन है कि हिंदी एक विधुर की दूसरी पत्नी बन चुकी है। एक स्थल पर कवि लिखता है–

"हमारी हिंदी एक दुहाजू की नयी बीवी है
बहुत बोलने वाली, बहुत खाने वाली, बहुत सोने वाली
गहने गढ़ाते जाओ
सर पर चढ़ाते जाओ
वह मुटाती जाए
पसीने से गन्धाती जाए
घर का माल मैके पहुँचाती जाए।"

6. अंतरराष्ट्रीय राजनीति का विवेचन–रघुवीर सहाय की कविताओं में केवल देश की राजनीति का ही वर्णन नहीं किया गया, बल्कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति का भी उल्लेख किया गया है। **'पैदल आदमी'** तथा **'बड़े देशों की राजनीति'** उनकी उल्लेखनीय कविताएँ हैं जिनमें अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिप्रेक्ष्य देखा जा सकता है। **'पैदल आदमी'** कविता में कवि ने भारत-पाक की परस्पर राजनीति पर प्रकाश डाला है। इसी प्रकार 'बड़े देशों की राजनीति' में कवि ने राष्ट्रीय गौरव तथा अंतरराष्ट्रीय राजनीति को महत्त्व प्रदान किया है। आज सभी देश अपने स्वार्थों की ही चिंता करते हैं। देश के लोगों की उन्हें कोई चिंता नहीं है। अपने देश के हालात को देखकर वे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तनाव को घटाते-बढ़ाते रहते हैं। संभवतः रघुवीर सहाय प्रथम कवि हैं जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय राजनीति को अपने काव्य में प्रथम स्थान दिया है। **'पैदल आदमी'** नामक कविता में कवि कहता भी है–

इतने में दोनों प्रधानमंत्री बोले
हम दोनों में इस बरस दोस्ती हो ले
यह कहकर दोनों ने दरवाजे खोले
पर राष्ट्र मंत्रियों ने दो नियम बताये
दो पारपात्र उसको जो उड़कर आए
दो पारपात्र उसको जो उड़कर जाए

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि रघुवीर सहाय ने अपनी काव्य रचनाओं में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का यथार्थ वर्णन किया है। उदाहरण के रूप में 'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य में मंत्री मुसद्दी लाल लोकतंत्र के भ्रष्टाचार का प्रतीक है। कुछ और भी ऐसी कविताएँ हैं जिनमें राजनीति की ओर संकेत किया गया है। राजनीतिक चेतना की प्रधानता के कारण ही डॉ. बच्चन सिंह ने रघुवीर सहाय को 'पोलिटिकल कवि' कहा है।

◆◆◆

3. रघुवीर सहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ

3. रघुवीर सहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ की विवेचना कीजिए। **(Most Imp.)**

अथवा

स्पष्ट करें कि रघुवीर सहाय के काव्य में सामाजिक यथार्थ का खुला चित्रण हुआ है।

उत्तर–रघुवीर सहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ–रघुवीर सहाय समकालीन हिन्दी कविता के महत्त्वपूर्ण कवियों में अपना स्थान रखता है। रघुवीर सहाय ने तत्कालीन समाज को साम्यवादी विचारधारा के दृष्टिकोण से नहीं देखा, बल्कि विभिन्न पत्रों का संपादन करते समय उनकी सामाजिक समझ विकसित होने लगी। फलस्वरूप वे जन-पक्षधर के कवि बन गए। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव ने उचित ही लिखा है–**"इनकी कविताएँ वर्तमान सामाजिक ढाँचे के अवरोधों, अन्तर्विरोधों तथा विसंगतियों का सामना करते हुए लिखी गई हैं।"** यदि सामाजिक शब्दार्थ की व्याख्या की जाए तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि समाज की सच्चाई

को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करना। प्रत्येक सजग कलाकार समकालीन समाज तथा उसकी समस्याओं से अवश्य प्रभावित होता है। सामाजिक पर्यावरण में जो बात उसे कचोटती है, उसके बारे में वह अपने स्पष्ट विचार प्रकट करता है। रघुवीर सहाय भी एक सजग साहित्यकार थे। समाचार-पत्रों का संपादन करते समय उनका संपर्क सभी प्रकार के लोगों से हुआ। वे न केवल बहुपठित थे, बल्कि बहुश्रुत भी थे। अतः समाज की वास्तविकता उनकी दृष्टि से बच नहीं पाई। वे समाज में जो कुछ घटित होते देखते हैं, उसे अपनी कविताओं द्वारा प्रस्तुत कर देते हैं। कवि ने इस वास्तविकता को अनुभव किया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न होने लगीं। उनका काव्य के द्वारा वर्णन करना कवि ने अपना दायित्व समझा। इस संदर्भ में **श्रीकृष्ण दत्त पालीवाल** ने लिखा भी है– **"दरअसल सामाजिक प्रश्नाकुलताओं, विसंगतियों विद्रूपताओं और विडंबनाओं ने ही रघुवीर सहाय को कवि बनाकर दम लिया, अन्यथा कविता करने की जरूरत क्या थी? वे खतरनाक ढंग से गहराई में जाकर सोचने-समझने वाले व्यक्ति और रचनाकार हैं और यही उनके काव्य का सम्पूर्ण चरित्र बना है। वैचारिक स्तर पर वे राममनोहर लोहिया, नरेन्द्र देव, जयप्रकाश नारायण से दिशा दृष्टि करते हैं। समाजवादी विचार आंदोलन के तो वे जीवनभर योद्धा भी रहे। कवि योद्धा को मार्क्सवाद से परहेज नहीं रहा लेकिन वे ढिंढोलची बनकर अपना भी न सके।"** श्री रघुवीर सहाय के सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए निम्नलिखित बिंदुओं पर चिंतन करना आवश्यक है–

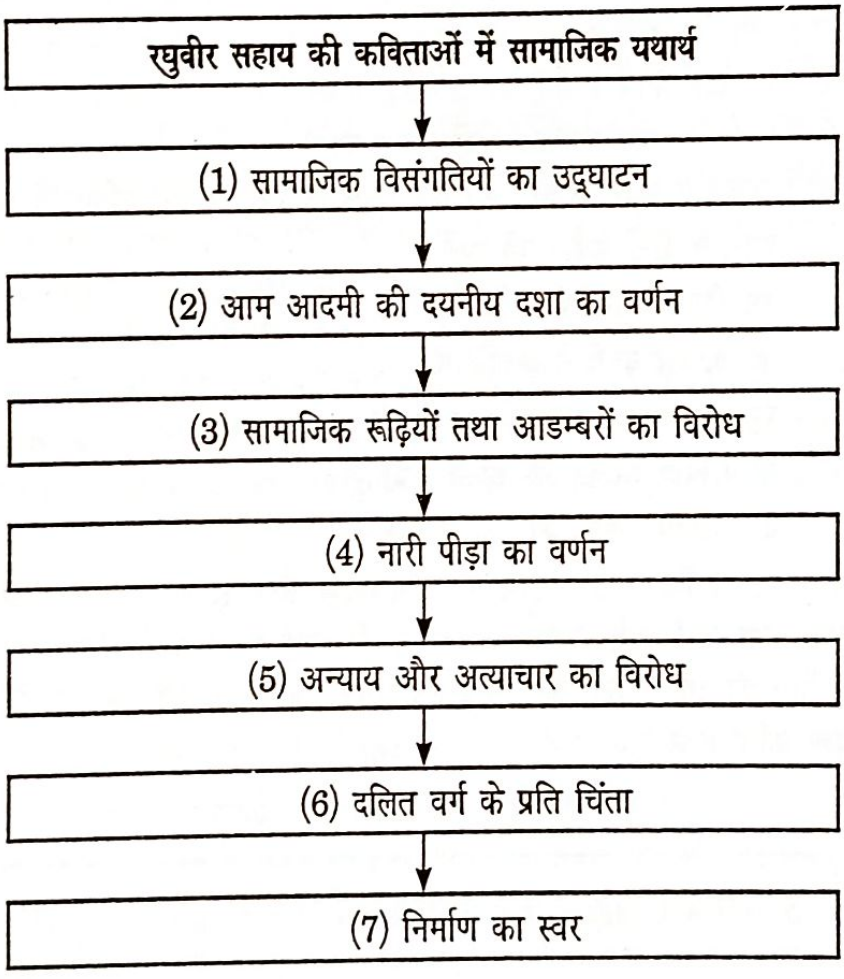

1. सामाजिक विसंगतियों का उद्‌घाटन–एक यथार्थवादी कवि होने के कारण रघुवीर सहाय ने अपनी कविताओं में सामाजिक जीवन में व्याप्त असंख्य विसंगतियों पर प्रहार किया। कवि ने अनुभव किया कि ये विसंगतियाँ जहाँ एक ओर व्यक्ति की स्वाधीनता का हरण कर रही हैं वहाँ दूसरी ओर मानवीयता के ह्रास के लिए भी उत्तरदायी हैं। आम आदमी पर अनेक प्रकार की पाबंदियाँ लगा दी गईं। समाज इस बात की परवाह नहीं करता कि आम आदमी की आत्मा छटपटा रही है या नहीं। रघुवीर सहाय की कविता के सामाजिक आयाम बहुत ही व्यापक हैं। इस संदर्भ में डॉ. बच्चन ने उचित ही लिखा है–**"आधुनिकता के नाम पर उनमें निर्वासन, अलगाव, अकेलापन, पुरानी पीढ़ी के प्रति आक्रोश नहीं मिलेगा। उसके स्थान पर मिलेंगी अनाहत जिजीविषा, मध्यवर्गीय जीवन का दबाव और लोकतांत्रिक जीवन की विडंबनाएँ।"** कवि आम आदमी और राजनीति के अंतः सम्बंधों पर विश्लेषण करता है तो साथ ही ईश्वर और ज्योतिष के विषय में अपनी आसक्ति भी व्यक्त करता है।

'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य संग्रह में कवि लिखता भी है–

लोगो, मेरे देश के लोगो और नेताओ
मैं सिर्फ एक कवि हूँ
मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता
न उसके साथ खाने के लिए गम
न मैं मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा सम्भ्रम

यथार्थवादी कवि वही हो सकता है जो बुर्जुआ लोकतांत्रिक ढाँचे के भीतर पूँजीवादी नेतृत्व, विसंगतियों को खत्म करने के लिए मन में महसूस करके अपने भावों को व्यक्त करता है, परंतु वह यह भी देखता है कि भ्रष्ट नेतृत्व को जनता के शोषण की बात कहने पर कवि का हित सिद्ध नहीं होता। विडम्बना तो यह है कि जब न्यायाधीश पद पर था तब न्याय की निष्पक्षता को लेकर उसको कोई चिंता नहीं थी, न ही उसके पास कोई आह्वान था। परंतु जब वह पदमुक्त हो जाता है तब वह लोगों को आह्वान करते हुए कहता है कि अब समय आ गया है कि हमें न्याय के लिए संघर्ष करना होगा। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

कुछ होगा कुछ होगा अगर मैं बोलूँगा।
न टूटे न टूटे तिलस्म सत्ता का मेरे अंदर एक कायर टूटेगा टूट
मेरे मन टूट एक बार सही तरह
अच्छी तरह टूट मत झूठ-मूठ अब मत रूठ
मत डूब सिर्फ टूट जैसे कि परसों के बाद।

2. आम आदमी की दयनीय दशा का वर्णन–रघुवीर सहाय ने अपनी अधिकांश कविताओं में आम आदमी और उससे जुड़ी विभिन्न समस्याओं का वर्णन किया है। उन्होंने आम आदमी की गरीबी, अशिक्षा, बढ़ती हुई महँगाई तथा असुरक्षा की भावना पर करारे व्यंग्य किए हैं। कवि महसूस करता है कि आज आम आदमी बड़ा ही मायूस और लाचार हो चुका है। सत्ता प्राप्त नेता आम आदमी के हितों के बारे में कभी नहीं सोचते। वे उसे केवल अपना वोट मानते हैं। चुनाव से पूर्व तरह-तरह के वादे करते हैं लेकिन चुनाव समाप्त होते ही फिर अपने स्वार्थों को पूरा करने में लग जाते हैं। आम आदमी की स्थिति बद से बदत्तर होती जा रही है। चारों ओर जो असुरक्षा का वातावरण बना हुआ है, उससे लोग घबराए हुए हैं। 'रामदास' नामक कविता में कवि ने आम आदमी के साथ हो रहे अत्याचारों का यथार्थ वर्णन किया है। आम आदमी हमेशा कानून और सामाजिक मान्यताओं का पालन करता है, लेकिन वह विनम्र और निरीह भी है। सत्ता प्राप्त नेताओं के गुण्डे हमेशा उन पर अत्याचार करते रहते हैं। रामदास को बता दिया गया था कि उसकी हत्या होने जा रही है परंतु किसी ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया। एक उदाहरण देखिए–

निकल गली से तब हत्यारा
आया उसने नाम पुकारा
हाथ तौलकर चाकू मारा
छूटा लोहू का फव्वारा
कहा नहीं था उसने आखिर उसकी हत्या होगी।

3. सामाजिक रूढ़ियों तथा आडम्बरों का विरोध–रघुवीर सहाय अपने युग बोध से जुड़े हुए कवि थे। उन्होंने अपनी काव्य रचनाओं में समाज में व्याप्त रूढ़ियों, आडम्बरों तथा जड़ परंपराओं का डटकर विरोध किया। यही कारण है कि उनको सामाजिक यथार्थ का कवि भी कहा जाता है। वे एक नई विचारधारा रखने वाले कवि थे। उन्होंने समाचार पत्रों द्वारा भी सामाजिक रूढ़ियों और झूठे बंधनों का न केवल विरोध किया, बल्कि उन्हें समाप्त करने की वकालत भी की। वे इस तथ्य को भली प्रकार से जानते थे कि जब तक समाज रूढ़ियों के बंधनों से मुक्त नहीं होता तब तक उसका सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। 'तोड़ो' नामक कविता रघुवीर सहाय की एक उल्लेखनीय कविता है जिसमें वे प्रतीकात्मक शब्दावली द्वारा रूढ़ियों तथा जड़ परंपराओं के बंधनों को तोड़ने का आह्वान करते हैं–

'तोड़ो तोड़ो तोड़ो
ये पत्थर ये चट्टानें
ये झूठे बंधन टूटे
तो धरती को हम जाने

धीरे-धीरे तत्कालीन व्यवस्था के प्रति आक्रोश उत्पन्न होने लगा। रघुवीर सहाय ने भी महसूस किया कि पूंजीवादी जनतंत्र में मानव और मानव के बीच असमानता लगातार बढ़ती जा रही है। सामाजिक अन्याय का बोलबाला है। ऐसी स्थिति में एक गरीब आदमी को दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती। 'नेता क्षमा करें' में कवि लिखता भी है–

मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता न उसके साथ खाने के लिए गम
न मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा भ्रम
लोगों में श्रेष्ठ लोगों मुझे माफ करो
मैं तुम्हारे साथ आ नहीं सकता।

कुछ कविताओं में रघुवीर सहाय ने पूंजीपतियों के प्रति व्यंग्य द्वारा करारी चोट की है। 'पानी-पानी, बच्चा-बच्चा' कवि की एक महत्त्वपूर्ण कविता है जिसमें पानी शब्द आर्थिक स्वतंत्रता का प्रतीक है। इस कविता के माध्यम से कवि यह कहना चाहता है कि भले ही हमारा देश राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र हो गया हो, परंतु आर्थिक दृष्टि से आज भी गुलाम है। जब तक भारत के शोषित तथा अभावग्रस्त लोग आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं हो जाते तब तक इस आजादी का कोई महत्त्व नहीं है। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

बरसों पानी को तरसाया
जीवन से लाचार किया
बरसों जनता की गंगा पर
तुमने अत्याचार किया
हमको अक्षर नहीं दिया है
हमको पानी नहीं दिया
पानी नहीं दिया तो समझो
हमको बानी नहीं दिया

कवि का विचार है कि पूंजीवादी जनतंत्र देश के शोषित लोगों को अभावग्रस्त ही रखना चाहता है और जनवादी मूल्यों को नकारता है। देश के इन श्रेष्ठ लोगों ने ही देश की दुर्गति कर दी है। वे केवल अपने स्वार्थों की ही चिंता करते हैं। गरीबों के प्रति उनके मन में कोई सहानुभूति नहीं है। 'नई हँसी' में कवि श्रेष्ठ लोगों पर करारा व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

राष्ट्र को महासंघ का यह संदेश है
जब मिलो तिवारी से.....हँसो.....क्योंकि तुम भी तिवारी हो
जब मिलो शर्मा से.....हँसो.....क्योंकि वह भी तिवारी है

(4) मानवीय संबंधों और पीड़ा की अभिव्यक्ति–रघुवीर सहाय समाज से जुड़े हुए कवि थे। एक पत्रकार होने के कारण उन्होंने समाज की समस्याओं को बड़े समीप से देखा और उन पर चिंतन किया। यही कारण है कि उन्होंने मानवीय रिश्तों की पहचान पर अधिक कविताएँ लिखी हैं। मानवीय व्यथा के विविध आयामों पर भी वे जमकर लिखते हैं। विशेषकर उन्होंने नारी जीवन की पीड़ा का बड़ी सहजता से अंकन किया है। 'बैंक में लड़कियाँ' कविता स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान की संवेदना को प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार 'चेहरा' नामक कविता में गरीब घर की लड़की का वर्णन किया गया है जो लड़के-सा चेहरा बनाकर स्वीकृत वर्ग में शामिल होना चाहती है। कवि लिखता है– उनकी तरह बनने की इसकी कोशिश एक दुःख-भरी कोशिश है क्योंकि वह चेहरा बदलकर अपने वर्ग का ही लड़का बनेगी। मानवीय सम्बन्धों की पीड़ा कवि की केन्द्रीय संवेदनात्मक वृत्ति है। कवि ने बड़े समीप से मानवीय पीड़ा को देखा और उसे गहराई से समझा। यही कारण है कि उन्होंने पारिवारिक और सामाजिक संदर्भ में अनेक कविताओं की रचना की है जिनमें मानवीय संबंधों की पीड़ा का उद्घाटन हुआ है।

सहना परायी पीड़ाओं को बार-बार
जीते रहने का अकेला उपाय है
सही फिर उसी समय
दूर खड़े हो अपने को देखो। (लोग भूल गए हैं)

कवि स्वीकार करता है कि जब उसने लोगों की असीम पीड़ा को देखा और अनुभव किया तो वे अपनी पीड़ा को भूल गए। उन्हें लगा कि कवि की निजी पीड़ा गरीबों के सामने तुच्छ है। 'सीढ़ियों की धूप' में कवि लिखता भी है–

इस पीड़ा की इस पद्धति में
हम तो कुछ भी नहीं रहे
वह सब कुछ दुखड़े भूल गये
जो तुमसे अब तक नहीं कहे (सीढ़ियों की धूप में)

यही नहीं दुःख और पीड़ा के आधार पर कवि ने कविता को भी विविध काल खण्डों में विभक्त करने का प्रयास किया है। छायावादी कवि एक दुःख लेकर गीत लिख देता था परंतु प्रगतिवादी कवि प्रत्येक दुःख के कारण को पहचान लेता था। वह इतना कुशल गीतकार था कि वह प्रत्येक दुःख के मारे अपनी जान देने की बात करता था।

(5) यथार्थ चित्रण–साठोत्तरी कविता में रघुवीर सहाय ने बहुत सी ऐसी कविताएँ लिखी हैं जो अपने समय को पार करके यथार्थ का चित्रण करने में समर्थ रही हैं। यह भारतीय राजनीति का वह युग था जब पूंजीवादी दलों में दल-बदल की बीमारी इस प्रकार नहीं फैली थी जैसे आज फैल चुकी है, परंतु रघुवीर सहाय के पास एक ऐसी पैनी दृष्टि थी जो भविष्य को देख सकती थी। कवि को इस बात का अंदाजा था कि भारतीय जनता पर अपनी सत्ता कायम रखने के लिए पूंजीवादी तथा सामंतवादी जनतंत्र धन के बल पर दल-बदल की राजनीति को बढ़ावा देंगे। इस प्रकार की खरीद-फरोख्त द्वारा शोषण सत्ता पर कोई दोषारोपण नहीं होगा बल्कि दल-बदल की यह राजनीति आकर्षक जनवादी नारों के द्वारा लोगों को गुमराह करने में सफल रहेंगे। सचमुच यह प्रक्रिया हमारी राजनीति का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गई है। आज तो 'आया राम गया राम' की प्रक्रिया निरंतर विकास की ओर अग्रसर हो रही है। 'एक अधेड़ भारतीय आत्मा' नामक कविता में कवि ने बड़ी स्पष्टता के साथ लिखा है–

गाकर सुनाता है
जनवादों की घोषणा
महामंत्री
जनता के लिए नहीं
वह विरोधियों को प्रमाण दे रहा है
कि मैं दल-बदल के लिए योग्य व्यक्ति हूँ।

इसी प्रकार 'पैदल आदमी' नामक कविता भारत और पाकिस्तान जैसे पड़ोसियों के कटु-सम्बन्धों पर करारा व्यंग्य करती है। दोनों देशों में भयंकर युद्ध हुआ और दोनों देशों की सीमाओं के इस पार और उस पार लाशों के ढेर लग गए। लाशें नंगी पड़ी थीं। उन पर कोई कपड़ा नहीं था। लेकिन दोनों देशों के राजनेता अपनी-अपनी चाल चलने के तरीके ढूँढ़ रहे थे। यहाँ कवि ने आर्थिक असमानता का उद्घाटन करते हुए यथार्थ चित्रण किया है–

परराष्ट्र मंत्रियों ने दो नियम बताये
दो पारपात्र उसको जो उड़कर आए
दो पारपात्र उसको जो उड़कर जाए
पैदल को हम केवल तब इज्जत देंगे
जब देकर के बंदूक उसे भेजेंगे
या घायल से घायल अदले बदलेंगे।

(6) आक्रोश और व्यंग्य की प्रवृत्ति–रघुवीर सहाय ने सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में व्याप्त आंतरिक विसंगतियों तथा अन्तर्विरोधों के प्रति अपने आक्रोश को व्यक्त किया है। कहीं-कहीं वे व्यंग्य करने से भी नहीं चूकते। अवसरवादिता, समझौतापरस्ती, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, आर्थिक विषमता, छद्म क्रांति आदि को देखकर कवि की वाणी में आक्रोश भर जाता है। अपना आक्रोश व्यक्त करते समय कवि देश के राज्यपालों, मुख्यमंत्रियों और विधायकों को भी नहीं छोड़ता बल्कि उन पर करारे व्यंग्य करता है। यही तो हमारे लोकतंत्र की विडम्बना है। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

अपराधी-से आते हैं राज्यपाल, मुख्यमंत्री, विधायक
बख्शे हुए से जाते हैं।

कवि के आक्रोश को देखकर लगता है कि उनमें मोह भंग की प्रवृत्ति उत्पन्न हो गई है। प्रायः लोग यही समझते हैं कि रघुवीर सहाय लोकतंत्र विरोधी थे परंतु सच्चाई यह है कि वे लोकतंत्र के मूल्यों के भ्रष्टीकरण से बड़े ही आहत थे क्योंकि लोकतंत्र का संचालन करने वाले हमारे सांसद और विधायक भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे थे। फलस्वरूप अन्याय और आर्थिक विषमता को बल मिलने लगा। 'फिल्म के बाद चीख' नामक कविता में कवि संसद पर अपना करारा व्यंग्य करते हुए लिखता है–

संसद एक मंदिर है जहाँ किसी को द्रोही कहा नहीं
जा सकता
दूधपिये मुंह पोंछे आ बैठे जीवनदानी गोंद,
दानी सदस्य तोंद सम्मुख धर
बोले कविता में देश प्रेम लाना हरियाना प्रेम लाना
आइसक्रीम लाना है।

(7) नारी भावना–रघुवीर सहाय की कविता में नारी को विशेष स्थान दिया गया है। उन्होंने अपनी अनेक कविताओं में नारी की समस्याओं पर प्रकाश डाला है। वे नारी को समतावादी दृष्टिकोण से देखते हैं। जहाँ कुछ अन्य हिंदी कवि नारी को अबला समझकर उसके प्रति दया का भाव दिखाते हैं परंतु रघुवीर सहाय की दृष्टि में यह पंक्ति सामंतवादी मूल्य का प्रदर्शन है क्योंकि इसमें दया दिखाकर पात्र विशेष को छोटा, हीन और असहाय समझा जाता है और खुद को बड़ा समझा जाता है। अपने एक लेख में उन्होंने अपना एक दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए लिखा है–

"हिंदी साहित्य में स्त्री के प्रति यह भावना बार-बार व्यक्त हुई है कि वह उपेक्षिता है, इसलिए दया की पात्र है। आधुनिक कहे जाने वाले साहित्य में पुरुष से उसके शरीर संबंध को विशेष महत्त्व दिया गया है पर वहाँ भी उसके प्रति दया का भाव लेखक के मन से गया नहीं है.....मानो आधुनिक जीवन के नर-नारी समता के विचार ने रचनाकार को छुआ ही न हो और वह पिछले जमाने के सामंती मन से ही स्त्री को देख रहा है।" 'किले में औरत' रघुवीर सहाय की एक बहुचर्चित कविता है। इसमें कवि ने वेश्यावृत्ति का जो यथार्थ चित्रण किया है, वह बड़ा ही प्रभावशाली बन पड़ा है। कवि स्पष्ट करता है कि एक किले में कैद वेश्याएँ, देह व्यापार द्वारा पुरुषों को प्रसन्न करने में लगी रहती हैं लेकिन उनकी मृत्यु एक सामान्य घटना बनकर रह जाती है। उन पर कोई भी आँसू बहाने वाला व्यक्ति नहीं है। यथा–

उस घर में बीस औरतें थीं
उनमें थी सिर्फ एक बुढ़िया
प्यारी बुढ़िया प्यारी बुढ़िया
वे सब दोपहर में एक किले पर
पहरा देती सोती थी।

संक्षेप में कह सकते हैं कि कवि नारी के प्रति न तो दयाभाव दिखाता है और न ही सहानुभूति दिखाता है, बल्कि वह नारी शोषण का यथार्थ वर्णन करता है, साथ ही पुरुष वर्ग पर करारा व्यंग्य भी करता है।

◆◆◆

2. रघुवीर सहाय का राजनीतिक परिप्रेक्ष्य

2. रघुवीर सहाय की कविताओं में व्याप्त राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का मूल्यांकन कीजिए। **(Most Imp.)**

अथवा

रघुवीर सहाय के राजनीतिक परिप्रेक्ष्य की सोदाहरण विवेचना कीजिए।

उत्तर–रघुवीर सहाय का राजनीतिक परिप्रेक्ष्य–रघुवीर सहाय समकालीन हिन्दी कविता के महत्त्वपूर्ण कवियों में अपना स्थान रखते हैं। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् उन्होंने अपनी आजीविका के लिए पत्रकारिता के क्षेत्र को चुना। वे 'दैनिक नवजीवन', 'प्रतीक', 'कल्पना', 'दिनमान' आदि के संपादन में अपना समुचित योगदान देते रहे। रघुवीर सहाय के पत्रकारिता जीवन का स्वर्ण काल निर्माण के प्रकाशन के काल में कहा जा सकता है। वे इसके सहसम्पादक और बाद में प्रधान सम्पादक रहे। फलस्वरूप रघुवीर

सहाय को तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों तथा राजीतिक परिस्थितियों का समुचित ज्ञान था। विशेषकर 'आत्महत्या के विरुद्ध' नामक काव्य संग्रह में कवि ने राजनीतिक परिवेश की क्रूर सच्चाइयों को वाणी प्रदान की है। इसमें कवि के पत्रकार-सम्पादक का अनुभव मुखरित हुआ है जिसके कारण वे राजनीति के अंतः-सम्बन्धों को कलात्मक रूप से व्यक्त करने में सफल हो सके। राजनीति इस काव्य संग्रह का मुख्य विषय है। इसी प्रकार 'हँसो-हँसो-जल्दी हँसो' काव्य रचना का प्रकाशन सन् 1975 में हुआ। इसमें कवि की सोच और कला के आयाम अपेक्षाकृत सूक्ष्म होते चले गए हैं। कवि ने इस काव्य संग्रह में राजनीकि क्षेत्र के छल-छद्म के जटिल व्यूह को उभारने का प्रयास किया है। राजनीतिक यथार्थ की सूक्ष्मतम अभिव्यक्ति के कारण इसमें कवि का शिल्प कौशल बड़ा ही सजग और प्राणवान दिखाई देता है। कवि ने जहाँ एक ओर सामाजिक ढाँचे के अवरोधों और अन्तर्विरोधों का उद्‌घाटन किया है, वहाँ दूसरी ओर राजनीतिक विसंगतियों का न केवल यथार्थ वर्णन किया है बल्कि उन पर व्यंग्य भी किया है। 'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य संग्रह की एक कविता में कवि कहता है–

गया वाजपेयी जी से पूछ आया देश का हाल
पर उढ़ा नहीं सका एक नंगी औरत को
कम्बल रेलगाड़ी में बीस अजनबियों के सामने।

रघुवीर सहाय ने ऐसी अनेक कविताओं की रचना की है जो राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के कारण पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। उनकी कविताओं में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के बारे में **जे. अरुण कुमार** लिखते भी हैं– "उनकी कविता में राजनीतिक चिंतन अथवा स्पर्श सहज संवेदना के रूप में है। जहाँ कहीं भी राजनीतिक तलखियाँ हैं, वे साहित्येतर हत्यारे के रूप में नहीं हैं।" वस्तुतः समसामयिक राजनीति से कवि का अत्यधिक सामीप्य था। कवि राजनीति और राजनेताओं के यथार्थ को भली प्रकार से जानता था। यही कारण है कि उनकी कविताओं में राजनीतिक कड़वाहट की सफल अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। इस संदर्भ में कवि स्वयं लिखता भी है– **"राजनीति की ओर मेरा यह रवैया है– संकटकालीन रवैया कह लीजिए – कि वह बहुत जरूरी है या वह फिजूल है, दोनों फतवे संकट से भागने के बहाने हैं – वह बहुत जरूरी है, पर मैं भी अपने लिए बहुत जरूरी है– अपनी उस कला परंपरा के लिए, जिसमें मैं अपनी एक मूर्ति बनाता और ठहाता हूँ और आप कहते हैं कि कविता की है।" 'एक अधेड़ भारतीय आत्मा'** नामक कविता में वे कहते भी हैं–

सब समाजवादी दल खोज रहा था लड़के
मंत्री बनने के लिए अगली सरकार में
मैं खोज रहा था भीड़ में रामलाल
वही मिल जाय अगर मैंकू न मिले तो

निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से रघुवीर सहाय के काव्य में व्याप्त राजनीतिक परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट किया जा सकता है–

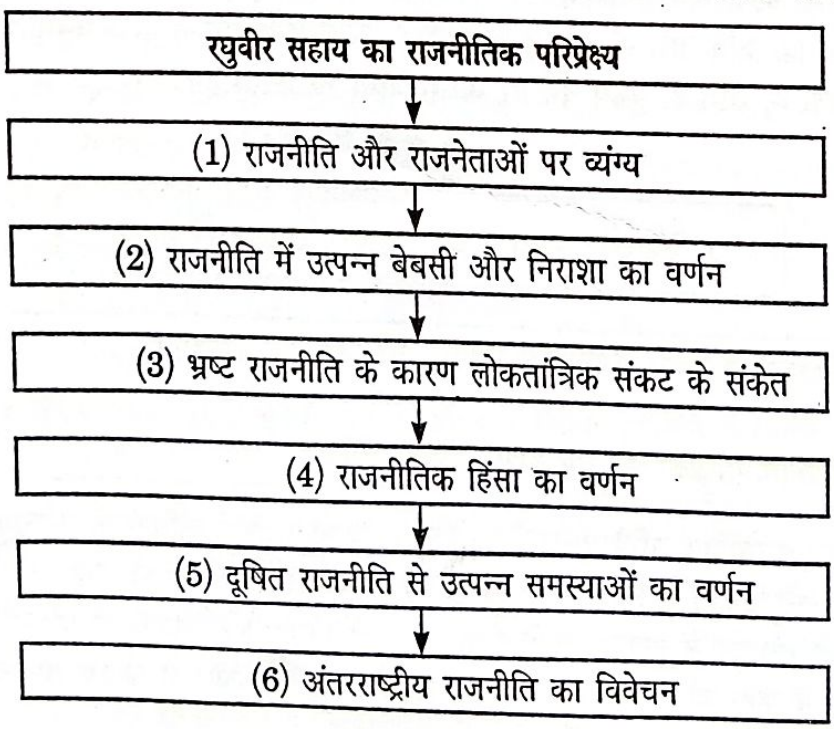

1. राजनीति और राजनेताओं पर व्यंग्य—रघुवीर सहाय ने अपने काव्य में राजनीति और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत देश के राजनेताओं पर करारे व्यंग्य किए हैं। अपने अनुभव के आधार पर कवि इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि देश में फैली हुई पूर्ण अव्यवस्था के लिए राजनेता ही उत्तरदायी हैं। यही कारण है कि देश में चारों ओर भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, अनपढ़ता, नारियों की असुरक्षा तथा गरीबी आदि समस्याएँ लगातार भयंकर रूप अवधारण करती जा रही हैं। लोगों ने अब राजनेताओं पर विश्वास करना बंद कर दिया है। कारण यह है कि हमारे राजनेता लोगों को मात्र वोट समझते हैं। जातिवाद और साम्प्रदायिकता का केवल प्रचार करते हैं। चुनाव से पूर्व झूठे वादे करना इनकी आदत बन चुकी है। कभी-कभी तो लोगों के मन में लोकतंत्र के प्रति शंका होने लगती है। राजनेता विश्वास करने के योग्य नहीं हैं। स्वयं से लोग न तो न्याय के नियमों से डरते हैं और न ही कानून का पालन करते हैं। यदि कोई व्यक्ति इनकी अवज्ञा करता है या इन पर हँसता है तो उसे ये डराने का प्रयास करते हैं। इनका एक ही लक्ष्य है— जैसे-तैसे सत्ता को हथियाना। यदि एक पार्टी में इन्हें टिकट नहीं मिलती तो तत्काल दूसरी पार्टी का पल्लू थाम लेते हैं। एक स्थल पर कवि लिखता भी है—

एक पूरी जाति अविश्वासों की पैदा हुई
न्याय के नियमों से जो नहीं डरते,
हँसते हैं वे तो डराते हैं।
कहते हैं वे
कि कुछ विश्वसनीय नहीं रहा
जीवन में सत्ता के चरणों में किंतु वे आस्थावान
चढ़े जा रहे हैं

2. राजनीति से उत्पन्न बेबसी और निराशा का वर्णन—आजादी से पूर्व आम आदमी के मन में यह आशा जागृत हुई थी कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उसका जीवन सुखमय हो जाएगा। तत्कालीन नेताओं तथा कुछ क्रांतिकारियों के त्याग के फलस्वरूप हमारा देश स्वतंत्र हुआ और फिर देश में लोकतंत्र की स्थापना हुई। कुछ समय तक लोग इन राजनेताओं पर विश्वास करके प्रतीक्षा करते रहे कि देश में समाजवाद की स्थापना होगी। गरीब और अमीर का भेद मिटेगा और सबको बराबर सुख-सुविधा मिलेगी परंतु राजनीति के क्रूर परिवेश में आम आदमी बहुत पीछे रह गया। राजनीति और राजनेता केवल सत्ता प्राप्त करने में अपनी शक्ति खर्च करते रहे और आम आदमी ने स्वयं को बेबस और निराशा का अनुभव किया। उसने मन में जो सपने और लालसाएँ पाली थीं वे धराशायी हो गईं। आजादी के नारों से लोगों के मन में जो लोकतंत्र के प्रति एक मोह उत्पन्न हुआ था वह शीघ्र ही भंग हो गया। दिनों-दिन आम आदमी की हालत खराब होती चली गई। सत्ता प्राप्त नेता जनता से लुभावने वादे करते रहे और गरीबी समाप्त करने के नारे लगाते रहे। परंतु कोई भी नारा सच्चा सिद्ध नहीं हो सका। परिणाम यह हुआ कि राजनेता भ्रष्ट आचरण द्वारा अपना और अपने परिवारजनों का घर भरने लगे। लाल बत्ती की बड़ी-बड़ी कारों में घूमना उनका शौक बन गया। जनता हैरान होकर इनको देखने लगी परंतु अब उनके पास मात्र निराशा और बेबसी के सिवा और कुछ नहीं था लेकिन लोकतंत्र की यह विडम्बना है कि हमारे राजनेता नए मुखड़े धारण करके लोगों के समक्ष उपस्थित हो जाते हैं। करोड़ों का घोटाला करने के बाद भी बेदाग बच जाते हैं। जो व्यक्ति एक बार संसद में पहुँच जाता है, पाँच वर्षों में वह अपनी आय को सौ गुना बढ़ा लेता है। यह सब देखकर जनता निराश और परेशान हो उठती है, लेकिन वह बेबस और असहाय है। कोई भी उसकी व्यथा को नहीं समझता। कविवर रघुवीर सहाय ने इस राजनीतिक परिवेश से निराश होकर एक स्थल पर लिखा भी है—

बीस बरस बीत गए,
लालसा मनुष्य की तिल-तिलकर मिट गई
अब नहीं हो सकता कोई लेखक महान्
पहले तो ब्राह्मण होंगे, फिर ठाकुर होंगे।

3. भ्रष्ट राजनीति के कारण लोकतांत्रिक संकट के संकेत—कविवर रघुवीर सहाय का विचार है कि वर्तमान भ्रष्ट राजनीति के कारण हमारा लोकतंत्र संकट में है। कारण यह है कि भ्रष्टाचार और बढ़ती हुई महंगाई के कारण लोगों का न तो राजनीति में विश्वास रहा है और न ही लोकतंत्र पर। राजनेता राजनीति को एक व्यवसाय के रूप में अपना रहे हैं और परिवारवाद को बल प्रदान कर रहे हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि बड़े-बड़े प्रशासनिक अधिकारी भी इन राजनेताओं से डरने लगे हैं। वर्तमान

राजनीतिक व्यवस्था में बड़े से बड़ा अधिकारी भी भ्रष्टाचार से नहीं बच पाता। वह अपनी उन्नति प्राप्त करने के लिए राजनेताओं के इशारों पर नाचता है। लगता है कि जनता के प्रति उसका कोई दायित्व नहीं है। अब तो राजनीति में दबंग और बाहुबली भी प्रवेश कर चुके हैं जिससे उनके क्षेत्र के लोग डरते हैं। क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियाँ पनपने लगी है। वह दिन दूर नहीं जब देश का संघीय ढाँचा चरमराने लगेगा। दूसरा, वर्तमान भ्रष्ट राजनीति देश में अव्यवस्था को जन्म दे रही है। हमारे भ्रष्ट राजनेता लोक सेवक न रहकर तानाशाह बन चुके हैं। फलस्वरूप वे प्रजा की आवाज को सुनते तक नहीं। यदि कोई उनका विरोध करता है तो उसकी आवाज को दबा दिया जाता है। फलस्वरूप हिंसा का वातावरण उत्पन्न होने लगा है। लोकतंत्र के नाम पर लोगों को मूर्ख बनाया जा रहा है। वर्तमान भ्रष्ट राजनेताओं, प्रशासनिक अधिकारियों तथा पूंजीपतियों ने लोकतंत्र को राजतंत्र में परिवर्तित कर दिया है। एक स्थल पर कवि अपनी आवाज को बुलंद करता हुआ कहता भी है–

तब जो लोग सचमुच जानते हैं कि यह व्यवस्था बिगड़ रही है
वे उन लोगों के शोर में छिप जाते हैं
जो इस व्यवस्था को और अधिक बिगाड़ते रहना चाहते हैं।

4. राजनीतिक हिंसा का वर्णन–एक पत्रकार के रूप में कविवर रघुवीर सहाय ने यह अनुभव किया कि हमारी भ्रष्ट राजनीति और राजनेता हिंसा को बढ़ावा दे रहे हैं। प्रत्येक क्षेत्र में राजनेताओं ने अपने गुण्डे और बाहुबली पाल रखे हैं। जब भी कोई व्यक्ति अथवा सामाजिक वर्ग उनका विरोध करता है तो हिंसात्मक गतिविधियों द्वारा उनके विरोध को दबा दिया जाता है। निश्चय से जनसंख्या की वृद्धि हमारे देश की सभी समस्याओं की जननी कही जा सकती है परंतु भ्रष्ट राजनीति भी देश के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। जब तक भ्रष्ट राजनीति और राजनेताओं पर लगाम नहीं कसी जाती, तब तक न तो देश से भ्रष्टाचार दूर होगा, न ही महंगाई और न ही गरीबी, बल्कि ये समस्याएं निरंतर बढ़ती रहेंगी। **'रामदास'** रघुवीर सहाय की एक बहुचर्चित कविता है जो वर्तमान समाज में व्याप्त बर्बरता का कच्चा चिट्ठा प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत कविता में 'राम' शब्द सामाजिक मान्यताओं का पालन करने वाले आदमी का प्रतीक है और **'दास'** शब्द उसकी निरीहता और विनम्रता की ओर संकेत करता है। हमारे राजनेता ऐसे व्यक्ति का अस्तित्व ही मिटा देते हैं, जो उनका विरोध करते हैं। हिंसा का शिकार बने रामदास जैसे व्यक्ति का कोई भी साथ नहीं देता। रामदास को स्पष्ट बता दिया जाता है कि किस दिन, किस स्थान पर और किस समय उसकी हत्या की जाएगी। सभी लोगों को भी पता होता है कि आज रामदास की हत्या होने जा रही है। वह बेचारा निराश और व्यथित होकर धीरे-धीरे आगे बढ़ता है, कोई उसका साथ नहीं देता। आसपास के लोग दर्शक बने चुपचाप खड़े रहते हैं क्योंकि उन सबको पता होता है कि आज रामदास की हत्या होगी। कवि लिखता भी है–

खड़ा हुआ वह बीच सड़क पर
दोनों हाथ पेट पर रखकर
सधे कदम रख करके आए
लोग सिमट कर आँख गड़ाए
लगे देखने उसको जिसकी तय थी हत्या होगी।

यही नहीं, चुनाव के दिनों में न जाने कितने मतदाता हिंसा के शिकार हो जाते हैं। सरकार की ओर से एक ही घोषणा की जाती है कि कानून अपना काम करेगा परंतु कानून तो उन्हीं का बनाया हुआ है। कानून सत्ता प्राप्त पार्टी का दास होता है क्योंकि कानून लागू करने वाले उनके इशारों पर ही काम करते हैं। यही कारण है कि रामदास की दिन-दहाड़े हत्या कर दी जाती है। लोग उस हत्या को देखकर मात्र चर्चाएँ करते रह जाते हैं। हत्याओं की यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है जिससे समाज पर दबंगों का राज्य छा जाता है।

5. दूषित राजनीति से उत्पन्न समस्याओं का वर्णन–रघुवीर सहाय ने राजनीति से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं पर भी प्रकाश डाला है। उनका विचार है कि राजनीति के कारण देश में भ्रष्टाचार, महँगाई, गरीबी, अनपढ़ता, असुरक्षा और भाषायी समस्या दिनों-दिन गंभीर होती जा रही है। हमारे राजनेता किसी भी समस्या का हल करना ही नहीं चाहते। वे राजनीतिक स्वार्थों के शिकार बने हुए हैं। उनके पास वह सोच और चिंतन नहीं है जिससे देश की समस्याओं का कोई हल निकाला जाए। प्रत्येक राजनीतिक पार्टी चुनाव से पहले अपना मेनिफेस्टो तैयार करती है जिसमें जनता से सम्बंधित समस्याओं का विवरण दिया जाता है। साथ ही वे वादे किए जाते हैं कि आने वाले पाँच वर्षों में वे वादे पूरे नहीं किए जाते। फिर अगले चुनाव में नया मेनिफेस्टो तैयार कर लिया जाता है।

हमारे संविधान में यह घोषणा की गई थी कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है और शीघ्र ही यह सारे देश में राष्ट्रभाषा के रूप में काम करने लगेगी, परंतु राजनीतिक स्वार्थों के कारण आज तक हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई। कवि का कथन है कि हिंदी एक विधुर की दूसरी पत्नी बन चुकी है। एक स्थल पर कवि लिखता है–

"हमारी हिंदी एक दुहाजू की नयी बीवी है
बहुत बोलने वाली, बहुत खाने वाली, बहुत सोने वाली
गहने गढ़ाते जाओ
सर पर चढ़ाते जाओ
वह मुटाती जाए
पसीने से गन्धाती जाए
घर का माल मैके पहुँचाती जाए।"

6. अंतरराष्ट्रीय राजनीति का विवेचन–रघुवीर सहाय की कविताओं में केवल देश की राजनीति का ही वर्णन नहीं किया गया, बल्कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति का भी उल्लेख किया गया है। **'पैदल आदमी'** तथा **'बड़े देशों की राजनीति'** उनकी उल्लेखनीय कविताएँ हैं जिनमें अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिप्रेक्ष्य देखा जा सकता है। **'पैदल आदमी'** कविता में कवि ने भारत-पाक की परस्पर राजनीति पर प्रकाश डाला है। इसी प्रकार 'बड़े देशों की राजनीति' में कवि ने राष्ट्रीय गौरव तथा अंतरराष्ट्रीय राजनीति को महत्त्व प्रदान किया है। आज सभी देश अपने स्वार्थों की ही चिंता करते हैं। देश के लोगों की उन्हें कोई चिंता नहीं है। अपने देश के हालात को देखकर वे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तनाव को घटाते-बढ़ाते रहते हैं। संभवतः रघुवीर सहाय प्रथम कवि हैं जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय राजनीति को अपने काव्य में प्रथम स्थान दिया है। **'पैदल आदमी'** नामक कविता में कवि कहता भी है–

इतने में दोनों प्रधानमंत्री बोले
हम दोनों में इस बरस दोस्ती हो ले
यह कहकर दोनों ने दरवाजे खोले
पर राष्ट्र मंत्रियों ने दो नियम बताये
दो पारपात्र उसको जो उड़कर आए
दो पारपात्र उसको जो उड़कर जाए

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि रघुवीर सहाय ने अपनी काव्य रचनाओं में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का यथार्थ वर्णन किया है। उदाहरण के रूप में 'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य में मंत्री मुसद्दी लाल लोकतंत्र के भ्रष्टाचार का प्रतीक है। कुछ और भी ऐसी कविताएँ हैं जिनमें राजनीति की ओर संकेत किया गया है। राजनीतिक चेतना की प्रधानता के कारण ही डॉ. बच्चन सिंह ने रघुवीर सहाय को 'पोलिटिकल कवि' कहा है।

◆◆◆

3. रघुवीर सहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ

3. रघुवीर सहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ की विवेचना कीजिए। **(Most Imp.)**

अथवा

स्पष्ट करें कि रघुवीर सहाय के काव्य में सामाजिक यथार्थ का खुला चित्रण हुआ है।

उत्तर–रघुवीर सहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ–रघुवीर सहाय समकालीन हिन्दी कविता के महत्त्वपूर्ण कवियों में अपना स्थान रखता है। रघुवीर सहाय ने तत्कालीन समाज को साम्यवादी विचारधारा के दृष्टिकोण से नहीं देखा, बल्कि विभिन्न पत्रों का संपादन करते समय उनकी सामाजिक समझ विकसित होने लगी। फलस्वरूप वे जन-पक्षधर के कवि बन गए। डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव ने उचित ही लिखा है–**"इनकी कविताएँ वर्तमान सामाजिक ढाँचे के अवरोधों, अन्तर्विरोधों तथा विसंगतियों का सामना करते हुए लिखी गई हैं।"** यदि सामाजिक शब्दार्थ की व्याख्या की जाए तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि समाज की सच्चाई

को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करना। प्रत्येक सजग कलाकार समकालीन समाज तथा उसकी समस्याओं से अवश्य प्रभावित होता है। सामाजिक पर्यावरण में जो बात उसे कचोटती है, उसके बारे में वह अपने स्पष्ट विचार प्रकट करता है। रघुवीर सहाय भी एक सजग साहित्यकार थे। समाचार-पत्रों का संपादन करते समय उनका संपर्क सभी प्रकार के लोगों से हुआ। वे न केवल बहुपठित थे, बल्कि बहुश्रुत भी थे। अतः समाज की वास्तविकता उनकी दृष्टि से बच नहीं पाई। वे समाज में जो कुछ घटित होते देखते हैं, उसे अपनी कविताओं द्वारा प्रस्तुत कर देते हैं। कवि ने इस वास्तविकता को अनुभव किया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न होने लगीं। उनका काव्य के द्वारा वर्णन करना कवि ने अपना दायित्व समझा। इस संदर्भ में **श्रीकृष्ण दत्त पालीवाल** ने लिखा भी है– **"दरअसल सामाजिक प्रश्नाकुलताओं, विसंगतियों विद्रूपताओं और विडंबनाओं ने ही रघुवीर सहाय को कवि बनाकर दम लिया, अन्यथा कविता करने की जरूरत क्या थी? वे खतरनाक ढंग से गहराई में जाकर सोचने-समझने वाले व्यक्ति और रचनाकार हैं और यही उनके काव्य का सम्पूर्ण चरित्र बना है। वैचारिक स्तर पर वे राममनोहर लोहिया, नरेन्द्र देव, जयप्रकाश नारायण से दिशा दृष्टि करते हैं। समाजवादी विचार आंदोलन के तो वे जीवनभर योद्धा भी रहे। कवि योद्धा को मार्क्सवाद से परहेज नहीं रहा लेकिन वे ढिंढोलची बनकर अपना भी न सके।"** श्री रघुवीर सहाय के सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए निम्नलिखित बिंदुओं पर चिंतन करना आवश्यक है–

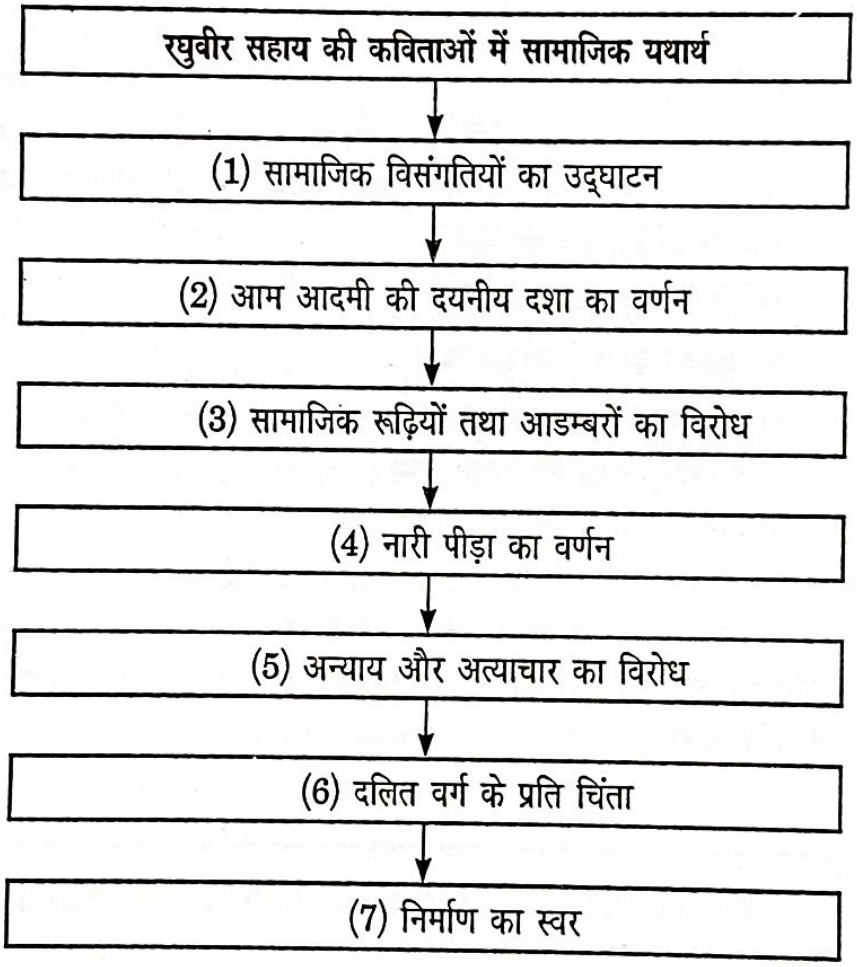

1. सामाजिक विसंगतियों का उद्‌घाटन–एक यथार्थवादी कवि होने के कारण रघुवीर सहाय ने अपनी कविताओं में सामाजिक जीवन में व्याप्त असंख्य विसंगतियों पर प्रहार किया। कवि ने अनुभव किया कि ये विसंगतियाँ जहाँ एक ओर व्यक्ति की स्वाधीनता का हरण कर रही हैं वहाँ दूसरी ओर मानवीयता के ह्रास के लिए भी उत्तरदायी हैं। आम आदमी पर अनेक प्रकार की पाबंदियाँ लगा दी गईं। समाज इस बात की परवाह नहीं करता कि आम आदमी की आत्मा छटपटा रही है या नहीं। रघुवीर सहाय की कविता के सामाजिक आयाम बहुत ही व्यापक हैं। इस संदर्भ में डॉ. बच्चन ने उचित ही लिखा है–**"आधुनिकता के नाम पर उनमें निर्वासन, अलगाव, अकेलापन, पुरानी पीढ़ी के प्रति आक्रोश नहीं मिलेगा। उसके स्थान पर मिलेंगी अनाहत जिजीविषा, मध्यवर्गीय जीवन का दबाव और लोकतांत्रिक जीवन की विडंबनाएँ।"** कवि आम आदमी और राजनीति के अंतः सम्बंधों पर विश्लेषण करता है तो साथ ही ईश्वर और ज्योतिष के विषय में अपनी आसक्ति भी व्यक्त करता है।

'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य संग्रह में कवि लिखता भी है–

लोगो, मेरे देश के लोगो और नेताओ
मैं सिर्फ एक कवि हूँ
मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता
न उसके साथ खाने के लिए गम
न मैं मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा सम्भ्रम

यथार्थवादी कवि वही हो सकता है जो बुर्जुआ लोकतांत्रिक ढाँचे के भीतर पूँजीवादी नेतृत्व, विसंगतियों को खत्म करने के लिए मन में महसूस करके अपने भावों को व्यक्त करता है, परंतु वह यह भी देखता है कि भ्रष्ट नेतृत्व को जनता के शोषण की बात कहने पर कवि का हित सिद्ध नहीं होता। विडंम्बना तो यह है कि जब न्यायाधीश पद पर था तब न्याय की निष्पक्षता को लेकर उसको कोई चिंता नहीं थी, न ही उसके पास कोई आह्वान था। परंतु जब वह पदमुक्त हो जाता है तब वह लोगों को आह्वान करते हुए कहता है कि अब समय आ गया है कि हमें न्याय के लिए संघर्ष करना होगा। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

कुछ होगा कुछ होगा अगर मैं बोलूँगा।
न टूटे न टूटे तिलस्म सत्ता का मेरे अंदर एक कायर टूटेगा टूट
मेरे मन टूट एक बार सही तरह
अच्छी तरह टूट मत झूठ-मूठ अब मत रूठ
मत डूब सिर्फ टूट जैसे कि परसों के बाद।

2. आम आदमी की दयनीय दशा का वर्णन–रघुवीर सहाय ने अपनी अधिकांश कविताओं में आम आदमी और उससे जुड़ी विभिन्न समस्याओं का वर्णन किया है। उन्होंने आम आदमी की गरीबी, अशिक्षा, बढ़ती हुई महँगाई तथा असुरक्षा की भावना पर करारे व्यंग्य किए हैं। कवि महसूस करता है कि आज आम आदमी बड़ा ही मायूस और लाचार हो चुका है। सत्ता प्राप्त नेता आम आदमी के हितों के बारे में कभी नहीं सोचते। वे उसे केवल अपना वोट मानते हैं। चुनाव से पूर्व तरह-तरह के वादे करते हैं लेकिन चुनाव समाप्त होते ही फिर अपने स्वार्थों को पूरा करने में लग जाते हैं। आम आदमी की स्थिति बद से बदत्तर होती जा रही है। चारों ओर जो असुरक्षा का वातावरण बना हुआ है, उससे लोग घबराए हुए हैं। 'रामदास' नामक कविता में कवि ने आम आदमी के साथ हो रहे अत्याचारों का यथार्थ वर्णन किया है। आम आदमी हमेशा कानून और सामाजिक मान्यताओं का पालन करता है, लेकिन वह विनम्र और निरीह भी है। सत्ता प्राप्त नेताओं के गुण्डे हमेशा उन पर अत्याचार करते रहते हैं। रामदास को बता दिया गया था कि उसकी हत्या होने जा रही है परंतु किसी ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया। एक उदाहरण देखिए–

निकल गली से तब हत्यारा
आया उसने नाम पुकारा
हाथ तौलकर चाकू मारा
छूटा लोहू का फव्वारा
कहा नहीं था उसने आखिर उसकी हत्या होगी।

3. सामाजिक रूढ़ियों तथा आडम्बरों का विरोध–रघुवीर सहाय अपने युग बोध से जुड़े हुए कवि थे। उन्होंने अपनी काव्य रचनाओं में समाज में व्याप्त रूढ़ियों, आडम्बरों तथा जड़ परंपराओं का डटकर विरोध किया। यही कारण है कि उनको सामाजिक यथार्थ का कवि भी कहा जाता है। वे एक नई विचारधारा रखने वाले कवि थे। उन्होंने समाचार पत्रों द्वारा भी सामाजिक रूढ़ियों और झूठे बंधनों का न केवल विरोध किया, बल्कि उन्हें समाप्त करने की वकालत भी की। वे इस तथ्य को भली प्रकार से जानते थे कि जब तक समाज रूढ़ियों के बंधनों से मुक्त नहीं होता तब तक उसका सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। 'तोड़ो' नामक कविता रघुवीर सहाय की एक उल्लेखनीय कविता है जिसमें वे प्रतीकात्मक शब्दावली द्वारा रूढ़ियों तथा जड़ परंपराओं के बंधनों को तोड़ने का आह्वान करते हैं–

'तोड़ो तोड़ो तोड़ो
ये पत्थर ये चट्टानें
ये झूठे बंधन टूटे
तो धरती को हम जाने

सुनते हैं मिट्टी में रस है जिससे उगती दूब है
अपने मन के मैदानों पर व्यापी कैसी ऊब है
आधे-आधे गाने।"

4. नारी पीड़ा का वर्णन—नई कविता के दौर में रघुवीर सहाय वर्तमान समाज में नारी की नियति और उसकी गुलाम स्थिति को लेकर काफी क्षुब्ध दिखाई देते थे लेकिन 60 के दौर में वे यह अधिक चिंता करने लगे कि नारी अपनी इस गुलाम स्थिति को कैसे पहचान सकती है? उनका विचार था कि जब तक नारी स्वयं अपने अधिकारों के प्रति सचेत नहीं हो जाती तब तक नारी का शोषण होता रहेगा। 'फूल और शूल', 'शनीचर' जैसी कविताओं में कवि ने व्यंग्यात्मक शब्दावली द्वारा नारी जागरण का समर्थन किया है। कवि इस तथ्य से परिचित था कि देश की आबादी का आधा हिस्सा नारी जाति है, उसे आधी आबादी भी कहा जाता है परंतु समाज में चाहे शोषक वर्ग हों या शोषित वर्ग, सभी नारियों का शोषण करते हैं। कवि का बार-बार ध्यान नारी की पीड़ा की ओर गया और सामाजिक यथार्थ के कवि होने के कारण उन्होंने अपनी अनेक कविताओं में नारी की पीड़ा को व्यक्त किया है। 'बड़ी हो रही लड़की' नामक कविता में कवि ने यह स्पष्ट किया है कि विवाह के बाद किस प्रकार एक नारी को कष्टों का सामना करना पड़ता है। अपनी पीड़ा को वह स्वयं जानती है, दूसरे नहीं जान सकते। कवि कहता भी है—

वह बड़ी होगी
डरी और दुबली रहेगी
और मैं न होऊँगा
वे किताबें वे उम्मीदें न होंगी
जो उसके बचपन में थीं
कविता न होगी साहस न होगा
एक और ही युग होगा जिसमें ताकत ही ताकत होगी
और चीख न होगी

5. अन्याय और अत्याचार का विरोध—देश की विशाल जनता पर मुट्ठी भर लोगों द्वारा किया जाने वाला अन्याय और अत्याचार रघुवीर सहाय की कविताओं का बार-बार विषय बना है। कवि इस अन्याय के विभिन्न प्रकारों को विस्तारपूर्वक अपनी कविता में सामने लाते हैं। आज आम जनता के बारे में जो निर्णय लिए जाते हैं उसमें जनता की कोई भागीदारी नहीं होती। सरकार केवल शोषक वर्ग के हितों की रक्षा करती है क्योंकि शोषक वर्ग से प्राप्त धन के द्वारा वह चुनाव जीतकर सरकार बनाती है। फलस्वरूप अत्याचार झेलते हुए आम जनता बार-बार आत्महत्या की स्थितियाँ झेलने लगती है। हर वर्ष समाचारों की सुर्खियों में लिखा रहता है कि अमुक राज्य में इतने किसानों ने आत्म-हत्या कर ली है। विडम्बना यह देखिए कि जो किसान देश को अन्न और धन देता है उसके हितों की चिंता करने वाला कोई नहीं है। मात्र वादे किए जाते हैं, योजनाएँ बनाई जाती हैं लेकिन उनको क्रियान्वित नहीं किया जाता। इस संदर्भ में सुरेश शर्मा ने लिखा भी है— **"लेकिन इस सफरिंग के साथ ही संग्रह की इन कविताओं में आत्महत्या की इन स्थितियों के विरोध में खड़े होने की एक निरंतर छटपटाहट भी मिलती है। यही वह बिंदु है जहां रघुवीर सहाय का यथार्थ चित्रण एक महत्त्वपूर्ण सर्जनात्मक आयाम से जुड़ जाता है। 'आत्महत्या के विरुद्ध' कविता एक साथ इन प्रवृत्तियों का अन्यतम उदाहरण है। संग्रह की अन्य कविताओं का कथ्य कई बार इस कविता में संपूर्ण होता हुआ दिखता है। विसंगतियों से भरे परिवेश के यथार्थ की विडंबनाओं के बीच एक उद्वेलन में यह कविता लिखी गई है।"** 'पानी-पानी बच्चा-बच्चा' नामक कविता में कवि ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि आर्थिक स्वतंत्रता के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता का कोई महत्त्व नहीं है। प्रस्तुत कविता में पानी शब्द धन का प्रतीक है और बच्चा शोषित वर्ग का प्रतीक है। एक स्थल पर कवि कहता भी है—

बरसों पानी को तरसाया
जीवन से लाचार किया
बरसों जनता की गंगा पर
तुमने अत्याचार किया
हमको अक्षर नहीं दिया है
हमको पानी नहीं दिया
पानी नहीं दिया तो समझो
हमको बानी नहीं दिया

एक स्थल पर कवि स्वयं लिखता भी है– **"मैं मानता हूँ कि अगर अपने देश के संदर्भ में देखें तो हमारे यहां जो शक्ति का ढाँचा बना हुआ है..... ऊपर से नीचे तक इन सब को यानी जो पूरी व्यवस्था है, इस सबको हम बिल्कुल बेकार और नाकामयाब मानते हैं – यानी एक उद्देश्य के लिए नाकामयाब। उद्देश्य यही है– समता और मनुष्य और मनुष्य के बीच की गैर-बराबरी को मिटाने के लिए यह व्यवस्था बिल्कुल बेकार है।"**

6. दलित वर्ग के प्रति चिंता–समकालीन कवियों में रघुवीर सहाय ने अपनी कुछ कविताओं के द्वारा समाज के दलित वर्ग के प्रति चिंता व्यक्त की है और साथ ही सहानुभूति भी। कवि के मन में आत्म-संघर्ष की विडंबना दोहरी है। एक ओर तो वह भूखे-नंगों की चिंता करता है और दूसरी ओर दलित समाज की। कवि महसूस करता है कि वर्ग स्थिति के कारण दलित जन सहसा उससे जुड़ पाने में थोड़ी देर के लिए भय महसूस करता है और अस्वस्थ होना चाहता है परंतु दूसरी ओर ऐसे भी दलित लोग हैं जो निरंतर अमानवीय संदर्भों के बीच में इतने कुंद हो चुके हैं कि जब कवि उनसे संवाद स्थापित करना चाहता है तो उसे सफलता नहीं मिलती। जब कभी कवि संवाद स्थापित करने में सफल हो भी जाता है तो वह दलित जन के विश्वास को जीत नहीं पाता। 'आत्महत्या के विरुद्ध' में कवि लिखता भी है–

कल मैंने देखा लाल चेहरों में वह एक चेहरा
कुढ़ता हुआ और उलझा हुआ वह उदास कितना बोदा
वही था नाटक का मुख्य पात्र
पर उसकी ठस पीठ पर मैं हाथ न रख सका
वह बहुत चिकनी थी

7. निर्माण का स्वर–भले ही रघुवीर सहाय नें सामाजिक यथार्थ के अंतर्गत आम आदमी की पीड़ा, घुटन, निराशा आदि भावों का चित्रण किया है, लेकिन अपनी कुछ कविताओं में वह शोषितों को इस स्थिति से उबारना भी चाहता है। कवि जानता है कि आम आदमी जिंदा रहने के लिए ही संघर्ष कर रहा है। यदि संघर्ष करते हुए वह चीखता और चिल्लाता है तो यह किसी भी दृष्टि से अनुचित नहीं कहा जा सकता। आम आदमी के समान कवि भी निराशा और घुटन से संत्रस्त है लेकिन वह इस छटपटाहट और घुटन के बीच निर्माण की प्रक्रिया की ओर भी संकेत करता है। एक स्थल पर कवि कहता भी है–

"देखो वृक्ष को देखो वह कुछ कर रहा है
किताबी होगा कवि जो कहेगा कि हाय पत्ता झर रहा है
रूखे मुँह से रचता है वृक्ष जब वह सूखे पत्ते गिराता है
ऐसे कि ठीक जगह जाकर गिरे धूप में छाँह में।"

इसी प्रकार कवि ने कुछ स्थलों पर आम आदमी के अकेलेपन की अनुभूति का भी वर्णन किया है। साथ ही वे आज के पर्यावरण के प्रति अपनी चिंता भी व्यक्त करते हैं। कवि का विचार है कि प्रदूषित पर्यावरण के कारण केवल मानव ही नहीं, बल्कि प्राणी जगत भी प्रभावित हो रहा है। इसीलिए 'अकाल' नामक कविता में कवि लिखता भी है–

"फूटकर चलते-फिरते छेद
भूमि की पर्त गयी है सूख
औरतें बाँधे हुए उरोज
पोटली के अंदर है भूख
आसमानी चट्टानी बोझ
ढो रही है पत्थर की पीठ।"

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि रघुवीर सहाय सामाजिक यथार्थ के ही कवि थे। उन्होंने अपनी अधिकांश कविताओं में सामाजिक विसंगतियों और विडंबनाओं पर करारे व्यंग्य किए हैं। एक सफल पत्रकार और संपादक होने के कारण उन्होंने सामाजिक समस्याओं को बड़ी गहराई से समझा। दिल्ली जैसे महानगर में रहते हुए कवि ने स्वयं सामाजिक संघर्ष का सामना किया।

◆◆◆

4. काव्य-वैशिष्ट्य

4. रघुवीर सहाय के काव्य-वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए। **(Imp.)**

अथवा

रघुवीर सहाय की काव्यगत विशेषताएँ बताइए।

उत्तर–रघुवीर सहाय का काव्य-वैशिष्ट्य–श्री रघुवीर सहाय पेशे से पत्रकार होते हुए भी समकालीन हिंदी कविता के एक सशक्त कवि माने जाते हैं। इन्होंने लघु की महत्ता को स्वीकार करते हुए घर-मोहल्ले के चरित्रों पर कविता लिखकर उन्हें हमारी चेतना का स्थायी नागरिक बनाया है। इन्होंने घटनाओं में निहित विडम्बना और त्रासदी को देखते हुए महज बड़े कहे जाने वाले विषयों या समस्याओं पर ही दृष्टि नहीं डाली, अपितु जिन्हें समाज में हाशिए पर रखा जाता है, ऐसे अनुभवों को भी अपनी रचनाओं का विषय बनाया है। यही कारण है कि हत्या, लूटपाट, आगजनी, राजनैतिक भ्रष्टाचार और छल-छदम इनकी कविता में उतरकर खोजी पत्रकारिता की सनसनीखेज रपटें नहीं रह जाते, बल्कि आत्मान्वेषण के माध्यम बन जाते हैं। इनके पास जातीय या वैयक्तिक स्मृतियाँ नहीं के बराबर हैं, इसलिए इनके दोनों पाँव वर्तमान में ही गड़े हैं। इनकी कविता मार्मिक उल्लास और व्यंग्य बुझी खुरदरी मुस्कानों से पटी पड़ी है। कविता को इन्होंने एक कहानीपन तथा नाटकीय वैभव प्रदान किया है। रघुवीर सहाय के विभिन्न काव्य संग्रहों क्रमशः–'सीढ़ियों पर धूप में', 'आत्महत्या के विरूद्ध', 'हँसो-हँसो जल्दी हँसो', 'लोग भूल गए हैं' में संकलित उनकी कविताओं के आधार पर उनका काव्य-वैशिष्ट्य निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत स्पष्ट किया जा सकता है–

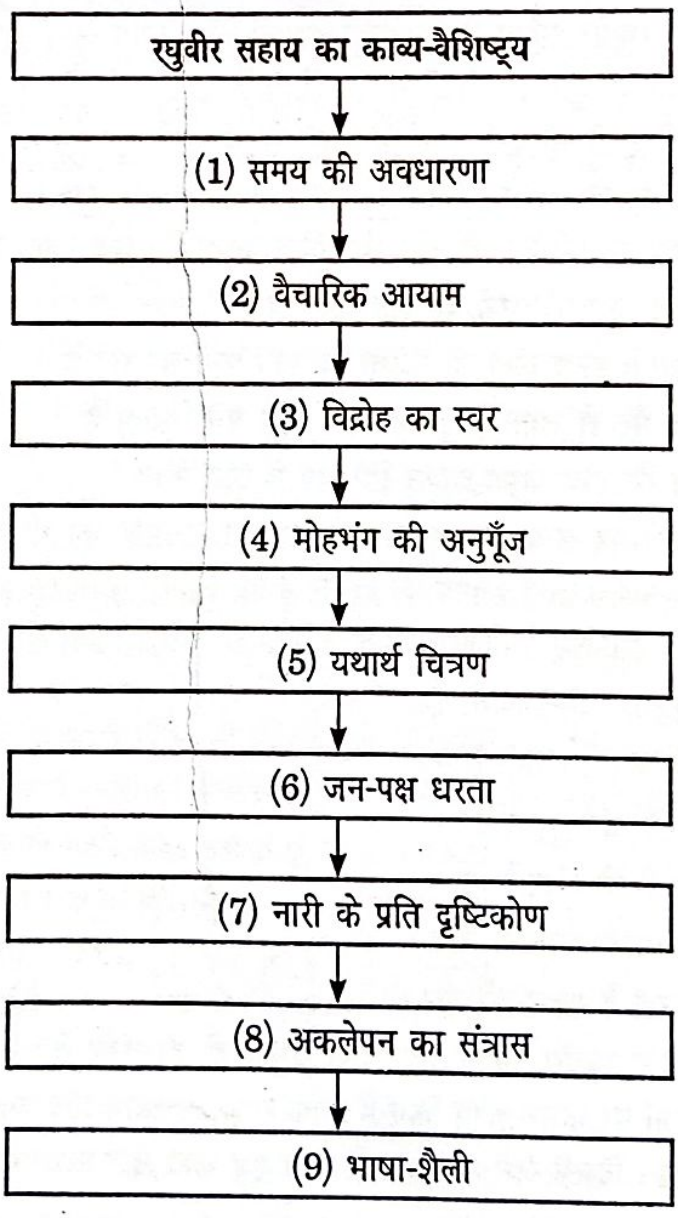

(1) समय की अवधारणा–समय के बारे में रघुवीर सहाय की एक अवधारणा उनके लेखकीय विकास के प्रारंभिक चरण में ही मिलती है। 'सीढ़ियों पर धूप में' में एक स्थान पर उन्होंने लिखा है–

रचना के लिए किसी न किसी रूप में वर्तमान से पलायन आवश्यक है।
कोई-कोई ही इस पलायन को सुरुचिपूर्वक निभा पाते हैं अधिकतर लोग
अतीत के गौरव में लौट जाने की भद्दी गलती कर बैठते हैं और यह
भूल जाते हैं कि वर्तमान से मुक्त होने का प्रयोजन कालातीत होना है, मृत
जीवन का भूत बनना नहीं।

समय के आर-पार देखने की यानी कालातीत होने की यह लेखकीय चाह रघुवीर सहाय के काव्य में भी व्यक्त होती है। इसका एक काव्यात्मक प्रयास उनकी 'घड़ी' शृंखला की तीसरी कविता में देखने को मिलता है :

"घड़ी नहीं कहती है 'डिग' जा अपने पथ से
डिग जाने पर घड़ी नहीं कहती है 'धिक'
और यह तो वह कभी नहीं कहती है, साथी 'ठीक' है
वह कहती है टिक-टिक-टिक-टिक-टिक-टिक-टिक"

यहाँ जो 'टिकने' की टेक है, वह सिर्फ ध्वनियों का खेल नहीं है, बल्कि वह मेटाफिजिकल अहसास है जिसके बगैर बड़ी कविता, बल्कि कोई भी रचनात्मक कर्म संभव नहीं है।

(2) वैचारिक आयाम–रघुवीर सहाय की कविता विभिन्न विचारों को प्रकट करती है। उनके वैचारिक आयाम आम आदमी से लेकर राष्ट्र तक दृढ़ता से अपना पक्ष प्रस्तुत करते हैं। रघुवीर सहाय ने अपने समय और समाज को काफी गहराई में उतर कर देखा था। उन्होंने लिखा है, 'समाज की समझ का मतलब है, समाज में मनुष्य और मनुष्य के बीच जितने गैर इंसानी रिश्ते हैं उनकी समझ–कहाँ से वे पैदा होते हैं, इसकी समझ और उनकी जड़ों तक पहुंच इतिहास की समझ।' वे यह भी मानते थे कि 'अगर इंसान और इंसान के बीच एक गैर बराबरी का रिश्ता है और उस रिश्ते को कोई आदमी मानता है कि ऐसे ही रहना चाहिए, तो वह कोई रचना नहीं कर सकता। उन्होंने आज़ादी के बाद के भारतीय समाज में नाबराबरी के सामंती मूल्य को बहुत ही सूक्ष्मता से पहचाना था, क्योंकि नाबराबरी की चेतना बने रहने से लोकतंत्र या जनवाद विकसित नहीं हो सकता, बल्कि अधिनायकवाद के पनपने के लिए ज़मीन तैयार होती है। 'आत्महत्या के विरुद्ध' संकलन में एक कविता, 'अधिनायक' इसी ओर संकेत करती है :

"राष्ट्रगीत में भला कौन वह
भारत भाग्य विधाता है
फटा सुथन्ना पहले जिसका
गुन हरचरना गाता है
कौन कौन है वह जनगण मन
अधिनायक वह महाबली
डरा हुआ मन बेमन जिसका
बाजा रोज़ बजाता है।"

(3) विद्रोह का स्वर–रघुवीर सहाय का रचनाकार पूंजीवादी जनतंत्र की आड़ में किए जा रहे शोषण, दमन और अन्याय के खिलाफ विद्रोह करता है। उस दौर के ज्यादातर बुद्धिजीवी एक तरह के संशयवाद (सिनिसिज्म) के शिकार हो गए थे, जो साठोत्तरी कविता में हमें दिखाई देता है। उस समय कवियों को लग रहा था कि **'जब सब कुछ ऊल ही जलूल है/तो सोचना फिजूल है'** (कैलाश वाजपेयी)। इसीलिए उस दौर में व्यवस्था के प्रति कवियों का आलोचनात्मक रुख तेज़ हो गया था। रघुवीर सहाय का रचनाकार यह महसूस कर रहा था कि पूंजीवादी जनतंत्र में भी मनुष्य और मनुष्य के बीच असमानता और सामाजिक अन्याय का बोलबाला है, इस व्यवस्था में भी गरीब को रोटी नसीब नहीं हो रही। उक्त संकलन की पहली ही कविता, 'नेता क्षमा करें', में उन्होंने लिखा है :

"मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता न उसके साथ खाने के लिए गम
न मिटा सकता हूँ ईश्वर के विषय में तुम्हारा भ्रम

लोगों में श्रेष्ठ लोगों मुझे माफ करो
मैं तुम्हारे साथ आ नहीं सकता।"

(4) मोहभंग की अनुगूँज–साठोत्तरी दौर के हिंदी साहित्य में मोहभंग की जो अनुगूंज सुनाई देती है, उस अनुगूंज में रघुवीर सहाय की आवाज़ भी शामिल थी। उनकी उस समय की कविताओं को देख कर किसी को यह लग सकता है कि वे लोकतंत्रविरोधी थे। मगर सच्चाई यह है कि वे लोकतंत्र के मूल्यों के भ्रष्टीकरण से आहत थे। वे शासकों के उन कारनामों से दुखी हो रहे थे, जिनसे अन्याय और बराबरी को ही बढ़ावा मिलता था। शोषक वर्गों की नुमाइंदगी करने वाला राजनेता किसी रचनाकार को भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं देना चाहते थे। राजसत्ता की यह प्रवृत्ति एमरजैंसी में एक सच्चाई बनकर सामने आ गई, जब कविता पर भी सेंसरशिप लागू हो गई थी। 'फिल्म के बाद चीख' कविता में रघुवीर सहाय ने शोषक वर्गों द्वारा साहित्य 'रेंजीमेटेशन' के बारे में चुटकी लेते हुए लिखा है :

"संसद एक मंदिर है जहाँ किसी को द्रोही कहा नहीं
जा सकता
दूधपिये मुंहपोंछे आ बैठें जीवनदानी गोंद,
दानी सदस्य तोंद सम्मुख धर
बोले कविता में देश प्रेम लाना हरियाना प्रेम लाना
आइसक्रीम लाना है"

(5) यथार्थ चित्रण–साठोत्तरी बरसों में लिखी गई रघुवीर सहाय की बहुत-सी कविताएँ अपने समय के आर-पार जाती हुई आज के यथार्थ की रचनाएँ बन जाती हैं। उस समय भारतीय राजनीति में पूंजीवादी दलों में दलबदल की बीमारी इस तरह हावी नहीं हुई थी जैसी कि आज है। मगर रघुवीर सहाय के पास ऐसा 'विज़न' था, ऐसी दृष्टि थी जिससे वे यह समझते थे कि भारतीय आवाम पर राज बरकरार रखने के लिए पूंजीवादी-सामंती तत्व धन का प्रभाव फैला कर दलबदल की राजनीति को बढ़ावा देंगे और इस तरह खरीद फरोख्त द्वारा शोषण-सत्ता को कोई आंच नहीं आ पाएगी, जबकि दलबदल की यह राजनीति आकर्षक जनवादी नारों के तानेबाने और नए-नए वायदों के साथ देश पर हावी होगी। 'एक अधेड़ भारतीय आत्मा' में इस स्थिति को रघुवीर सहाय ने अत्यंत स्पष्टता के साथ व्यक्त किया है :

"गा कर सुनाता है
जनवादी वादों की घोषणा
महामंत्री
जनता के लिए नहीं
वह विरोधियों को प्रमाण दे रहा है
कि मैं दलबदल के लिए योग्य व्यक्ति हूँ"

(6) जन-पक्षधरता–रघुवीर सहाय मनुष्य और मनुष्य के बीच समानता और सामाजिक न्याय की लड़ाई के प्रति अपने को प्रतिश्रुत किए हुए थे, इसीलिए वे ऐसे हर अमानवीय और क्रूर हरकत के खिलाफ आवाज़ उठाते थे, जिससे समानता और भाईचारे के जनवादी मूल्य खंडित होते थे। अपने कविता संकलन 'कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ' के प्रारंभिक निवेदन में उन्होंने लिखा कि **'जिस तरह रचनात्मकता और आज़ादी एक ही मानवीय आकांक्षा के पर्याय हैं, उसी तरह समता की लड़ाई और कविता भी एक ही मानवीय उत्कर्ष के पर्याय हैं।'** उनकी कविता का यही वैचारिक आधार था, जिसने उन्हें समय के आर-पार देखता कवि या कालातीत रचनाकार बनाया है। अपनी इसी जनवादी आधारभूमि पर खड़े होने की वजह से वे तानाशाही के खिलाफ थे और इसी वजह से वे हिंदू सांप्रदायिक तत्वों को ठीक ही **'फासिस्ट'** की संज्ञा दे रहे थे और उनकी राष्ट्रविरोधी हरकतों का पर्दाफश कर रहे थे, क्योंकि ये दोनों ही विकृतियाँ जनवादी मूल्यों के विरुद्ध हैं। असमानता की जेहनियत सूक्ष्म तरीके से हमारे आचरण में परिलक्षित होती है, रघुवीर सहाय इस जेहनियत के आलोचक थे। 'कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ' की कविताओं में से कई कविताओं को उनके इसी विचारबिंदु से समझा जा सकता है। 'सच क्या है' कविता में वे लिखते हैं :

"इस झूठे करुणामय मन को धिक्कार है
वह दुख ही सच्चा है जो हमने झेला है"

(7) नारी के प्रति दृष्टिकोण–रघुवीर सहाय की कविता में नारी का एक खास तरह का स्थान है। वे नारी को भी समतावादी दृष्टिकोण से ही देखना पसंद करते थे। हिंदी के ज्यादातर रचनाकार नारी को 'अबला' समझ कर उसके प्रति दया का भाव प्रदर्शित करते रहे हैं। रघुवीर सहाय दया के प्रदर्शन को एक सामंती मूल्य मानते रहे, क्योंकि उस प्रदर्शन में कहीं न कहीं दया के पात्र को छोटा, हीन और असहाय समझने और खुद को समर्थ, बड़ा और सामंत शासक मानने की प्रवृत्ति जाने-अनजाने काम कर रही होती है। रघुवीर सहाय की कविताओं और कहानियों के ज्यादातर वाचक इसीलिए दया दिखाने के खिलाफ होते हैं। अपने एक लेख में उन्होंने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए लिखा है :

"हिंदी साहित्य में स्त्री के प्रति यह भावना बार-बार व्यक्त हुई है कि वह उपेक्षिता है, इसलिए दया की पात्रा है। आधुनिक कहे जाने वाले साहित्य में पुरुष से उसके शरीर संबंध को विशेष महत्व दिया गया है पर वहाँ भी उसके प्रति दया का भाव लेखक के मन से गया नहीं है...मानो आधुनिक जीवन के नर-नारी समता के विचार ने रचनाकार को छुआ ही न हो और वह पिछले ज़माने के सामंती मन से ही स्त्री को देख रहा है। "

रघुवीर सहाय इस मर्म को बहुत पहले समझ गए थे कि दया का भाव बराबरी के मूल्य पर चोट करता है, इसलिए उनकी एक कविता का वाचक अपनी प्रेमिका से भी दया के भाव की अपेक्षा नहीं करता :

"माधवी,
या और भी जो कुछ तुम्हारे नाम हों,
तुम एक ही दुख दे सकी थीं
फिर भला ये और सब किसने दिये हैं?
जो मुझे हैं और दुख, वे तुम्हें भी तो हैं
यही क्या नहीं काफी तर्क है कि मुझे दया का पात्र मत समझो"

(8) अकेलेपन का संत्रास–आधुनिक काल की कविताओं में मनुष्य की एक विशिष्ट समस्या अपने अहं के कारण भीड़ में भी स्वयं को अकेला अनुभव करना प्रमुखता से मुखरित हुई है। मनुष्य की इस विकट समस्या को रघुवीर सहाय जी ने अपनी अनेक कविताओं में उठाया है। 'मेरा एक जीवन है' कविता में लिखते हैं–

"पर मेरा एक और जीवन है
जिसमें मैं अकेला हूँ
जिस नगर के गलियारों, फुटपाथों, मैदानों में घूमा हूँ
हँसा-खेला हूँ,
इसके अनेक हैं नगर सेठ, म्युनिसिपल कमिश्नर, नेता और सैलानी, शतरंजबाज और आवारे
पर मैं इस हा हा हूती नगरी में अकेला हूँ।"

(9) भाषा-शैली–श्री रघुवीर सहाय जी की भाषा आम बोलचाल की सरल, सहज व धाराप्रवाह खड़ी बोली है। वस्तुतः इन्होंने सड़क, चौराहा, दफ्तर, अखबार, संसद, बस, रेल और बाजार की बेलौस भाषा में लिखा है। इनकी शब्दावली में तद्भव शब्दों की प्रचुरता के साथ तत्सम् व देशी-विदेशी शब्दों का भी समन्वय देखने को मिलता है। प्रसाद गुण के साथ ओज गुण इनके काव्य का अभिन्न अंग है। इनकी भाषा में व्यंजना शब्द-शक्ति की प्रधानता है। ये लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग करने में सिद्ध हस्त हैं। अलंकारों के प्रति विशेष आग्रह न होते हुए भी इनकी भाषा में–अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश, यमक, रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण आदि अलंकारों का प्रयोग हुआ है। इनकी काव्य भाषा में रस की जगह बौद्धिकता की प्रधानता है। छंदानुशासन के लिहाज से भी ये अनुपम हैं, परन्तु इन्होंने ज्यादातर बातचीत की सहज शैली में ही लिखा है। इसके अतिरिक्त इन्होंने अपने कथ्य के अनुरूप भावात्मक, प्रतीकात्मक, आत्मकथात्मक, वर्णनात्मक व चित्रात्मक शैलियों का भी प्रयोग किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त बातचीत की सहज शैली का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"हँसो, हँसो, जल्दी हँसो
इसके पहले कि वह चले जायें
उनसे हाथ मिलाते हुए नज़रें नीची किये
उनको याद दिलाते हुए हँसो
कि तुम कल भी हँसे थे।"

व्यंग्यात्मकता इनकी भाषा का सहज गुण है। दृश्य बिंब इनका प्रिय बिंब है, अतः इनकी भाषा चित्रात्मकता के गुण से भी ओत-प्रोत है।

◆◆◆